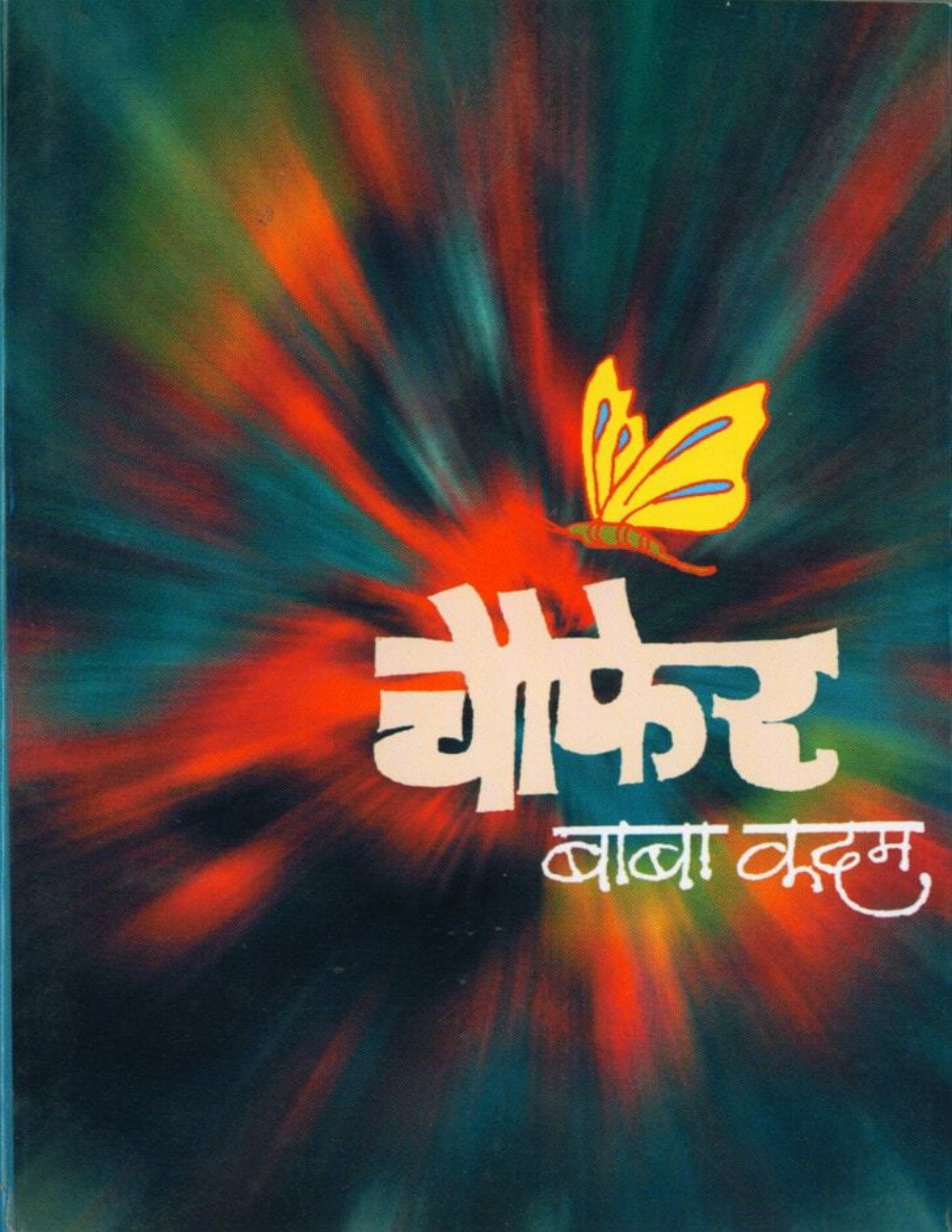
चौफेर
बाबा कदम

TABLE OF CONTENTS

चारो ओर
समर्पण
प्रस्तावना
अंतर्वस्तु
1. श्यामसुंदर कुलकर्णी
2. नींबू का तेल
3. फाइव स्टार पार्टी तात्या
४. डॉ. डी. के. गोसावी
५. डॉ. डेनिस ऊर्फ मनिंदरपालसिंग कोहली
6. शंकर दादा
7. सीताराम और अप्पा पवार
8. हेलमेट के भूत
9. हरिमामा जवंडल
10. प्रिया तेंदुलकर
11. "अर्देशित खुरोदी"
12. “विथावाहिनी”
13. "कैनरी शिकार"
१४. महादेव मोरे
15. भीमा मुंडे
१६. “भाभी यू आर ग्रेट”
17. ऐसा वकील, ऐसा न्यायाधीश
१८. के. वासुदेव
19. स्वतंत्रता सेनानी शिंत्रे
20. इंदु संगवाकर
21. बोचरी लक्ष्मी

22. मुराद्य परधी
23. पद्मबाई
24. अप्पा मोहिते
25. सुली की प्रतिक्रिया
26. रावसाहेब महाडकर
27. सिदराम
28. कल्लप्पा कोटगुंड
29. सगुण और नरबा
30. कप्तान संपतराव कालेकर
31. रामजय की माँ
३२. डी. एस. साहेब
33. यह मैं नहीं हूँ।
34. चुड़ैल
35. शंभूमामा, माल बेचने वाली!
36. “चाय”
37. लालासाहेब
39. न्यायिक मजिस्ट्रेट - ''सारंग''
40. आर. एच. पाटिल फौजदार
41. मुहम्मद की पत्नी ज़रीना
४२. दीदी
४३. भाई

चारो ओर

(चित्र)

बाबा कदम

दिलीपराज प्रकाशन प्रा. लि.®
२५१ क, शनिवार पेठ, पुणे -४११०३०

प्रकाशक
राजीव दत्तात्रेय बर्वे
प्रबंध निदेशक,
दिलीपराज पब्लिकेशन्स प्राइवेट लिमिटेड
२५१ क, शनिवार पेठ,

पुणे - 411 030.
वेबसाइट: www.diliprajprakashan.in
ईमेल: info@diliprajprakashan.in

© सौ. कुमुदिनी वीरसेन कदम
बालक मंदिर के पास "आनंद"
ताराबाई पार्क,
कोल्हापुर - 416007

नया संस्करण: 15 दिसंबर, 2011
ईबुक : जुलाई 2020

प्रकाशन क्रमांक : १४००

होम पेज: अनिल उपलेकर

गीता अवति यन्ना अर्पण
- बाबा कदम

प्रस्तावना

पिछले वर्ष, कोल्हापुर के दैनिक समाचार पत्र "लोकमत" में "व्यक्तिवेध" शीर्षक से मेरे लेखों की श्रृंखला शुरू हुई थी। लेकिन कोल्हापुर के बाहर के जिलों के पाठकों को "कोल्हापुर-लोकमत" नहीं मिल पा रहा था। इसलिए, मैंने सुझाव दिया कि वर्ष भर समय-समय पर प्रकाशित होने वाले मेरे लेखों को एक संग्रह के रूप में प्रकाशित किया जाए।

श्री राजीव बर्वे ने इस संग्रह को प्रकाशित करने का निर्णय लिया, इसलिए आज यह पुस्तक हमारे हाथों में आ रही है। इस लेख में वर्णित सभी पात्र वास्तविक हैं। कुछ अपरिहार्य कारणों से, कुछ पात्रों के नाम बदल दिए गए हैं।

- बाबा कदम

अंतर्वस्तु

चारो ओर
समर्पण
प्रस्तावना
1. श्यामसुंदर कुलकर्णी
2. नींबू का तेल
3. फाइव स्टार पार्टी तात्या
४. डॉ. डी. के. गोसावी
५. डॉ. डेनिस ऊर्फ मनिंदरपालसिंग कोहली
6. शंकर दादा
7. सीताराम और अप्पा पवार
8. हेलमेट के भूत
9. हरिमामा जवंडल
10. प्रिया तेंदुलकर
11. "अर्देशित खुरोदी"
12. “विथावाहिनी”
13. "कैनरी शिकार"
१४. महादेव मोरे
15. भीमा मुंडे
१६. “भाभी यू आर ग्रेट”

17. ऐसा वकील, ऐसा न्यायाधीश
१८. के. वासुदेव
19. स्वतंत्रता सेनानी शिंत्रे
20. इंदु संगवाकर
21. बोचरी लक्ष्मी
22. मुराद्य परधी
23. पद्मबाई
24. अप्पा मोहिते
25. सुली की प्रतिक्रिया
26. रावसाहेब महाडकर
27. सिदराम
28. कल्लप्पा कोटगुंड
29. सगुण और नरबा
30. कप्तान संपतराव कालेकर
31. रामजय की माँ
३२. डी. एस. साहेब
33. यह मैं नहीं हूँ।
34. चुड़ैल
35. शंभूमामा, माल बेचने वाली!
36. ‘‘चाय’’
37. लालासाहेब
39. न्यायिक मजिस्ट्रेट - ''सारंग''
40. आर. एच. पाटिल फौजदार
41. मुहम्मद की पत्नी ज़रीना
४२. दीदी
४३. भाई

1. श्यामसुंदर कुलकर्णी

हरिहर विद्यालय से मेरा नाम हटाकर विद्यालया हाई स्कूल में दाखिला लिया गया। मेरी माताजी को इस विद्यालया हाई स्कूल से बहुत लगाव था। क्योंकि कई साल पहले उन्होंने दादा तोपखाने की बेटियों के साथ इसी विद्यालय में पढ़ाई की थी। तोपखाने मास्टर ने विद्यालया हाई स्कूल का नेतृत्व छोड़ दिया और संस्था जी. वाई. दीक्षित के अधीन आ गई। दादा तोपखाने संस्था के संस्थापक थे। उन्होंने संस्था क्यों छोड़ी? मैं उस समय इतनी छोटी थी कि यह पता कर सकूँ कि दीक्षित को संस्था का नेतृत्व कैसे मिला।

मैंने पहले अंग्रेजी पढ़ी। उस समय, सातवीं कक्षा में अंग्रेजी पास करने का मतलब "मैट्रिकुलेशन" पास करना होता था। मैट्रिकुलेशन परीक्षा मुंबई विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित की जाती थी। मुझे अंग्रेजी और गणित बहुत पसंद थे! कक्षा में जो पढ़ाया जाता था, उस पर मैं कितना भी ध्यान देता, मुझे कुछ भी समझ नहीं आता था।
गणित के शिक्षक एक मजाकिया इंसान थे। उनकी आंखें गहरी थीं, आवाज पतली थी, सिर पर काली टोपी थी और उन्होंने साफ सफेद कमीज और पतलून पहनी हुई थी। इस मजाकिया इंसान को मजाक करने की आदत थी, लेकिन उस समय मुझे उनके मजाक समझ में नहीं आते थे। जब कक्षा के बच्चे उनकी बातों पर हंसते थे, तो मैं भी हंसने लगता था!
गोखले मास्टर अंग्रेजी पढ़ाते थे! रेडियो जैसी तेज़ आवाज़, अंग्रेज़ी शब्दों का स्पष्ट उच्चारण, थोड़ा गुस्सैल स्वभाव! उन्हें इस बात की परवाह नहीं थी कि कोई कक्षा में देर से आता है या नहीं। जब वे समय पर कक्षा में आते थे, तो हमेशा एक छोटी छड़ी लेकर आते थे। देर से आने वाले बच्चों से बिना कारण पूछे, गोखले मास्टर उन्हें अपनी हथेली में छड़ी दे देते थे। देर से आने वाले छात्रों को मारने के बाद, सर ऐसे पढ़ाना शुरू कर देते थे जैसे कुछ हुआ ही न हो। “एक समय की बात है, एक राजा था। वह बहुत बहादुर और दयालु था!” “वह कैसा था?” सर पूछते। कोई होशियार छात्र हाथ उठा देता।
"जी हाँ, बताओ? वह एक राजा था।" "गधे, वह एक राजा था, लेकिन उसका स्वभाव कैसा था? किसी ने जवाब नहीं दिया, महोदय, यह कहते हुए कि, "वह बहादुर और दयालु था!"
कदम ने मेरी ओर देखते हुए पूछा, "बहादुरी का क्या मतलब होता है?"
"दयालु!" बहादुर का मतलब दयालु होता है, है ना? बहादुर का मतलब बहादुर होता है, और दयालु का मतलब दयालु होता है!"
मैं बेंच पर बैठकर समझने का नाटक करता था। कक्षा में गोखले सर का पसंदीदा छात्र श्यामसुंदर कुलकर्णी था। उसका भाई मान्या भी हमारी कक्षा में पढ़ता था। ये दोनों कुलकर्णी भाई पढ़ाई में बहुत होशियार थे।
श्यामसुंदर की लिखावट इतनी सुंदर थी कि मानो छपी हुई लगती थी। मनोहर की लिखावट भी काफी अच्छी थी; लेकिन मान्या गणित में बहुत होशियार था! जब

शिक्षक ने बोर्ड पर गणित के प्रश्न लिखना शुरू किया, तो मान्या ने उनके पूरा करने से पहले ही उत्तर लिख दिया। पता नहीं मान्या ने गणित की किताब पूरी पढ़ डाली थी या नहीं! मान्या और श्यामसुंदर के स्वभाव में बहुत अंतर था। मान्या सबके साथ घुलमिल जाता था। उसे अपनी बुद्धिमत्ता पर ज़रा भी घमंड नहीं था। लेकिन श्यामसुंदर थोड़ा विनम्र था। वह स्वभाव से थोड़ा शरारती भी था।

कक्षा के शिक्षक गोखले मास्टर थे। उन्होंने श्यामसुंदर को कक्षा सचिव नियुक्त किया। इसके चलते श्यामसुंदर का व्यवहार अधिक विनम्र हो गया। हमारी कक्षा में शिगाओकर नाम का एक कपड़ा दुकानदार का बेटा था। शिवाजी की प्रतिमा के पास तैयब अली नाम का एक मुस्लिम धर्मगुरु था। सरलाश्कर, कनितकर जैसे सभी जाति-धर्म के बच्चे थे; लेकिन उस उम्र में मुझे यह पता नहीं था कि लोगों की कोई जाति होती है जो उनकी सामाजिक स्थिति निर्धारित करती है। तब ऐसा कुछ था ही नहीं। आज जब मैं सत्तर वर्ष से अधिक का हो चुका हूँ, तो मैं कभी किसी से उसकी जाति या धर्म नहीं पूछता। मुझे लगता है कि समस्त मानव जाति एक है। मैं पढ़ाई में थोड़ा पीछे रहता था क्योंकि मैं औसत दर्जे का था। श्यामसुंदर के सचिव बनने के बाद उसने कक्षा में दादागिरी शुरू कर दी। जब शिक्षक कक्षा में देर से आते थे, तो कक्षा के प्रभारी श्यामसुंदर जोर-जोर से बोलने वाले बच्चों के नाम लिख लेता था। वह उन नामों को कक्षा शिक्षकों, यानी गोखले मास्टर को दे देता था। मैं हमेशा चुप रहता था क्योंकि मैं थोड़ा शर्मीला था। लेकिन श्यामसुंदर हमेशा मेरा नाम दंगा करने वाले लड़कों की सूची में डाल देता था। ऐसा दस-बीस बार होने के बाद, मैंने हिम्मत जुटाकर श्यामसुंदर से पूछ लिया।

"श्याम, तुम हमेशा दंगाइयों की सूची में मेरा नाम क्यों डालते हो? क्या मैंने कभी दंगा किया है?" श्याम ने मुझे व्यंग्य भरे जवाब दिए। उस समय हमारी कक्षा में सात-आठ लड़कियाँ थीं। वे पहली दो-तीन बेंचों के बाईं ओर बैठती थीं। उनमें से एक बहुत सुंदर लड़की थी जिसका नाम पामी था। कभी-कभी वह फ्रॉक और स्कर्ट पहनती थी। उम्र के साथ वह थोड़ी समझदार हो गई होगी। मैं भी किशोरावस्था में था। मेरे होंठों पर मूंछें उग आई थीं। मेरी आवाज़ बदल गई थी। कभी-कभी मेरे गालों पर डिंपल पड़ जाते थे।

उस उम्र में, मेरे सामने बैठी हर लड़की मुझे अप्सरा जैसी लगती थी। क्लास जाते समय मैं पामी पर एक नज़र डाले बिना पीछे वाली बेंच पर नहीं बैठती थी। पामी को भी पता होगा कि मैं हर दिन उस पर एक नज़र डालती हूँ और क्लास चली जाती हूँ। एक दिन, जब मैं क्लास की भीड़-भाड़ में बिना उसकी तरफ देखे चली गई, तो वह थोड़ी उदास लग रही थी!

श्यामसुंदर ने यह सब कई बार देखा था। इसीलिए श्यामा मुझे दंगा करने वाले बच्चों में मेरा नाम शामिल करके मुझे डंडे खिला रहा था। लेकिन यह सब बिना किसी स्पष्टीकरण के हो रहा था।

राजग्या के उद्धव मेरे खास दोस्त थे। उनका घर स्कूल के पास ही था। उद्धव मुझे 'कदम्या' कहकर बुलाते थे। कभी-कभी तो वो मुझे 'बाब्या' भी कह देते थे! लेका पढ़ाई में उतना होशियार नहीं था, लेकिन बहुत व्यावहारिक था। एक बार पेशाब करने के लिए ब्रेक के दौरान हम दोनों ने शर्त लगाई। किसका किनारा ज़्यादा दूर जाएगा? जब हम गेंद खेल रहे थे, पता नहीं कब गोखले साहब पीछे खड़े हो गए। साहब ने हम दोनों की गर्दन पकड़ ली और बोले, "बेवकूफों, ये कैसी शर्त लगा रहे हो?"

हम दोनों नीचे सरक गईं और अपनी पैंटी के बटन बंद करने लगीं। उस दिन से मुझे ऐसा लगने लगा कि सर मुझे बेंत से कुछ ज़्यादा ही ज़ोर से मार रहे हैं।

एक बार मैंने उद्धव को उसके व्यवहार के बारे में बताया, "उद्या, उस दिन से सर मेरे साथ अजीब व्यवहार कर रहे हैं! यह शाम्या हमेशा मेरे बारे में गपशप करता रहता है। मुझे समझ नहीं आ रहा कि क्या करूं!" उद्धव निडर थे। उन्होंने कहा, "देखो उस पामी को, वो तुम्हें देखकर मुस्कुराती है, वो शाम्या को परेशान कर रही है! शाम्या पामी को तंग कर रहा है; इसीलिए वो सर से तुम्हारे बारे में झूठ और मनगढ़ंत बातें कर रहा होगा!"

उद्धव ने सर के मेरे प्रति गुस्से को बिल्कुल सही ढंग से भांप लिया था। उस दिन से मैंने जानबूझकर उनकी तरफ देखना बंद कर दिया।

साल देखते ही देखते बीत गया। हम अंग्रेजी की दूसरी कक्षा में गए। मुझे दूसरी से तीसरी कक्षा तक काफी संघर्ष करना पड़ा, फिर मैंने मैट्रिक की परीक्षा पास की।

पामी ने अब फ्रॉक की जगह पोल्का डॉट स्कर्ट पहनना शुरू कर दिया था। वह कभी-कभार साड़ी भी पहनती थी।
मैट्रिक के नतीजे आ गए थे। मैं पहले ही प्रयास में पास हो गया। लेकिन पामी फेल हो गई। राजाराम कॉलेज का नाम बदलकर आर्ट्स विभाग कर दिया गया। मुझे विश्वास ही नहीं हो रहा था कि चार साल इतनी जल्दी कैसे बीत गए। मैंने बी.ए. के लिए इतिहास और दर्शनशास्त्र विषय लिए थे। साहित्य में रुचि होने के कारण मैंने मराठी भी ली थी।
बी.ए. की पढ़ाई पूरी करने के बाद, मैंने काम किया और कानून की परीक्षा पास की। किसी ने कल्पना भी नहीं की थी कि कक्षा में हमेशा पीछे बैठने वाला यह छात्र एक दिन बी.ए. एल.एल.बी. बन जाएगा।
बाद में, दो-तीन साल के अभ्यास के बाद, मैं पुलिस अभियोक्ता और सरकारी अभियोक्ता बन गया। कई सालों तक मेरी किसी से मुलाकात नहीं हुई। संयोग से, मुझे पुराने राजवाड़ा की अदालत संख्या 1 में सरकारी अभियोक्ता नियुक्त किया गया। मुझे कोल्हापुर शहर में शराब से जुड़े मामलों की सुनवाई करनी पड़ती थी। पुरानी यादों को ताजा करने के लिए मैं समय-समय पर यूनिवर्सिटी हाई स्कूल जाया करता था, जो अदालत से कुछ ही दूरी पर था। मुझे नहीं पता था कि पामी कहाँ चली गई थी। एक बार संयोग से मेरी मुलाकात उद्धव से हुई। उन्होंने पूछा, “पामी का क्या हाल हुआ?” “नहीं, क्या हुआ?” “उसने एक अमीर आदमी से शादी कर ली है। वह इस समय दुबई में है!”
"आपने किससे शादी की है?"
"उसे एक अमीर पति इसलिए मिला क्योंकि वह खूबसूरत थी! मुंबई के वर्ली में उसका एक फ्लैट भी है! मैंने उसे परसों अंबाबाई से मिलने जाते समय देखा था। वह बिल्कुल बदल गई है! आप उसे पहचान भी नहीं पाएंगे।"
"काश मैंने उसे अभी न देखा होता!" मुझे अभी भी उसकी वह छवि याद है, गोरी, सुंदर, दो चोटियों वाली। उस याद को ताजा करना सुखद है।
फिर, उद्धव के साथ कौन था और कहाँ था, यह पता लगाने के बाद, मैंने अपनी घड़ी देखी, ग्यारह बजकर दस मिनट हो रहे थे। मैं न्यायिक मजिस्ट्रेट न्यायालय संख्या 1 के द्वार पर पहुँचा। मेरे सामने, करवीर तालुका के दो पुलिस कांस्टेबल एक आरोपी को

अदालत में ला रहे थे, जिसके हाथों में हथकड़ी लगी थी, उसकी लाठी से रस्सी बंधी थी, दाढ़ी-मूंछ थी, सिर पर गंदी गांधी टोपी थी, फटी हुई कमीज और पतलून थी। आरोपी ने मेरी ओर देखकर अपने हथकड़ी लगे हाथ जोड़ लिए और मुझसे कहा, "बाबा, क्या आप मुझे पहचानते नहीं?" मैंने उसकी ओर देखा और कहा, "नहीं, बिलकुल नहीं, आप कौन हैं?"

"मैं श्यामसुंदर कुलकर्णी हूँ! तुम्हारा सहपाठी!" मैं हैरानी से उसे देखता रहा। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि उससे क्या कहूँ।

मेरी हालत देखकर उसने आगे कहा, "देखिए, पुलिस ने मुझे बेवजह गिरफ्तार कर लिया है। अब मुझे छुड़ाना आपकी जिम्मेदारी है! यह मेरा पहला अपराध है।" कांस्टेबल साल्वी, जो उसे हथकड़ी पहनाकर लाया था, आगे आया, मुझे सलाम किया और बोला, "सर, यह आदतन अपराधी है। अब तक इसके खिलाफ निषेधाज्ञा के बाईस मामले दर्ज हो चुके हैं।"

मैंने सपने में भी नहीं सोचा था कि श्यामसुंदर कुलकर्णी की छवि, जो स्कूल में सफेद कमीज, खाकी पतलून, सिर पर गांधी टोपी पहनते थे और अक्षरों को इस तरह घुमावदार ढंग से लिखते थे मानो वे छपे हुए हों, समय के साथ इतनी विकृत हो जाएगी! कलाइ: तस्मैया नमः!

०-०-०

2. नींबू का तेल

1966 की गर्मियों में मेरा तबादला बारशी में हो गया। बारशी से मेरा पहले कोई संबंध नहीं था। मैं वहाँ किसी को जानता भी नहीं था। पहले तो मैं अकेला ही गया। मैं जयशंकर मिल के गेस्टहाउस में रुका। उस समय श्री भाऊसाहेब जादबुके बारशी के प्रमुख थे। उनके जान-पहचान के ज़रिए मुझे बारशी में एक मकान मिल गया। किराया 65 रुपये प्रति माह था। गावले गली में स्थित उस तीन मंजिला मकान के मालिक वेदपाल चोपड़ा थे। मकान का कब्ज़ा मिलने के बाद मैं श्रीमती माई और श्री उमेश को लेकर हल्की रेलगाड़ी से बारशी के लिए रवाना हो गया। मिराज से ट्रेन

छूटते ही उन्हें हवा में फर्क महसूस होने लगा। खिड़की से गर्म हवाएं आ रही थीं। भारत की मशहूर छोटी गेज वाली रेलगाड़ी आराग, बेदग, बेलंकी, संगोला और पंढरपुर से होकर गुज़र रही थी। बैलगाड़ी में भी इतने झटके कभी नहीं लगते थे। पहले तो मुझे ये झटके बाएँ से दाएँ महसूस हुए। फिर ऐसा लगा जैसे मुझे ऊपर उठाया जा रहा हो और फिर नीचे गिराया जा रहा हो। खैर, हम प्रथम श्रेणी में सफर कर रहे थे। तृतीय श्रेणी की सीटें मुश्किल से एक फुट चौड़ी थीं। उन पर बैठने वाले लोग स्टेशन पहुँचने तक छह-सात बार अपनी सीटों से धक्के खाकर गिरते रहे। अधिकतर यात्री विठोबा देखने के लिए इसी ट्रेन से यात्रा करते थे! उन्हें ट्रेन के कंपन का एहसास नहीं हुआ।

सुबह सात बजे हम कुरुदुवाड़ी पहुँचे। चाय बेचने वाला कोच के पास आया और बोला, “ईईईई”

जो ट्रेन 5:30 बजे कुरुदुवाड़ी पहुँची, वह फिर ईडीसी होते हुए लातूर के लिए रवाना हुई। हमारी ट्रेन तब तक नहीं चलती जब तक मद्रास मेल और हैदराबाद एक्सप्रेस ट्रेनें पूर्णा कुरुदुवाड़ी से न गुजर जाएँ। यह ट्रेन लगभग 7:30-8:00 बजे अपनी अगली यात्रा के लिए रवाना हुई। 8:30-9:00 बजे सूरज निकलने लगा। श्रीमती माई और उमेश को क्षितिज पर एक "मृगतृष्णा" दिखाई देने लगी। माई ने मुझसे कहा, "यह कैसा इलाका है, काश मैंने अपनी नौकरी छोड़ दी होती और कोल्हापुर या जयसिंहपुर में वकालत शुरू कर दी होती।" मैंने शर्मिंदा भाव से उनकी बात सुनी और कहा, "मैं पिछले 10 वर्षों से पुलिस अभियोक्ता के रूप में काम कर रहा हूँ। अगर मैं तीन-चार साल और काम कर लूँ, तो कम से कम थोड़ी पेंशन तो मिल ही जाएगी!"

मारी की आँखों से आँसू बह रहे थे। "पता नहीं हमें इस वीरान रेगिस्तान में कब तक रहना पड़ेगा!" उसने कहा। हम सचमुच रोते हुए बारशी पहुँचे थे, लेकिन कहते हैं कि सृष्टिकर्ता जन्म के समय ही व्यक्ति की कुंडली लिख देता है। अन्य सुख-दुख की घटनाओं के साथ-साथ, उसने यह भी तय किया होगा कि व्यक्ति कहाँ और कितने समय तक जीवित रहेगा। इसे कोई नहीं बदल सकता।

धीरे-धीरे हमारी बारशी से अच्छी जान-पहचान हो गई। अदालत में मेरी कुछ वकीलों से जान-पहचान हो गई। श्रीमती माई वहाँ जाने से पहले दो साल तक गडहिंगलाज के

कॉलेज में पढ़ रही थीं। उन्होंने (कै.) जगदाले अंकल के कॉलेज में दाखिला लिया। च. उमेश ने भी स्कूल जाना शुरू कर दिया। श्रीमती माई की कक्षा में श्रीमती प्रमिला देशमुख नाम की एक छात्रा थी। बाद में पता चला कि वह हमारी बहुत करीबी रिश्तेदार हैं।

बारशी के आसपास दो-तीन बड़ी झीलें थीं। मैं शनिवार और रविवार को उस झील के किनारे बने विश्राम गृह में रुका करता था। क्योंकि वहाँ शिकार के बहुत अवसर थे। जंगली बत्तखें, खरगोश, तीतर, चिंकारे जैसे पक्षी और जानवर बहुतायत में पाए जाते थे। धीरे-धीरे बारशी में दोस्तों का एक समूह इकट्ठा होने लगा। मोटर मैकेनिक, ड्राइवर, खराद मशीनों पर काम करने वाले मजदूर, किसान, पंचायत सदस्य, वदार, परधी, तंबोली और यहाँ तक कि तेली भी! मैंने जल्द से जल्द उन सभी की छोटी-छोटी कहानियाँ लिखने का संकल्प लिया है। आज मैं आपको अद्भुत व्यक्ति "लिम्बा तेली" से परिचित कराने जा रहा हूँ।

लिम्बा का चेहरा गोल-मटोल था, चेहरे पर हमेशा मुस्कान रहती थी और वह बड़े ही मिलनसार व्यक्ति थे। उनसे बाजार से सब्जियां लाने को कहो या किसी को अलविदा कहने को, वो तुरंत निकल पड़ते थे। मैंने बरशी में अनगिनत दोस्त बनाए। लिम्बा एक अविस्मरणीय व्यक्ति थे। तेल की गली में उनका पीढ़ियों से चला आ रहा तेल निकालने का व्यवसाय था। एक बार लिम्बा ने मुझसे कहा, "पिताजी, अगर दुनिया में कोई तेल सबसे अच्छा है, तो वो है करी का तेल! मैं आपके लिए इसे लाता रहूंगा! दाल उबालिए, उसमें थोड़ा कटा हुआ कच्चा प्याज, स्वादानुसार थोड़ा नमक, 10-12 धनिया के पत्ते, थोड़ी काली मिर्च और ऊपर से दो चम्मच करी का तेल डालिए! आपको क्या लगता है, रोटी के साथ क्या अच्छा लगेगा?"

"अरे, लेकिन इसमें कोलेस्ट्रॉल होगा!"

"अरे! इसका तो कोई नाम ही नहीं है! अब आप फ्रिज खरीदने वाले हैं, है ना? उस सरसों के तेल को फ्रिज में रख कर देखिए, वो बिल्कुल भी नहीं जमता। फ्रिज में जमने वाले तेल में तो पक्का कोलेस्ट्रॉल होता है!"

दसवीं कक्षा तक ही पढ़े लिंबा को व्यावहारिक ज्ञान बहुत था। मैं शाम को उसके साथ टहलने जाया करता था। तब वह मुझे बारशी में बीते समय में घटी रोचक घटनाओं के

बारे में बताता था। “लिंबा, बारशी में और क्या खास है? मुझे तो यहाँ आने से पहले ही हिरणों के पदचिह्नों और तुरची दाल के बारे में पता था!”
"अगर आप इसे देखने जाएं तो यह गांव वाकई बहुत शानदार है!"
"आपका क्या मतलब है?"
"क्या आप जानते हैं कि यहां किसे प्रतिष्ठित माना जाता है?"
मुझे कैसे पता चलेगा? मैं तो यहाँ नया हूँ।
"तो सुनिए, यहां के ज्यादातर प्रतिष्ठित लोग किसी न किसी तरह का व्यापार करते हैं। वे इसी से अमीर बनते हैं।"
"प्रतिष्ठा का निर्धारण किससे होता है?"
"जिस व्यक्ति के पास जमीन, गाड़ियां हों और घर में पत्नी और बच्चे होने के बावजूद दो या तीन 'अंडरवियर' हों, उसे इस गांव में सम्माननीय माना जाता है!"
"क्या? जो पुरुष पत्नियां रखता है, वह सम्मानित पुरुष होता है?"
"हाँ, जितनी अधिक पत्नियाँ होंगी, उतना ही अधिक प्रतिष्ठित वह होगा!"
"वाह! क्या प्रतिष्ठा के और भी कोई संकेत हैं?"
"ऐसे बहुत से लोग हैं, लेकिन भले ही वे घर पर शाकाहारी हों, वे बाहर मांस और मछली जरूर खाते हैं!"
"हाँ?"
"लेकिन बिना थोड़ा सा 'यह' लिए मांसाहारी खाना कितना मजेदार होता है, है ना?" लिम्बा ने अपने दाहिने हाथ के अंगूठे से अपने होंठ चाटते हुए कहा।
"ओह, लेकिन महाराष्ट्र में शराब पर प्रतिबंध है, है ना?"
"शराबबंदी अभी भी कानून में लागू है! यहाँ के विशेषज्ञ आपकी मनचाही शराब बना देते हैं। केले, खजूर और खट्टे फलों से!"
"अगर आपको यह हाथ से बनी शराब न मिले तो क्या होगा?"
"यूडी कोलन नाम की एक ड्रिंक है, और अगर आप आधा लीटर यूडी कोलन को पानी में मिला दें, तो आपको एक ऐसी ड्रिंक मिलेगी जो जिन जैसी होगी!"
"अरे, लेकिन यह शरीर के लिए हानिकारक है!"
"खतरे और उपाय? स्वस्थ लोगों को कुछ नहीं होता, मैं आपको ऐसे लोग दिखाऊंगा जो नियमित रूप से यूडी कोलन पीते हैं और पचहत्तर सौ साल तक जीते हैं!"

जिस तरह लिम्बा अपने आस-पास के समाज का बारीकी से अवलोकन करते थे, उसी तरह उन्हें ऑटोमोबाइल व्यवसाय का भी गहरा ज्ञान था। वे शेवरले, वक्सॉल, फोर्ड, जीप, मर्सिडीज और यहां तक कि आयातित कारों के नाम भी तुरंत बता सकते थे। उन्हें गाड़ी चलाना भी बहुत आता था। जब किसी का ड्राइवर अचानक बीमार पड़ जाता, तो वे लिम्बा को उसे बुलाने भेजते थे। कभी सोलापुर, कभी अक्कलकोट, कभी तुलजापुर और कभी पुणे। लिम्बा को महाराष्ट्र के लगभग सभी प्रमुख गांवों की सड़कें मुंह ज़बानी याद थीं। एक बार उन्होंने मुझसे कहा, "अब्बा, आपके उस महाद्वार रोड पर गाड़ी चलाना तो सर्कस जैसा है!"

"क्यों? आपने ऐसा क्यों सोचा?"

"ओह, शुक्रवार का दिन था। लड़कियाँ मुस्कुराते हुए देवी के मंदिर जा रही थीं। उसी समय, खाली सड़क पर कुछ आवारा लड़के उन्हें चिढ़ाते हुए निकल रहे थे। वे बिल्कुल माहाल के महीने में कुत्तों की तरह थे!"

कोल्हापुर की महाद्वार रोड के उनके सटीक वर्णन से मैं बहुत प्रभावित हुआ। चार महीने बाद मेरा तबादला हो गया।

"लिम्बा, क्या मेरा तबादला सोलापुर हो गया है?"

"क्या? इतनी जल्दी तबादला? अभी तो चार महीने भी नहीं हुए हैं?"

"हां, वहां का एक अभियोक्ता उपद्रवी था, इसलिए उसे फांसी दे दी गई और मेरी पिटाई की गई!"

"आयला, क्या यह पुलिस रिपोर्ट है या फर्जी रिपोर्ट?"

"ओह, मैं इस बारे में कुछ नहीं कह सकती! अगर मैंने कुछ कहा तो मुझे अनुशासनहीनता का नोटिस मिल जाएगा। अब मैं माई और उमेश को बैरक में छोड़कर अकेले जा रही हूँ! मैं हफ्ते में एक बार शनिवार को आऊँगी। तुम बस घर पर नज़र रखना, समय-समय पर देखते रहना कि उन्हें क्या चाहिए और क्या नहीं चाहिए!"

अगर मैं सोलापुर जाता, तो लिम्बा हफ्ते में एक-दो बार मुझसे मिलने वहां आ जाती!

"लेकिन बारशी के अलावा आप यहां इतनी बार क्यों आते हैं?"

मुझे सड़क परिवहन विभाग का काम करना है, है ना? किसी को ड्राइविंग लाइसेंस चाहिए, किसी को कार का ट्रांसफर करवाना है। हम उस विभाग के बहुत करीब हैं!

वह कैसी है?
"महीने में एक बार, आरटीओ शिविर बारशी, पंढरपुर और सांगोला में लगता है, और मुझे हर शिविर में आमंत्रित किया जाना चाहिए। मुझे सौ या दो सौ निमंत्रण मिलते हैं!"
"लिम्बा, आप किस तरह का व्यवसाय करते हैं?"
"अबा, मनुष्य को चतुर होना चाहिए। तभी वह इस दुनिया में खुशी-खुशी चार वक्त का भोजन कर सकता है!"
"अगर आपने एक गंदी तेल मिल भी चलाई होती, तो क्या आपका पेट नहीं भर जाता?"
"अरे! इसमें क्या है? मैं तो बैल की तरह कीचड़ में घूमने के लिए पैदा नहीं हुआ था!"
लिम्बा के घर में मांस और भेड़ का मांस खाना मना था। लेकिन हम हफ्ते में 3-4 बार शिकार पर जाते थे। मैंने लिम्बा को मांसाहारी भोजन से परिचित कराया। उसने बड़े चाव से वह भोजन खाया; लेकिन हर बार वह मुझे चेतावनी देता, "पिताजी, बारिश में मैं यह खाता हूँ, यह किसी को पता नहीं चलना चाहिए।"
मैं उनसे कहता, "जब आप कहते हैं कि हम दोस्त हैं, तो क्या बरशी के लोगों को पता होगा कि क्या करना है?"
साजिश के चलते जिस अभियोजक के पास मेरा तबादला सोलापुर में किया गया था, वह डेढ़ से दो साल बाद सेवानिवृत्त हो गया!
मैंने बरशी में अपना तबादला करवा लिया। रास्ते में, मैंने सोलापुर से ऑलविन कंपनी का एक फ्रिज खरीदा। चूंकि वह इसे बरशी ले जाने वाला था, इसलिए मैंने लिम्बा को संदेश भेजा, “मैंने फ्रिज खरीद लिया है। इसे बरशी ले जाने के लिए कल्लप्पा की गाड़ी ले आओ। श्रीमती मरीना और उमेश को भी साथ ले आओ!”
संदेश के अनुसार, लिम्बा, माई और उमेश के साथ कल्लप्पा की 36 मॉडल शेवरले कार में सोलापुर आया। अगले दिन, सुबह 9-10 बजे के आसपास बारशी जाने का फैसला हुआ। लिम्बा ने कहा, "पिताजी, अगर हमें बारशी जाना है, तो वैराग वाली सड़क बहुत खराब है। फ्रिज को हिलाना नहीं चाहिए। चलिए, तुलजापुर, उस्मानाबाद होते हुए बारशी चलते हैं! वहाँ सब कुछ पक्का है। बढ़िया!"
उस समय, मुंबई से मद्रास मेल द्वारा बर्फ में रखी मछलियाँ सोलापुर आती थीं। इन्हें सुबह "जंगल" नामक क्षेत्र में बेचा जाता था। सोलापुर में रेलवे विभाग में काम करने

वाले कई अधिकारी ईसाई और पारसी थे। वे सुबह आने वाली बर्फ में रखी मछलियों को देखकर ललचा जाते थे। हमारे मछुआरे मछली के बहुत शौकीन हैं। वे इसे बड़े ही स्वादिष्ट तरीके से पकाते भी हैं।
अगले दिन, फ्रिज ले जाते समय हमने कुछ मछली तलने का फैसला किया। सुबह हम जंगल से एक किलो चूड़ियाँ लाए थे। हमने उन्हें तलकर अपने साथ ले लिया। रास्ते में, तुलजापुर में देवी के दर्शन करने के बाद, हमने उस्मानाबाद के पास सड़क किनारे एक पेड़ के नीचे भोजन करने का फैसला किया।
पीपल के पेड़ की घनी छाया देखकर हमने खाने के डिब्बे बाहर निकाले। मारी ने हर एक को चपाती पर एक पूरा तला हुआ बंगला परोसा।
लिम्बा अब तक खरगोश, हिरण और तीतर का मांस बड़े चाव से खाता था। लेकिन उसने अभी तक समुद्री मछली नहीं खाई थी। उसने मरीना से कहा, "माँ, मुझे मछली नहीं खानी है!"
"क्यों, इसे खाकर देखो और फिर पता करो कि क्या तुम्हें इसे दोबारा खाने की इच्छा होती है!"
मछली को साफ करने और उसे सिर और पूंछ समेत तलने का हमारा तरीका। नींबू के साथ खाने को लेकर असमंजस में पड़कर मैंने एक टुकड़ा खाया और कहा, "वाह, क्या परीक्षा है!"
मैंने कहा, “पी. एल. देशपांडे कहते हैं, ‘जिस व्यक्ति ने वहाँ चूड़ियाँ और चावल नहीं खाए, उसने अपना जीवन व्यर्थ कर दिया!’” “खाओ, खाओ, खूब खाओ!”
लिम्बा ने बांग्ला का सिर अपने मुंह में डाला, मैंने कहा, "चबाओ, चबाओ, मछली का दिमाग खाने से तो इंसानी दिमाग भी तेज हो जाता है! तुम्हारा दिमाग तो और भी तेज हो जाएगा।"
श्रीमती माई, कल्लप्पा और उमेश उस बातचीत को सुनकर हंसने लगे।
उस्मानाबाद से निकलते ही आसमान में काले बादल छाने लगे। हल्की-हल्की हवा चल रही थी। जैसे ही लगा कि तेज बारिश होने वाली है, येदशी घाट पर बारिश की बूँदें गिरने लगीं। हमारी गाड़ी की छत हटा दी गई थी, क्योंकि फ्रिज गाड़ी में फिट नहीं हो रहा था। जब हम पांगारी पहुँचे, तो ज़ोरदार बारिश शुरू हो गई। लिम्बा ने कहा,

“अब्बा, थोड़ी देर यहीं स्वास्थ्य केंद्र में रुकते हैं! बारिश रुकने पर हम चले जाएँगे। यहाँ के डॉक्टर, सदानंद धोले, आपको भी जानते हैं!”
"लेकिन आप वहां कहां रुकेंगे?"
डॉ. सदानंद को!
कल्लप्पा गाड़ी लेकर स्वास्थ्य केंद्र गए। उन्होंने स्वास्थ्य केंद्र में डॉक्टर के बारे में पूछताछ की। उन्हें पता चला कि डॉक्टर दोपहर के भोजन के बाद बगल वाले कमरे में आराम कर रहे हैं। जैसे ही लिम्बा ने डॉक्टर के दरवाजे की घंटी बजानी शुरू की, मैंने कहा, “लिम्बा, तुम उस डॉक्टर को क्यों परेशान कर रहे हो? बारिश रुकने तक हम उनके गैरेज में इंतजार करेंगे!”
तभी कमरे का दरवाजा खुला। डॉ. सदानंद धोले, जो हमेशा मुस्कुराते रहते थे! मुझे देखकर उन्होंने कहा, "बाबासाहेब, आप अचानक कैसे आ गए?"
मैंने कहा, "बारिश की वजह से ऐसा हुआ है।"
उस कमरे में डॉक्टर के पलंग पर बैठी उस खूबसूरत युवा नर्स को देखकर मैंने कहा, "डॉक्टर साहब, माफ कीजिए, हमने आपकी 'निजता' भंग कर दी!" डॉक्टर ने बनावटी मुस्कान के साथ कहा, "कोई बात नहीं, चलिए सीता, आप चाय मंगवाइए!"
सीता ने अपनी साड़ी समेटी और चाय पीने चली गई। उसी लिम्बा ने डॉक्टर से कहा, "पिताजी, जब मैं बरसी जाऊँगा, तो क्या आप वैनी को बताएँगे कि आप यहाँ क्या काम करते हैं?"
डॉक्टर इस बात पर काफी देर तक हंसते रहे।
"बारशी के अन्य गणमान्य व्यक्तियों की परंपरा को आगे बढ़ाना मेरे लिए खुशी की बात है," लिम्बा ने कहा। चाय पीने और बारिश रुकने के बाद, हमने अपनी यात्रा शुरू की। मैंने लिम्बा से कहा, "आपने डॉक्टर की नींद में खलल डाला। आपने उनसे अपनी पत्नी को बताने के लिए क्यों कहा?"
लिम्बा हंसते हुए बोला, "मैं तुम्हें ये सब बिल्कुल नहीं बताऊंगा। उन्होंने उसका मज़ाक उड़ाया! बेचारा डॉक्टर क्या करेगा? उसकी पत्नी, जो गृहिणी है, बारह महीने से बिस्तर पर पड़ी है। सीता कैसी दिखती थी? अगर वो डॉक्टर बन भी जाए, तो क्या वो फिर भी मर्द रहेगा?"

लिम्बा बहुत ही ज़िम्मेदार हैं, उन्होंने कई व्यवसाय किए हैं और सबकी मदद करने में तत्पर रहते हैं। वे कई लोगों के स्वभाव को बारीकी से परखते हैं! उनसे मिले हुए काफी समय हो गया है। कुछ लोग भुला दिए जाते हैं, चाहे उन्हें भुलाने के लिए कहा ही क्यों न जाए। लिम्बा ऑयल उन्हीं में से एक हैं।

०-०-०

3. फाइव स्टार पार्टी तात्या

1970 में, कोल्हापुर के ताराबाई पार्क में एक छोटा सा बंगला बना। मैं उस बंगले में मुश्किल से एक महीना ही रहा था कि मुझे इस्लामपुर तबादला होने का आदेश मिल गया! मैं बहुत परेशान हो गया था। मेरी पत्नी ने यात्रा करते हुए ही मराठी की चौथी कक्षा से लेकर एम.ए. तक की पढ़ाई पूरी कर ली थी। मेरा इकलौता बेटा उमेश भी कानून की पढ़ाई कर रहा था। मैंने उनकी पढ़ाई में कोई रुकावट न आए, इसलिए अकेले ही इस्लामपुर में नौकरी शुरू की। पिछला अभियोक्ता अदालत के ठीक सामने रहता था। मैंने भी वहीं रहने का फैसला किया। वह जगह एक व्यक्ति के रहने के लिए बहुत बड़ी थी। सामने के बरामदे के पीछे तीन बड़े कमरे थे। वहां हमेशा

अंधेरा रहता था। मेरे साथ अभियोजन ड्यूटी पर महादेव पाटिल नाम का एक कांस्टेबल था। उसने मुझसे कहा, "सर, इस जगह पर ज्यादा दिन मत रहिए!"
मैंने उससे पूछा, "क्यों?"
‘‘यह जगह बदिक है, भूतिया है!’’
मैंने आत्मविश्वास से कहा, "अरे, मुझे भूतिया फार्मों पर बिल्कुल भी विश्वास नहीं है।"
"यह फैसला आपको करना है। यह बताना आपका काम है!"
चूंकि मुझे इतने बड़े कमरे में अकेले रहना था, इसलिए मना करने पर भी मेरे मन में तरह-तरह के विचार आने लगे। रात में ऐसा लगने लगा जैसे मेरे पीछे अंधेरे कमरे में कोई घूम रहा हो। इसलिए मैंने अपना पलंग बरामदे में बाहर रख दिया। मैं कमरों में ताला लगा देती थी। अगर कोई परेशानी होती, तो बरामदे का दरवाजा खोलकर सामने वाली गली में चीखते हुए भाग जाना आसान था!
उस जगह के पीछे एक शौचालय था। लेकिन शौचालय की सफाई करने कोई नहीं आता था। इस्लामपुर में इधर-उधर घूमते हुए, पूंछ हिलाते हुए सूअर ही सफाई का काम करते थे। आठ दिनों के भीतर ही वह मशहूर कागज़ का शौचालय एक तूफान में उड़कर परिसर के बाहर गिर गया। एक के बाद एक ऐसी अशुभ घटनाओं के कारण तुरंत यह महसूस होने लगा कि इस्लामपुर में हमारा प्रवास सुखद नहीं होगा।
पीछे रहने वाली वदार समुदाय की एक लड़की रोज़ घर की सफाई करने आती थी। वह वदार समुदाय की थी, पर सादगी से रहती थी। एक बार मैंने उससे पूछा, “सखु, मुझे होटल का खाना पसंद नहीं है। सुबह-शाम मैं अपने गैस पर सब्ज़ी, आमटी या आमलेट तो बना सकती हूँ, पर रोटी या चपाती नहीं बना सकती। मैं उसे गेहूँ और ज्वार का आटा दूँगी। क्या तुम मेरे लिए सुबह एक-दो चपाती और शाम के लिए एक रोटी बना दोगी? मैं तुम्हें महीने में तीस रुपये दूँगी!”
सखु ने कहा, "आप मुझे पैसे किसलिए दे रहे हैं? मैं सुबह चपाती और रोटी लेकर आऊंगा।"
लेकिन मैं सखु को पैसे देता रहा। अपने दो साल के प्रवास के दौरान, मुझे हमेशा उस लड़की के हाथों से खाना खाने का मौका मिला।

उस समय एच. के. पाटिल इस्लामपुर के आपराधिक न्यायालय में एक प्रसिद्ध वकील थे! हम उन्हें 'तात्या' कहकर पुकारते थे। मेरे पिता और मैं न्यायालय में प्रतिदिन 'बातें' किया करते थे, लेकिन न्यायालय की कार्यवाही समाप्त होने के बाद हम दोनों सखारलिया रोड या बाह्या रोड पर टहलने जाते थे। उस समय तात्या मुझे उस क्षेत्र के 'इरसल' लोगों के बारे में बताते थे। कभी-कभी वे मुझे उन रोचक आपराधिक मामलों के तथ्य भी बताते थे जो मेरे आने से पहले निपटाए गए थे। एक लेखक के लिए इस तरह का ज्ञान बहुत महत्वपूर्ण होता है। इस्लामपुर में अपने दो वर्षों के प्रवास के दौरान, मेरे चार उपन्यास प्रकाशित हुए।

कभी-कभी तात्या खाने की थाली लेकर मेरे पास रात के खाने पर आते थे। उस समय उनकी जेब में भुनी हुई मूंगफली का एक थैला होता था। मैंने उनसे पूछा, "तात्या, आपको खाने के साथ मूंगफली कैसी लगती है?" तात्या ने कहा, "मूंगफली खाए बिना भोजन अधूरा लगता है।" पार्टी कार्यकर्ता के प्रति तात्या का व्यवहार अनुकरणीय था। वे कभी भी किसी पार्टी कार्यकर्ता को शुल्क न लाने पर डांटते नहीं थे। "आपने कहा कि आपको कोई समस्या थी। लेकिन खाने के समय शुल्क न लाएं!" तात्या पार्टी कार्यकर्ता से उनकी ग्रामीण भाषा में बात करते थे।

आपराधिक न्यायालय ही एकमात्र ऐसी जगह है जहाँ आपको मानवीय स्वभाव के अनगिनत उदाहरण देखने को मिलते हैं! यहाँ आपको न केवल वफादार अभियोजक, गवाह और जांच अधिकारी मिलेंगे, बल्कि ऐसे न्यायाधीश भी मिलेंगे जिनका व्यवहार कुछ अजीबोगरीब होता है। लेकिन ड्यूटी पर रहते हुए न्यायाधीशों की वफादारी के बारे में राय व्यक्त करना बहुत खतरनाक है।

मुझे इस्लामपुर में न्यायाधीशों के अहंकार के एक-दो उदाहरण याद हैं। इनमें से केवल एक ही उल्लेख करने योग्य है। अदालत में एक मामला चल रहा था। मैं एक गवाह से पूछताछ कर रहा था। पूछताछ के दौरान गवाह से "मार्गदर्शक" प्रश्न नहीं पूछे जाने चाहिए, लेकिन एक बार मैंने अनजाने में एक ऐसा प्रश्न पूछ दिया, और ड्यूटी पर मौजूद मजिस्ट्रेट ने मुझे फटकार लगाई।

"अभियोजक महोदय, आपको कानून किस घटिया प्रोफेसर ने पढ़ाया?"

मैंने विनम्रतापूर्वक उत्तर दिया, "माननीय न्यायाधीश, जिन्होंने आपको पढ़ाया, उन्होंने ही मुझे भी पढ़ाया। लेकिन आप न्यायाधीश इसलिए बने क्योंकि आप बहुत

भाग्यशाली थे। मैं इतना भाग्यशाली नहीं था, इसलिए मैंने अनिच्छा से सरकारी अभियोजक का यह पद स्वीकार किया! (दरअसल, न्यायाधीशों ने मुझे तीन-चार बार बुलाया था और मुझसे दस साल बाद सहायक न्यायाधीश के पद पर नियुक्ति की सिफारिश करने को कहा था), लेकिन मैं उस पद की पाबंदियों को स्वीकार करने के लिए तैयार नहीं था। इससे मेरे लेखन, चित्रकला, शिकार और यात्रा पर कई तरह की पाबंदियां लग जातीं, लेकिन मैं यह सब उस न्यायाधीश को क्यों बताऊं जिसने मेरा अपमान किया?"

1972 के अकाल के दौरान, अनाज पर ज़िला प्रतिबंध लगा दिया गया था। सोलापुर से ज्वार की साठ बोरियाँ ले जा रहे एक ट्रक को फौजदार भगवानराव पाटल ने पेठ नाका पर रोक लिया। ड्राइवर और सफाईकर्मी को गिरफ्तार कर लिया गया। उनके दस्तावेजों में झूठा दावा किया गया था कि तुअर दाल की साठ बोरियाँ कराड में उतारी गई थीं, जबकि वास्तव में ज्वार पेठ नाका पर पाया गया था। यह मामला तात्या को सौंपा गया। तात्या ने मुझे उस दिन टहलते हुए बताया,

"अरे, सरकार तो अनाज की आवाजाही पर बेवजह पाबंदी लगा रही है! अगर हमारे इलाके के लोगों को सोलापुरी स्कूल और जोंधला का खाना मिल रहा है, तो सरकार क्या कर रही है?"

मैंने हंसते हुए कहा, "आप सही कह रहे हैं, लेकिन सरकार को अनाज परिवहन पर प्रतिबंध लगाना ही होगा क्योंकि व्यापारी इससे भारी मुनाफा कमाते हैं!"

तात्या ने कहा, "चलो, मुझे इस मामले को सुलझाने के लिए कुछ सुझाव दो।"

"मैं? मैं यह सुझाव कैसे दे सकता हूँ? ताले लगाना तो मेरा काम है!"

तात्या ने कहा, "अरे, ताला लगाने वाला ही उसे खोलना जानता है!"

अगर आप इस नज़रिए से देखें तो ज़िले के प्रतिबंध का उल्लंघन करके अनाज आयात करना कोई मामूली अपराध नहीं था। इसके अलावा, मेरे पिता मेरी प्रकृति को जानते थे। मेरे पास आने वाले हर मामले में मैंने कभी भी आरोपी को सज़ा देने पर ज़ोर नहीं दिया।

मुझे हमेशा उन लोगों के प्रति सहानुभूति रही है जिन्होंने परिस्थितियों के कारण अपराध किए। मैंने कहा,

"देखो कि गवाह मेहमाननवाज हैं या नहीं!"

इस पर तात्या ने कहा, "ऐसा कभी संभव नहीं होगा। भगवानराव पाटिल एक सैन्य अभियोजक हैं। उनका दबदबा बहुत बड़ा है। जज या अन्य गवाह कभी मूर्ख नहीं बनेंगे! मुझे कोई और बचाव का तरीका सुझाइए!"
मैंने कहा, “ठीक है, मामला सुलझने पर क्या तुम मेरे लिए पार्टी दोगे?” तात्या ने मेरा हाथ पकड़कर जवाब दिया, “अगर तुम कहो कि पाँच सितारा होटल में पार्टी है, तो भी मैं दूंगा, लेकिन यह मामला मेरी प्रतिष्ठा का सवाल है! इसे सुलझना ही चाहिए।” मैंने कहा, “ठीक है। कर दो। कराड नगरपालिका की रसीद से पता चलता है कि उस ट्रक में लदी तुअर दाल कराड में उतारी गई थी। इसलिए, खाली ट्रक वापस ले जाने के बजाय, तुम्हारी गाड़ी का ड्राइवर ट्रक को नेरला ले गया यह देखने के लिए कि क्या कासेगांव या नेरला में कोई किराया मिल सकता है। वहाँ कुछ किसान थे। उन्होंने कहा, “क्या तुम हमारे साठ बोरी ज्वार इस्लामपुर या गोदावून ले जाओगे?” ड्राइवर कहता था, “नेरला में, हमने चार-पाँच किसानों का ज्वार ट्रक में लादा और जब हम इस्लामपुर जा रहे थे, तो सैनिकों ने पेठ नाका पर ट्रक को पकड़ लिया। हमने कभी ज़िला प्रतिबंध नहीं तोड़ा है, लेकिन इसके लिए तुम्हें नेरला से चार-पाँच भरोसेमंद लेकिन झूठे गवाह लाने होंगे।”
"मैं यह समझता हूँ, लेकिन जिरह के दौरान सरकार की ओर से उन गवाहों से बहुत ज्यादा सवाल मत पूछिए। अन्यथा, जिरह के दौरान बचाव पक्ष के गवाह को बदनाम करने में आप एक मोहरे बन जाएंगे!"
मैंने कहा, "अरे, यह कैसे संभव है? अगर मैं ऐसा करना चाहता, तो क्या मैं खुद बचाव की इस रणनीति का सुझाव देता?"
मामला चलता रहा। "तुम भी जान जोखिम में डालो, मैं भी जान जोखिम में डालूंगा।" बस इसी तरह सब कुछ हुआ। नेरला से पांच गवाहों को पिता ने ढूंढ निकाला। मैंने उनसे जिरह की। आखिरकार, अदालत ने आरोपियों का पक्ष स्वीकार कर उन्हें बरी कर दिया। नेरला के गवाहों को नीलाम किए गए ज्वार की कीमत चुकाने का आदेश जारी किया गया।
उस समय, इस्लामपुर दरबार में शिराला परिवार के बत्तीस सदस्यों का प्रतिनिधिमंडल महीने में कुछ दिनों के लिए आता था। मुझे भी जाना पड़ता था। मेरे पिता के भी शिराला परिवार के कई ग्राहक थे।

हम पहाड़ी से लौट आए। तात्या मेरे पास आया और गंभीर चेहरे से बोला, "अरे साहब, चोर को मोर मिला या फिर कोई गवाह? मुफ्त का पैसा बेकार चला गया?"
"आप क्या कहते हैं?"
"अरे, क्या नज़र ने अभी-अभी मुझे अपने हस्ताक्षर दिखाए?"
मुझे खूब हंसी आई। मैंने सुना था कि वालवा तालुका के लोग इरसाल हैं। लेकिन उस घटना की वजह से मुझे उनसे एक अच्छा अनुभव मिला।
उसके बाद, जब भी मैं तात्या से मिलती, तो मजाक में उससे पूछती, "क्या, तात्या, तुम्हारी वो फाइव-स्टार पार्टी कब हुई थी?"
इस पर तात्या नेरल्या के गवाहों को इस्लामपुरी शैली में गंभीर दुर्व्यवहार का सामना करना पड़ा।
इसलिए मैं अनगिनत अच्छी और बुरी यादों के साथ इस्लामपुर से विदा हुआ।
०-०-०

४. डॉ. डी. के. गोसावी

कुछ परिचित लोगों से हमारी मुलाकात अक्सर नहीं हो पाती। लेकिन उनके प्रति हमारा स्नेह कभी कम नहीं होता। डॉ. डी. के. गोसावी उन्हीं में से एक हैं! हम उनसे सन् 1962 में मिले थे!

उस समय, मुझे हाल ही में जयसिंहपुर की अदालत में पुलिस अभियोक्ता के रूप में नियुक्त किया गया था। उससे पहले, जब मैं छोटा था और छुट्टियों में अक्कलकोट गया था, तब सोलापुर के डॉ. वैशम्पायन ने मेरे टॉन्सिल का ऑपरेशन किया था। उसके बाद, जयसिंहपुर में नौकरी शुरू करने के बाद ही मुझे फिर से गले में खराश होने लगी!

मिराज महाराष्ट्र का एक प्रसिद्ध चिकित्सा केंद्र है। यहाँ वर्षों से सिर से पैर तक सभी बीमारियों का इलाज करने वाले विशेषज्ञ चिकित्सक मौजूद हैं। मिराज में चिकित्सा उपचार की इस परंपरा को शुरू करने का श्रेय प्रसिद्ध धनवंतर डॉ. वानलेस को जाता है। उस समय भारत ब्रिटिश शासन के अधीन था। उनके शासनकाल में अंग्रेजों ने भारत से बहुत धन लूटा, यहाँ तक कि कोहिनूर हीरा भी। इसके बदले में हमें कुछ कल्याणकारी सुधार मिले। पोस्ट-टेलीग्राफ, रेलवे, मिशन अस्पताल इनमें से कुछ प्रमुख हैं।

भारत में अंधविश्वास और अशिक्षा का बोलबाला था। बीमारियों के इलाज के तरीकों का कोई वैज्ञानिक आधार नहीं था। इसलिए, यहाँ के लोगों की औसत जीवन प्रत्याशा लगभग पैंतालीस वर्ष थी।

शासकों ने भारत की जनता को बेहतर चिकित्सा सुविधा प्रदान करने का निर्णय लिया। उस समय, धर्म का प्रचार करने के लिए कई ईसाई मिशनरी भारत आए थे। इनमें से कुछ मिशनरी चिकित्सा का अभ्यास भी करते थे। डॉ. वानलेस ने महाराष्ट्र का भ्रमण किया। उन्हें शुष्क हवा और प्रचुर वर्षा जल वाला एकमात्र स्थान मिराज मिला! आज भी, मिराज के विश्रामबाग में स्थित मिशन अस्पताल तपेदिक का इलाज करने वाला एक अन्य चिकित्सा केंद्र है। इसका नाम भी डॉ. वानलेस के नाम पर रखा गया है। समय के साथ, भारत में राजनीतिक परिवर्तन हुए। गांधी और नेहरू जैसे निष्ठावान नेताओं ने स्वतंत्रता के लिए पुरजोर संघर्ष किया। पैट्री सरकार ने जल्दबाजी में अंग्रेजों को छोड़ दिया। द्वितीय विश्व युद्ध छिड़ गया। मित्र राष्ट्रों ने जर्मनी को पराजित किया। लेकिन इस जीत की कीमत अंग्रेजों को भारी पड़ी। उनकी आर्थिक स्थिति बिगड़ गई। उसी समय, भारत में स्वतंत्रता आंदोलन जोर पकड़ रहा था। "साहब" अनिच्छा से अपने देश लौट गए।

भारत स्वतंत्र हुआ। 15 अगस्त 1947 को लाल किले पर स्वतंत्र भारत का तिरंगा फहराया गया। ब्रिटिश मिशनरियों का प्रभाव भी कम हो गया। उनके शासनकाल में नागरिकों को चिकित्सा सेवाएं प्रदान करने में जो तत्परता थी, वह अब नहीं रही। इसलिए, मिराज को एक चिकित्सा केंद्र के रूप में जो प्रसिद्धि प्राप्त थी, वह कम नहीं हुई। ईसाई समुदाय के प्रसिद्ध परोपकारी व्यक्तियों, डॉ. डब्ल्यू. ए. सेसिल, डॉ. गोर्डे, डॉ. गायकवाड़ और डॉ. चोपड़े ने मिराज की प्रसिद्धि को आगे बढ़ाया।

लगभग उसी समय, कुछ युवा महाराष्ट्रियों ने चिकित्सा क्षेत्र में अपना पहला कदम रखा। डॉ. कृष्णाजी गोसावी के पुत्र, डॉ. डी. के. गोसावी, जो कान, नाक और गले के विशेषज्ञ हैं, उनमें एक जाना-माना नाम हैं। मैं अपने गले में खराश दिखाने के लिए डॉ. डी. के. गोसावी को दिखाने मिराज गया था। उस समय, डॉ. दत्ता गोसावी मिराज किले में एक छोटे से क्लिनिक में परामर्श देते थे।

डॉ. दत्ताजी, जिनकी लंबाई लगभग मेरे जितनी ही थी, पाँच फुट दो इंच, गोरा रंग, शानदार माथा और बहुत ही मधुर आवाज, ने मेरी जाँच की और कहा, "बाबासाहेब, आपको कुछ भी नहीं हुआ है। थोड़े से नमक को गर्म पानी में मिलाकर गरारे कीजिए। आप ठीक हो जाएँगे! मैं आपको कोई दवा नहीं दूँगा।"

वह हमारी पहली मुलाकात थी। उसके बाद, डॉक्टरों ने श्रीमती मारिन और डॉ. उमेश के टॉन्सिल का ऑपरेशन किया। जब डॉक्टरों को पता चला कि मुझे साहित्य और चित्रकला में रुचि है, तो वे बहुत प्रसन्न हुए। हम एक-दूसरे के घर अक्सर आने-जाने लगे। मुझे डॉक्टर का विनम्र और मददगार स्वभाव अक्सर देखने को मिलता था। उनका क्लिनिक तेजी से बढ़ने लगा। जल्द ही, "अश्विनी प्रसाद" अस्पताल की भव्य इमारत बनकर तैयार हो गई। डॉक्टर की पत्नी प्रभाताई भी स्त्री रोग विशेषज्ञ थीं। उन्होंने भी उसी जगह पर अपना प्रसूति अस्पताल शुरू किया। पति-पत्नी दोनों का व्यवहार बहुत ही स्नेहपूर्ण और प्यार भरा था। इसी वजह से कर्नाटक से लेकर नगर, औरंगाबाद तक के मरीज कान, नाक, गले और स्त्री रोग संबंधी बीमारियों के इलाज के लिए "अश्विनी प्रसाद" आने लगे। डॉक्टर के दो बच्चे हैं: शिशिर और हेमंत!

शिशिर डॉक्टर बन गए। हेमंत इंजीनियर बने और अमेरिका में बस गए। लेकिन एक रहस्यमय बुखार के कारण उनकी असमय मृत्यु हो गई। गोसावी दंपति पर असहनीय दुःख का पहाड़ टूट पड़ा। लेकिन दोनों ही बुद्धिजीवी थे। उन्होंने हेमंत की असमय मृत्यु का दर्द सहा। वे अपने बढ़ते कारोबार में जुट गए। हेमंत की मृत्यु की खबर सुनते ही मैं मिराज के पास गया। मैंने उन्हें गले लगाया और खूब रोया। मैं डॉक्टर को सांत्वना देने गया था, लेकिन डॉक्टर ने ही मुझे सांत्वना दी। बाद में उन्होंने हेमंत के बारे में जो बताया, वह बहुत ही मार्मिक था। डॉक्टर ने कहा, "बाबा साहब, मुझे अमेरिका से फोन आया था, हेमंत की हालत गंभीर है। उन्हें वहां के अस्पताल में भर्ती कराया गया है। वहां के विशेषज्ञ डॉक्टर उनका इलाज कर रहे थे, लेकिन कोई भी

उनके बुखार का कारण नहीं बता पाया। अंत में, उनका ब्रेन डेड हो गया। जब प्रभा और मैं वहां पहुंचे, तो हेमंत का इलाज कर रहे डॉक्टर ने मुझसे कहा, "हमने उन्हें कृत्रिम श्वसन देकर जीवित रखा है। लेकिन उनका ब्रेन डेड हो चुका है। आप तय करें कि कृत्रिम श्वसन जारी रखना है या बंद करना है।"
"तो तुमने क्या कहा?" मैंने पूछा।
"एक बार किसी व्यक्ति का मस्तिष्क निष्क्रिय हो जाए, तो उसे पुनर्जीवित नहीं किया जा सकता। मैंने तुरंत कहा, 'कृपया कृत्रिम श्वसन बंद कर दें।' क्योंकि मुझे यकीन था कि हेमंत अब और जीवित नहीं रहेगा। कृत्रिम श्वसन बंद होते ही हेमंत की मृत्यु हो गई।"
शाम को उनका अंतिम संस्कार बिजली के तार पर किया गया। मैं उनके राक्षस को अपने साथ लेकर आया। अगले दिन मैंने उस राक्षस को नरसोबावाड़ी में विसर्जित कर दिया।
यह कहानी सुनकर मैं स्तब्ध रह गया। यद्यपि यह एक शाश्वत सत्य है कि संसार में जन्म लेने वाला प्रत्येक प्राणी अंततः मर जाएगा, फिर भी यह अत्यंत दुर्भाग्यपूर्ण है कि माता-पिता को एक युवा पुत्र की असमय मृत्यु का दुःख सहना पड़े।
डॉक्टर का एक सपना था। मिराज में एक आधुनिक कैंसर अस्पताल शुरू करना। पश्चिमी महाराष्ट्र और कर्नाटक के लोगों को कैंसर के इलाज के लिए मुंबई जाना पड़ता था। मध्यम वर्ग के लिए मुंबई जाना ही मुश्किल था, और उससे भी ज्यादा मुश्किल था वहाँ कुछ दिनों के लिए रुककर इलाज कराना। लेकिन डॉक्टर ने अपने अस्पताल को उपेक्षित नहीं छोड़ा और कैंसर अस्पताल के लिए पत्र व्यवहार शुरू किया। उन्होंने यहाँ के बुद्धिमान और जानकार नेताओं को समझाया कि मिराज में अस्पताल का होना कितना जरूरी है। अस्पताल का निर्माण शुरू हुआ। उस समय शरद पवार महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री थे। डॉक्टर ने उन्हें प्रस्तावित इमारत की जगह दिखाई। उन्होंने बताया कि कितने उदार लोगों ने आर्थिक मदद की पेशकश की थी और इसका नतीजा यह हुआ कि शरद पवार ने तुरंत मुख्यमंत्री निधि से पाँच करोड़ रुपये भेज दिए। हर तरफ से मदद आने लगी। डॉक्टर ने अस्पताल को पूरा करने के लिए दिन-रात प्रयास किए।

इसी समय के आसपास, डॉक्टरों ने कैंसर से उबरने वाले कुछ पश्चिमी लोगों के उदाहरणों पर एक किताब लिखी। इलाज के लिए आवश्यक उपकरण आ गए। कैंसर का इलाज करने वाले विशेषज्ञ डॉक्टरों को अस्पताल में नियुक्त किया गया। सिद्धिविनायक कैंसर अस्पताल में इलाज कराने के लिए बड़ी संख्या में मरीज मिराज आने लगे। डॉ. डी. के. ने अकेले ही पच्चीस से तीस करोड़ रुपये की इस परियोजना को साकार किया। लेकिन...?

नियति की क्रूरता ने डॉक्टर को भी उसी बीमारी से जकड़ लिया। मुझे भाग्य की विडंबना का एहसास हुआ। जब मुझे यह समझ आया, तो मैं उनसे मिलने गया। डॉक्टर के चेहरे की चमक फीकी पड़ चुकी थी। उन्होंने मुझे मृत्यु पर लिखी अपनी चार-पाँच अंग्रेज़ी पंक्तियाँ पढ़कर सुनाईं। उन्हें सुनते ही मेरी आँखों से आँसू बहने लगे। जिस डॉक्टर ने अकेले ही पच्चीस से तीस करोड़ रुपये जुटाकर कैंसर अस्पताल की स्थापना की थी, अंततः उसी बीमारी से उनका निधन हो गया। उन्होंने जीवन में एक सच्चे, आदर्शवादी और निस्वार्थ मित्र को खो दिया। लेकिन ऐसा नहीं होना चाहिए था। लाखों लोग मरते हैं, लेकिन लाखों लोगों की जान बचाने वाले की असमय मृत्यु से बड़ा दुर्भाग्य और कोई नहीं!

0-0-0

५. डॉ. डेनिस ऊर्फ मनिंदरपालसिंग कोहली

श्री ट्रेवर और उनकी पत्नी हिलेरी फोस्टर साउथेम्प्टन में एक घर में अपनी इकलौती बेटी हन्ना के साथ रहते थे। हन्ना 17 साल की थी, हंसमुख और स्वभाव से बहुत प्यारी लड़की थी। उनका परिवार इंग्लैंड के मध्यम वर्ग की तरह बहुत सीधा-सादा था। वे कभी किसी से झगड़ा नहीं करते थे। दोनों कमाते थे। वे काम के सिलसिले में अक्सर घर से बाहर रहते थे। माता-पिता की अनुपस्थिति में हन्ना ही घर की देखभाल करती थी।

14 मार्च 2003 को श्री ट्रेवर पहली बार घर लौटे। उन्होंने अपनी चाबी से दरवाजा खोला। घर में सन्नाटा पसरा हुआ था। हन्ना कभी-कभी दोस्तों से मिलने जाती थी, लेकिन जाते समय मेज पर एक नोट छोड़ जाती थी। उस दिन उसने घर पर ऐसा कोई नोट नहीं छोड़ा था। श्री ट्रेवर ने सोचा कि वह कहीं गई होगी। शायद वह यह लिखना भूल गई हो कि वह कहाँ जा रही है।
घर आने के बाद उन्होंने स्नान किया। उन्होंने कॉफी बनाई और सामने वाले कमरे में सुबह आए लंदन टाइम्स का अंक खोला। लगभग आधे घंटे बाद उनकी पत्नी हिलेरी आईं। उन्होंने मिस्टर फोस्टर से पूछा,
"हन्ना कहाँ चली गई है?"
मुझे भी नहीं पता!
"आपने कोई नोट नहीं छोड़ा?"
नहीं। यह कहीं आस-पास ही होना चाहिए था। आखिरकार हो ही गया!
"लेकिन वह इस तरह का नोट छोड़े बिना कभी बाहर नहीं जाती!" हिलेरी ने चिंतित भाव से कहा। उसने फोन डायरी अपने पति को सौंपते हुए कहा,
"इसमें हन्ना की सहेलियों के फोन नंबर हैं। उनसे पूछ लो, मैं कपड़े धोने के लिए ले आती हूँ।"
मिस्टर फोस्टर ने हन्ना के सभी दोस्तों को फोन किया और हन्ना के बारे में पूछताछ की, लेकिन उन सभी ने कहा कि वह उनके पास नहीं आई थी।
जैसे-जैसे शाम ढलने लगी, दोनों चिंतित होने लगे। अंधेरा होते ही, श्री फोस्टर ने हन्ना के अचानक लापता होने की सूचना निकटतम पुलिस स्टेशन में दर्ज कराई। सूचना मिलते ही, साउथेम्प्टन पुलिस विभाग ने वायरलेस के माध्यम से हन्ना का विवरण आसपास के पुलिस स्टेशनों को भेज दिया।
मिस्टर फोस्टर और हिलेरी के करीबी दोस्तों ने फोन करना शुरू कर दिया। हन्ना की तलाश पूरी रात जारी रही। पुलिस स्टेशन से एक अधिकारी उनसे पूछताछ करने उनके घर आया। उसने पूछा, "क्या उसका किसी के साथ कोई 'अफेयर' था?"
नहीं, लेकिन हमने उस पर कोई पाबंदी नहीं लगाई थी। लेकिन वह हमें बिना बताए इतनी देर तक बाहर कभी नहीं रहती थी!

पूछताछ के लिए आए पुलिस अधिकारी ने हन्ना की तस्वीर मांगी। उन्होंने कहा, "ठीक है। इस तस्वीर की 'प्रतियां' सभी पुलिस थानों में भेजी जाएंगी।"
जब श्री फोस्टर और हिलेरी के पड़ोस के तीन-चार लोगों को पता चला कि हन्ना लापता है, तो वे उनके घर आए। चूंकि दोनों भूखे थे, इसलिए आए हुए दोस्तों ने उन्हें थोड़ा खाना खाने के लिए मजबूर किया।
जैसे-जैसे रात बढ़ती गई, सबकी चिंता बढ़ती गई। सुबह करीब 6:30 बजे फोस्टर का फोन बजा। हिलेरी ने तुरंत रिसीवर उठाया।
"हैलो, मैं हिलेरी फोस्टर हूं।"
‘‘मॅडम, आय एम व्हेरी सॉरी टू इन्फॉर्म यू दॅट, यूवर ‘‘डॉटर’’ हॅज बीन मर्डर्ड!’’
मुझे आपको यह बताते हुए दुख हो रहा है कि आपकी बेटी की हत्या कर दी गई है।
‘‘वॉट? मर्डर्ड? माय गॉड!’’
यह कहते ही हिलेरी बेहोश हो गईं।
हन्ना का शव साउथेम्प्टन के पास एक सुनसान इलाके में मिला था।
स्कॉटलैंड यार्ड पुलिस घटनास्थल पर तुरंत पहुंची। एक "जांच" की गई। शव की जांच के बाद, मृत्यु के सटीक कारण का पता लगाने के लिए उसे "पोस्टमॉर्टम" के लिए भेजा गया। पोस्टमॉर्टम से और भी चौंकाने वाली खबर सामने आई कि हन्ना की गला घोंटकर हत्या की गई थी और मरने से पहले उसके साथ बलात्कार भी किया गया था।
यह खबर असहनीय थी, जिसने माता-पिता के दिलों को छलनी कर दिया।
स्कॉटलैंड यार्ड के जासूस आगे की पूछताछ के लिए मिस्टर फोस्टर और हिलेरी के पास आए।
"क्या आपके घर में कोई अजनबी आ रहा था?"
"नहीं। इसके अलावा, अगर हम दोनों में से कोई भी घर पर न हो और हन्ना उस समय घर पर अकेली हो, तो अगर कोई अजनबी घर में आ जाए, तो उसे खिड़की से बाहर देखने के बाद ही दरवाजा खोलने का निर्देश दिया गया था!"
"वह किन लोगों को जानती थी जो आपके घर आते थे?"
"उसकी चार-पांच सहेलियाँ और दोस्त हुआ करती थीं!"
और कौन?

"कभी-कभी तो 'किराना दुकानदार' मेरे घर पर किराने का सामान भी ले आता था। वो डिलीवरी वाला, मनिंदरपाल सिंह!"
"उसकी क्या उम्र है?"
"यह पैंतीस ही होना चाहिए!"
"मनिंदरपाल सिंह का अंतिम नाम क्या है?"
"हमें उनसे उनका अंतिम नाम पूछने का कभी मौका नहीं मिला। वे बर्मन डिपार्टमेंट स्टोर में काम करते थे। 'डिलीवरी मैन!'"
‘‘ओ. के. SSS!’’
स्कॉटलैंड यार्ड के डिटेक्टिव इंस्पेक्टर एलन वाट तुरंत बर्मन डिपार्टमेंट स्टोर्स पहुंचे। उन्होंने मैनेजर से पूछा,
"क्या मनिंदरपाल सिंह आपके स्टोर में डिलीवरी मैन के रूप में काम करता है?"
‘‘हो’’
"कितने साल?"
"अभी तो सिर्फ एक साल ही हुआ है!"
उनका अंतिम नाम क्या है?
‘‘कोहली! मनिंदरपालसिंग कोहली!’’
वह ग्राहकों तक सामान पहुंचाने के लिए किस वाहन का उपयोग करता है?
"हमारे डिपार्टमेंट स्टोर की डिलीवरी वैन से। वह खुद वैन चलाता है! हम केवल उन्हीं लोगों को काम पर रखते हैं जिनके पास ड्राइविंग लाइसेंस होता है!"
मुझे उसका रिकॉर्ड दिखाओ!
जब किसी विदेशी नागरिक को इंग्लैंड में नौकरी पर रखा जाता है, तो उसकी दो सामने से और एक बगल से ली गई तस्वीरें, उसके उंगलियों के निशान, जन्म प्रमाण पत्र, उसका देश और इंग्लैंड आने से पहले वह जिस स्थान पर रहता था, उसका पता दर्ज किया जाता है। उसके द्वारा दी गई जानकारी, उसका पासपोर्ट, वीजा, उसके करीबी रिश्तेदार, सभी की जाँच उसके द्वारा दी गई जानकारी से की जाती है।
"जहां वह अब है?"
"वह आज पूरे दिन आया ही नहीं!"

जब डिटेक्टिव इंस्पेक्टर एलन वाट ने कहा कि वह नहीं आए थे, तो उनका चेहरा गंभीर हो गया। उन्होंने डिपार्टमेंट स्टोर से ही स्कॉटलैंड यार्ड को कुछ महत्वपूर्ण "संदेश" दिए थे। मैनेजर द्वारा दी गई मनिंदरपाल सिंह की तस्वीर को देखते हुए डिटेक्टिव इंस्पेक्टर एलन वाट ने कहा, "क्या आप किसी कर्मचारी को नियुक्त करने से पहले उसकी पृष्ठभूमि जानते हैं?"
"अगर वह स्थानीय निवासी है, तो वह इसे स्वीकार कर लेगा, लेकिन अगर वह भारतीय है, तो क्या आप उसके अतीत के इतिहास को नहीं समझते?"
‘‘का?’’
"भारत जैसी विशाल जनसंख्या वाले देश से हमें इतनी जल्दी जानकारी कौन उपलब्ध कराएगा?"
"'यह सच है,' उन्हें इस बात का एहसास नहीं है कि पड़ोसी देशों से इतने सारे लोग हर दिन उनके अपने देश में घुसपैठ करते हैं। आप बिल्कुल सही कह रहे हैं!"
"अगर वह काम पर आता है, तो तुरंत हमसे संपर्क करें!"
जासूस एलन वाट एक बहुत ही अनुभवी और कुशल अधिकारी थे। अपराधियों और अपराध करने वालों को पहचानने की उनमें गहरी समझ थी।
अगर आप किसी लापता अपराधी को ढूंढना चाहते हैं, तो आपको जानबूझकर कुछ समय के लिए यह दिखावा करना होगा कि पुलिस विभाग इस मामले की जांच में दिलचस्पी नहीं ले रहा है। अपराधी को लगता है कि पुलिस को मामले की कोई जानकारी नहीं है, और वह धीरे-धीरे भागना शुरू कर देता है।
ऐसा माहौल बन गया था कि हन्ना की हत्या के मामले की जांच नहीं हो रही है। लेकिन हन्ना के माता-पिता ने पुलिस के इस कदम को स्वीकार नहीं किया।
श्री फोस्टर ने डिटेक्टिव इंस्पेक्टर एलन वाट से संपर्क किया।
"श्री वाट, हन्ना के हत्यारे को कब पकड़ा जाएगा?"
"ज़रा ठहरिये!"
"हमें यह पसंद नहीं है। अगर इंग्लैंड में उसके रहने की जगह नहीं है, तो हम भारत चले जाएंगे। मेरी पत्नी हिलेरी और मैं दोनों आपके साथ आने के लिए तैयार हैं! लेकिन हन्ना के हत्यारे को सजा मिलनी ही चाहिए!"

डिटेक्टिव इंस्पेक्टर एलन वाट, हन्ना के माता-पिता की भावनाओं के प्रति सहानुभूति रखते हुए, हत्यारे को खोजने के लिए भारत जाने की अनुमति अपने वरिष्ठों से प्राप्त की।

डिटेक्टिव इंस्पेक्टर एलन वाट, टाइम्स ऑफ इंग्लैंड के वरिष्ठ संवाददाता स्टीफन स्विट्जर, मिस्टर फोस्टर और हिलेरी फोस्टर ब्रिटिश ओवरसीज एयरवेज की फ्लाइट से भारत पहुंचे। भारत पहुंचने से पहले उन्होंने ब्रिटिश हाई कमिश्नर को अपनी यात्रा का उद्देश्य बताया और कहा, "हमें भारत के अखबारों और वरिष्ठ पुलिस विभागों से सहायता की उम्मीद है।" हमें भूसे के ढेर में सुई ढूंढनी है।

डिटेक्टिव इंस्पेक्टर एलन वाट अपने साथ "हन्ना" की हत्या की जांच की फाइल भी लाए थे। इसमें ऐसे दस्तावेज थे जिनसे पता चलता था कि मृतक हन्ना के शरीर पर गिरे खून और उस व्यक्ति के वीर्य की भी जांच की गई थी।

भारत पहुंचने के बाद, लंदन टाइम्स के संवाददाता स्टीफन स्वेइज़र ने दिल्ली और चंडीगढ़ में प्रेस कॉन्फ्रेंस में कहा,

"आजकल अपराध जांच का विज्ञान इतना उन्नत हो गया है कि भले ही किसी ने संदिग्ध अपराधी को अपराध करते हुए न देखा हो, फिर भी परिस्थितिजन्य साक्ष्यों के आधार पर अपराध सिद्ध किया जा सकता है, लेकिन मूल रूप से संदिग्ध को ढूंढना आवश्यक है। यह संभव है कि अपने माता-पिता की इकलौती संतान, 17 वर्षीय निर्दोष लड़की हन्ना का हत्यारा मनिंदरपाल सिंह कोहली हो, लेकिन इसके लिए उसे ढूंढना होगा। अगर हमें भारत के समाचार पत्रों और पुलिस विभाग का सहयोग मिले, तो मुझे विश्वास है कि सात समुंदर पार करने वाला हमारा 'मिशन' सफल होगा।"

केंद्रीय जांच ब्यूरो और प्रमुख समाचार पत्रों ने जांच में हर संभव सहायता प्रदान करने का वादा किया। दिल्ली दूरदर्शन ने मनिंदरपाल सिंह की तस्वीर प्रसारित की और इस विवरण वाले किसी भी संदिग्ध को ढूंढने वाले व्यक्ति से उनसे संपर्क करने की अपील की।

इंग्लैंड में मनिंदरपाल सिंह ने पारंपरिक सिख पोशाक पहनी हुई थी, फिर भी संभवतः उन्हें आसानी से कोई पहचान नहीं पाता, इसलिए उनके बाल, दाढ़ी और मूंछें काट दी गईं। इस तरह बाल कटवाने के बाद मनिंदरपाल सिंह कैसे दिखेंगे, इसकी तस्वीरें भी टेलीविजन पर प्रसारित की गईं।

डिटेक्टिव इंस्पेक्टर एलन वाट ने भारत आने के चौथे दिन दार्जिलिंग जिले के कालिम्पोंग पहाड़ी क्षेत्र में मनिंदरपाल सिंह को गिरफ्तार किया। उम्मीद के मुताबिक, उसने अपना सिर मुंडवा लिया था और दाढ़ी-मूंछें भी काट ली थीं। गिरफ्तारी के दौरान उसने कोई विरोध नहीं किया। चंडीगढ़ पुलिस इंस्पेक्टर गजेंद्र सिंह गिरफ्तारी की कार्रवाई के लिए उनके साथ थे। जब उन्होंने मनिंदरपाल की गर्दन को मजबूती से पकड़ा, तो उसने अपना मुंह खोल दिया।

इंग्लैंड से लौटने के बाद मनिंदरपाल सिंह चंडीगढ़ के पास मोहाली गांव में आ गए थे। उस समय उनके भाई जगजीत सिंह अपनी बुजुर्ग मां को इलाज के लिए पटियाला ले गए थे, लेकिन जब उन्हें पता चला कि पुलिस उनका पीछा कर रही है, तो मनिंदरपाल सिंह परिवार में किसी को भी सूचना दिए बिना मोहाली से भाग गए। वहां से वे नेपाल चले गए। वहां उन्होंने बताया कि उनका नाम डेनिस है और वे पेशे से डॉक्टर हैं। उन्होंने कहा कि वे मूल रूप से बेंगलुरु के रहने वाले हैं और नेपाल के पहाड़ी क्षेत्र में रहने वाले लोगों के जीवन स्तर को सुधारने के उद्देश्य से वहां आए हैं।

आश्चर्यजनक रूप से, स्कॉटलैंड यार्ड ने मनिंदरपाल सिंह को पकड़ने में मदद करने वाले किसी भी व्यक्ति के लिए 45 लाख रुपये का इनाम घोषित किया था और अंग्रेजी अखबार "द सन" ने 5 लाख रुपये का इनाम घोषित किया था। महिला पुलिस अधीक्षक सरोज गजमेट ने न केवल अमूल्य मार्गदर्शन प्रदान किया, बल्कि दार्जिलिंग जिला पुलिस अधीक्षक राजीव मिश्रा ने भी समय-समय पर सहायता प्रदान की।

लेकिन किसी ने भी पुलिस को यह सूचना नहीं दी कि इतना धूर्त मनिंदरपाल सिंह ही वह व्यक्ति है। टेलीविजन पर उसकी तस्वीरें प्रसारित होने के बाद, चंडीगढ़ और दार्जिलिंग पुलिस ने एक गुमनाम फोन कॉल के आधार पर उसका पता लगाया। पुलिस अधीक्षक राजीव मिश्रा से दो थप्पड़ खाने के बाद, मनिंदरपाल सिंह ने पलटवार किया। उसने कहा, “जब मैं यहां डॉ. डेनिस बनकर आया था, तब मैंने एक नेपाली लड़की से शादी भी की थी। उसकी पत्नी का नाम भारती दास दोरजी है।”

जब उसे अपने पति के अतीत के बारे में पता चला, तो उसकी आँखों से आंसू बहने लगे। उसने कहा, "हन्ना और मैं दोनों लड़कियाँ हैं। जिसने भी निर्दोष हन्ना की हत्या की है, उसे मौत की सजा मिलनी चाहिए।"

मनिंदरपाल सिंह का डीएनए परीक्षण किया गया। उनके रक्त, लार और वीर्य की जांच के बाद, उनके उंगलियों के निशान भी लिए गए। इन्हें तुरंत स्कॉटलैंड यार्ड भेजा गया। वहां से पता चला कि ये भारत में लिए गए उंगलियों के निशानों से मेल खाते हैं। मनिंदरपाल सिंह को ब्रिटिश पुलिस के हवाले कर दिया गया है। अब उस पर हन्ना के साथ बलात्कार और हत्या का आरोप लगाया जाएगा। वास्तव में, उसे फांसी दी जानी चाहिए थी, लेकिन ब्रिटेन में एक कानून है जिसके अनुसार हत्या का दोषी साबित होने के बाद भी किसी को फांसी नहीं दी जा सकती।

यह एक मानवीय संगठन की हद से ज़्यादा हरकत है। समाज भला कैसे एक ऐसे हत्यारे को, जिसने एक निर्दोष लड़की का बेरहमी से बलात्कार किया और फिर उसकी हत्या कर दी, अपने ही खर्चे पर तब तक पाल-पोस सकता है जब तक वह मर न जाए? यह तो मानवतावाद का विकृत रूप है!

०-०-०

6. शंकर दादा

शंकरदादा, ये मेरे असली चाचा हैं। शंकरदादा, जिनकी लंबाई पाँच फुट तीन इंच थी, गोरे रंग के थे। उनकी पहचान उनकी लाल, बादाम जैसी आँखों से होती थी। जब उन्हें किसी से डर लगता, तो वे उसे घूरते रहते थे। कभी-कभार ही वे किसी को घूरते थे। उनके चेहरे पर हमेशा मुस्कान रहती थी। वे आमतौर पर किसी के रास्ते में नहीं जाते थे; लेकिन अगर कोई बिना किसी कारण के टेढ़ा रास्ता अपनाता, तो वे उसे अंत

समझ लेते थे। शंकरदादा किसी को मारना नहीं चाहते थे; लेकिन उन्हें इतना गुस्सा आता था कि यह कहना नामुमकिन हो जाता था, "क्यों! क्या कर रहे हो भदवया? मैं तुम्हारी टांग तुम्हारे घुटने से अलग कर दूंगा और तुम्हें ही मार दूंगा!" उनकी बादाम जैसी आँखें बड़ी हो जातीं, उनकी आवाज़ थोड़ी कर्कश हो जाती। बचपन में वे अपने सामने वाले तालाब में कुश्ती लड़कर ताकतवर हो गए थे। जब वे लड़ाई में किसी की गर्दन पकड़ लेते, तो उन्हें ऐसा लगता जैसे उनकी जीभ बाहर निकल आएगी। "नहीं, नहीं, दादा, मैंने आपसे कुछ नहीं कहा, मैंने बस आपसे झूठ बोला," वह बचने के लिए ऐसा कहता था।

शंकरदादा के साथ मेरी बहुत अच्छी बनती थी। मेरे घर से पश्चिम की ओर चार-पाँच घर छोड़कर यादवों का घर था। शंकरदादा सबसे बड़े थे, उसके बाद दिनकरदादा, राजाराम, गणपा और वसंत, दो बहनें - बड़ी जनाबाई और छोटी बेबी। बेबी मेरी माँ की लाडली थी, वह हमारे घर में रहती थी।

शंकरदादा और मेरे मिलने की खास वजह यह थी कि वे वीनस टॉकीज में सिनेमा ऑपरेटर थे। उस समय मैं जॉन काउल्स और नादिया की जोड़ी की फिल्मों का दीवाना था। वीनस टॉकीज में सिर्फ उनकी स्टंट फिल्में ही दिखाई जाती थीं। साथ ही, उस समय टिकट भी बहुत महंगे नहीं थे। थर्ड क्लास का टिकट सिर्फ एक डॉलर का था, जो उस समय चार पैसे के बराबर था; लेकिन मेरे लिए इतना पैसा भी जुटाना मुश्किल था। इसके अलावा, जब तक शंकरदादा वीनस टॉकीज में थे, मैंने कभी भी कोई फाइट फिल्म देखने का टिकट नहीं खरीदा था।

स्नान करने से पहले, शंकरदादा की रोज़ की दिनचर्या यह थी कि वे अपनी बाईस इंच की रैले साइकिल को दरवाजे के सामने एक बोरी पर उल्टा रखते थे और उस पर तेल और पानी लगाकर पहिये की एक तीली चमकाते थे। उनकी साइकिल में डायनेमो लगा हुआ था। क्योंकि उन्हें हर रात डेढ़ बजे से दो बजे के बीच घर लौटना होता था। उस समय कोल्हापुर शहर में नगरपालिका की बिजली नहीं थी। साइकिल की घंटी भी चमकीली थी। साइकिल साफ करने का यह काम खत्म होने के बाद, शंकरदादा पर्दे में ठंडे पानी से स्नान करते थे। सफेद रंग की पैंट, उसी रंग की कमीज, उसके ऊपर नीले रंग का ऊनी कोट और थोड़ी झुकी हुई लाल टोपी। साइकिल पर बैठने से पहले, शंकरदादा पैंट के क्लिप लगाते थे, सीट पर बैठने से पहले एक-दो बार

घंटी बजाते थे और घर पर जो भी निर्देश देना होता था, देते थे। सुबह लगभग ग्यारह बजे, वे थिएटर वापस जाते थे। वहाँ मशीन की मरम्मत होती थी। जब तक वे वीनस टॉकीज में थे, फिल्म चलते समय मशीन कभी बंद नहीं हुई। इसीलिए टॉकी थिएटर के मालिक श्री तैयब अली को शंकरदादा पर बहुत भरोसा और स्नेह था।
शंकरदादा की माता गंगूबाई मेरी माता की बड़ी बहन थीं। बचपन में ही उनकी एक आंख निकाल दी गई थी। मेरी माता और गंगूबाई अक्सर साथ बैठती थीं और अगर उन्हें कोई ज़रूरी बात करनी होती थी, तो वे कन्नड़ में बात करती थीं। दोनों ने अपना बचपन अक्कलकोट में बिताया। दादा सवलाराम शेल्के वहां जेलर थे। कर्नाटक से सटे अक्कलकोट में, बहनें कन्नड़ बोलते समय धीमी आवाज़ में मराठी बोलती थीं।
उस दिन गांगू अक्का ने मेरी माँ से कहा, "शंकर्या ने गोबर खाना शुरू कर दिया है!"
मैं सोने का नाटक कर उनकी बातें छुपकर सुन रहा था। गंगुआक्का ने अपना मुँह मेरी माँ के कान के पास लाकर कहा, "वो दर्जी की पत्नी और वो किराया!" मुझे कुछ समझ नहीं आया। अगली सुबह मैंने अपनी माँ से पूछा, "माँ, कल रात गंगुआक्का क्या कह रही थी?"
माँ ने कहा, "चुप रहो, हम छोटे बच्चे कुछ नहीं पूछते! चलो, नहाओ और बैठकर पढ़ाई करो!" उस उम्र में, जब पढ़ाई शब्द का ज़िक्र होता था, तो मेरे शरीर में एक झुनझुनी सी दौड़ जाती थी। गलियों में, हम अलग-अलग मौसमों में मुस्कुराते हुए गोट्या, विटिडांडू और बटनों से खेलते थे। मुझे हर मौसम में खेले जाने वाले खेलों में बहुत आनंद आता था। मैं इकलौता बेटा था, और चूंकि मेरे पिता का निधन मेरे बचपन में ही हो गया था, इसलिए मेरी माँ चाहती थीं कि मुझे बचपन से ही अच्छे संस्कार मिलें, इसलिए उन्होंने मुझे दुनिया की दूसरी चिंताओं से दूर रखने की कोशिश की।
शंकरदादा विवाहित थे। उनकी एक बेटी और एक बेटा था; लेकिन उनके मर्दाना व्यक्तित्व ने गली की कई युवतियों को आकर्षित किया। इसके अलावा, दर्जी की "सावित्री" लंबे बालों वाली, गोरी और कुछ हद तक सदाचारी थी; लेकिन उसके पति भार्मू दिन भर मशीन पर बैठे रहते और धूम्रपान करते रहते। बीच-बीच में उन्हें खांसी का दौरा पड़ता था। धूम्रपान के कारण उनकी छाती जमी हुई थी, इसलिए सावित्री जैसी युवा लड़की के लिए शंकरदादा के साथ घुलमिल जाना मुश्किल नहीं था।

समय बीतने के साथ-साथ रहस्य खुल गया। सावित्री की माँ भी कोल्हापुर के पुराने बुधवार पेठ में रहती थीं। जब वह अपनी माँ के घर जाती थीं, तो पंद्रह दिन तक नहीं आती थीं; एक-दो दिन रुककर "वीनस" चली जाती थीं। उस समय "स्टॉल" से ऊपर वाली "क्लास" "बॉक्स" कहलाती थी। फिल्म देखने के लिए इस बॉक्स में आने वाले जोड़े फिल्म पर बिल्कुल ध्यान नहीं देते थे। बॉक्स में अंदर से एक दरवाजा होता था, और जब दरवाजा बंद होता था, तो अंदर उनका अपना "सिनेमा" शुरू हो जाता था।
सावित्री, जो स्कूल जाने के कारण माहेर गई थी, एक-दो दिन के लिए वीनस जाती थी। फिल्म शुरू होने के बाद, शंकरदादा के पास आधे घंटे या पंद्रह मिनट तक करने को कुछ नहीं होता था।
पूर्वाभास के अनुसार, सावित्री जाकर बॉक्स में बैठ जाती। चूंकि शंकरदादा वहां के "बॉस" थे, इसलिए अन्य द्वारपाल सावित्री के बारे में ज्यादा बात नहीं करते थे, जो अक्सर थिएटर आती थीं। इसके अलावा, कोई भी शंकरदादा की चाबी लेने की हिम्मत नहीं कर सकता था। एक बार शंकरदादा ने थिएटर में टिकटों के लिए दंगा कर रहे लोगों की पिटाई कर दी थी। "धोपटाने" उस समय का प्रचलित शब्द था। आमतौर पर, कोई भी शंकरदादा का अनुसरण करने की हिम्मत नहीं करता था, जो अपने काम में बेहद मेहनती और ईमानदार थे।
बाद में, गली-मोहल्ले में सावित्री के देहांत की खबर फैल गई; लेकिन कोई भी खुलकर इस बारे में बात नहीं कर रहा था। सावित्री के बेटे की खबर भी फैल गई। दर्जी ने पूरे मोहल्ले के लिए दावत का आयोजन किया। उसकी बूढ़ी माँ पोते के होने से बहुत प्रसन्न हुई।
हमारे घर के सामने एक पानी की टंकी थी। जब सावित्री अपने एक साल के बच्चे को कंधे पर लिए हुए आई, तो गली की औरतें उस नन्हे, गोरे, भूरी आँखों वाले बच्चे को देखकर आपस में फुसफुसाने लगीं, "ये तो चुड़ैल जैसी दिखती है।"
जब मैं सोलापुर में सरकारी वकील के रूप में कार्यरत था, तभी मुझे फोन आया कि शंकरदादा का निधन हो गया है। मैं कोल्हापुर आया। मेरे बचपन की सारी यादें ताजा हो गईं। उस घर के सामने वाले कमरे में शंकरदादा की तस्वीर फूलों की माला से सजी थी। कोने में उनकी 22 इंच की रैले साइकिल धूल से ढकी पड़ी थी।

"क्या बाबा, आज आओगे? नादिया जॉन काउ की नई फिल्म शुरू हो गई है?" शंकरदादा के ये शब्द आज भी मेरे कानों में गूंजते हैं। अब तो बस यादें ही बची हैं।
शंकरदादा, ये मेरे असली चाचा हैं। शंकरदादा, जिनकी लंबाई पाँच फुट तीन इंच थी, गोरे रंग के थे। उनकी पहचान उनकी लाल, बादाम जैसी आँखों से होती थी। जब उन्हें किसी से डर लगता, तो वे उसे घूरते रहते थे। कभी-कभार ही वे किसी को घूरते थे। उनके चेहरे पर हमेशा मुस्कान रहती थी। वे आमतौर पर किसी के रास्ते में नहीं जाते थे; लेकिन अगर कोई बिना किसी कारण के टेढ़ा रास्ता अपनाता, तो वे उसे अंत समझ लेते थे। शंकरदादा किसी को मारना नहीं चाहते थे; लेकिन उन्हें इतना गुस्सा आता था कि यह कहना नामुमकिन हो जाता था, "क्यों! क्या कर रहे हो भदवया? मैं तुम्हारी टांग तुम्हारे घुटने से अलग कर दूंगा और तुम्हें ही मार दूंगा!" उनकी बादाम जैसी आँखें बड़ी हो जातीं, उनकी आवाज़ थोड़ी कर्कश हो जाती। बचपन में वे अपने सामने वाले तालाब में कुश्ती लड़कर ताकतवर हो गए थे। जब वे लड़ाई में किसी की गर्दन पकड़ लेते, तो उन्हें ऐसा लगता जैसे उनकी जीभ बाहर निकल आएगी। "नहीं, नहीं, दादा, मैंने आपसे कुछ नहीं कहा, मैंने बस आपसे झूठ बोला," वह बचने के लिए ऐसा कहता था।
शंकरदादा के साथ मेरी बहुत अच्छी बनती थी। मेरे घर से पश्चिम की ओर चार-पाँच घर छोड़कर यादवों का घर था। शंकरदादा सबसे बड़े थे, उसके बाद दिनकरदादा, राजाराम, गणपा और वसंत, दो बहनें - बड़ी जनाबाई और छोटी बेबी। बेबी मेरी माँ की लाडली थी, वह हमारे घर में रहती थी।
शंकरदादा और मेरे मिलने की खास वजह यह थी कि वे वीनस टॉकीज में सिनेमा ऑपरेटर थे। उस समय मैं जॉन काउल्स और नादिया की जोड़ी की फिल्मों का दीवाना था। वीनस टॉकीज में सिर्फ उनकी स्टंट फिल्में ही दिखाई जाती थीं। साथ ही, उस समय टिकट भी बहुत महंगे नहीं थे। थर्ड क्लास का टिकट सिर्फ एक डॉलर का था, जो उस समय चार पैसे के बराबर था; लेकिन मेरे लिए इतना पैसा भी जुटाना मुश्किल था। इसके अलावा, जब तक शंकरदादा वीनस टॉकीज में थे, मैंने कभी भी कोई फाइट फिल्म देखने का टिकट नहीं खरीदा था।
स्नान करने से पहले, शंकरदादा की रोज़ की दिनचर्या यह थी कि वे अपनी बाईस इंच की रैले साइकिल को दरवाजे के सामने एक बोरी पर उल्टा रखते थे और उस पर

तेल और पानी लगाकर पहिये की एक तीली चमकाते थे। उनकी साइकिल में डायनेमो लगा हुआ था। क्योंकि उन्हें हर रात डेढ़ बजे से दो बजे के बीच घर लौटना होता था। उस समय कोल्हापुर शहर में नगरपालिका की बिजली नहीं थी। साइकिल की घंटी भी चमकीली थी। साइकिल साफ करने का यह काम खत्म होने के बाद, शंकरदादा पर्दे में ठंडे पानी से स्नान करते थे। सफेद रंग की पैंट, उसी रंग की कमीज, उसके ऊपर नीले रंग का ऊनी कोट और थोड़ी झुकी हुई लाल टोपी। साइकिल पर बैठने से पहले, शंकरदादा पैंट के क्लिप लगाते थे, सीट पर बैठने से पहले एक-दो बार घंटी बजाते थे और घर पर जो भी निर्देश देना होता था, देते थे। सुबह लगभग ग्यारह बजे, वे थिएटर वापस जाते थे। वहाँ मशीन की मरम्मत होती थी। जब तक वे वीनस टॉकीज में थे, फिल्म चलते समय मशीन कभी बंद नहीं हुई। इसीलिए टॉकी थिएटर के मालिक श्री तैयब अली को शंकरदादा पर बहुत भरोसा और स्नेह था।

शंकरदादा की माता गंगूबाई मेरी माता की बड़ी बहन थीं। बचपन में ही उनकी एक आंख निकाल दी गई थी। मेरी माता और गंगूबाई अक्सर साथ बैठती थीं और अगर उन्हें कोई ज़रूरी बात करनी होती थी, तो वे कन्नड़ में बात करती थीं। दोनों ने अपना बचपन अक्कलकोट में बिताया। दादा सवलाराम शेल्के वहां जेलर थे। कर्नाटक से सटे अक्कलकोट में, बहनें कन्नड़ बोलते समय धीमी आवाज़ में मराठी बोलती थीं।

उस दिन गांगू अक्का ने मेरी माँ से कहा, "शंकर्या ने गोबर खाना शुरू कर दिया है!"

मैं सोने का नाटक कर उनकी बातें छुपकर सुन रहा था। गंगुआक्का ने अपना मुँह मेरी माँ के कान के पास लाकर कहा, "वो दर्जी की पत्नी और वो किराया!" मुझे कुछ समझ नहीं आया। अगली सुबह मैंने अपनी माँ से पूछा, "माँ, कल रात गंगुआक्का क्या कह रही थी?"

माँ ने कहा, "चुप रहो, हम छोटे बच्चे कुछ नहीं पूछते! चलो, नहाओ और बैठकर पढ़ाई करो!" उस उम्र में, जब पढ़ाई शब्द का ज़िक्र होता था, तो मेरे शरीर में एक झुनझुनी सी दौड़ जाती थी। गलियों में, हम अलग-अलग मौसमों में मुस्कुराते हुए गोट्या, विटिडांडू और बटनों से खेलते थे। मुझे हर मौसम में खेले जाने वाले खेलों में बहुत आनंद आता था। मैं इकलौता बेटा था, और चूंकि मेरे पिता का निधन मेरे बचपन में ही हो गया था, इसलिए मेरी माँ चाहती थीं कि मुझे बचपन से ही अच्छे संस्कार मिलें, इसलिए उन्होंने मुझे दुनिया की दूसरी चिंताओं से दूर रखने की कोशिश की।

शंकरदादा विवाहित थे। उनकी एक बेटी और एक बेटा था; लेकिन उनके मर्दाना व्यक्तित्व ने गली की कई युवतियों को आकर्षित किया। इसके अलावा, दर्जी की "सावित्री" लंबे बालों वाली, गोरी और कुछ हद तक सदाचारी थी; लेकिन उसके पति भार्मू दिन भर मशीन पर बैठे रहते और धूम्रपान करते रहते। बीच-बीच में उन्हें खांसी का दौरा पड़ता था। धूम्रपान के कारण उनकी छाती जमी हुई थी, इसलिए सावित्री जैसी युवा लड़की के लिए शंकरदादा के साथ घुलमिल जाना मुश्किल नहीं था।
समय बीतने के साथ-साथ रहस्य खुल गया। सावित्री की माँ भी कोल्हापुर के पुराने बुधवार पेठ में रहती थीं। जब वह अपनी माँ के घर जाती थीं, तो पंद्रह दिन तक नहीं आती थीं; एक-दो दिन रुककर "वीनस" चली जाती थीं। उस समय "स्टॉल" से ऊपर वाली "क्लास" "बॉक्स" कहलाती थी। फिल्म देखने के लिए इस बॉक्स में आने वाले जोड़े फिल्म पर बिल्कुल ध्यान नहीं देते थे। बॉक्स में अंदर से एक दरवाजा होता था, और जब दरवाजा बंद होता था, तो अंदर उनका अपना "सिनेमा" शुरू हो जाता था।
सावित्री, जो स्कूल जाने के कारण माहेर गई थी, एक-दो दिन के लिए वीनस जाती थी। फिल्म शुरू होने के बाद, शंकरदादा के पास आधे घंटे या पंद्रह मिनट तक करने को कुछ नहीं होता था।
पूर्वाभास के अनुसार, सावित्री जाकर बॉक्स में बैठ जाती। चूंकि शंकरदादा वहां के "बॉस" थे, इसलिए अन्य द्वारपाल सावित्री के बारे में ज्यादा बात नहीं करते थे, जो अक्सर थिएटर आती थीं। इसके अलावा, कोई भी शंकरदादा की चाबी लेने की हिम्मत नहीं कर सकता था। एक बार शंकरदादा ने थिएटर में टिकटों के लिए दंगा कर रहे लोगों की पिटाई कर दी थी। "धोपटाने" उस समय का प्रचलित शब्द था। आमतौर पर, कोई भी शंकरदादा का अनुसरण करने की हिम्मत नहीं करता था, जो अपने काम में बेहद मेहनती और ईमानदार थे।
बाद में, गली-मोहल्ले में सावित्री के देहांत की खबर फैल गई; लेकिन कोई भी खुलकर इस बारे में बात नहीं कर रहा था। सावित्री के बेटे की खबर भी फैल गई। दर्जी ने पूरे मोहल्ले के लिए दावत का आयोजन किया। उसकी बूढ़ी माँ पोते के होने से बहुत प्रसन्न हुई।
हमारे घर के सामने एक पानी की टंकी थी। जब सावित्री अपने एक साल के बच्चे को कंधे पर लिए हुए आई, तो गली की औरतें उस नन्हे, गोरे, भूरी आँखों वाले बच्चे को

देखकर आपस में फुसफुसाने लगीं, "ये तो चुड़ैल जैसी दिखती है।"
जब मैं सोलापुर में सरकारी वकील के रूप में कार्यरत था, तभी मुझे फोन आया कि शंकरदादा का निधन हो गया है। मैं कोल्हापुर आया। मेरे बचपन की सारी यादें ताजा हो गईं। उस घर के सामने वाले कमरे में शंकरदादा की तस्वीर फूलों की माला से सजी थी। कोने में उनकी 22 इंच की रैले साइकिल धूल से ढकी पड़ी थी।
"क्या बाबा, आज आओगे? नादिया जॉन काउ की नई फिल्म शुरू हो गई है?" शंकरदादा के ये शब्द आज भी मेरे कानों में गूंजते हैं। अब तो बस यादें ही बची हैं।
०-०-०

7. सीताराम और अप्पा पवार

उस समय मेरी उम्र लगभग छह या सात वर्ष रही होगी। हम इंदुलकर बंगले के पास, वाघ दरवाजे के नजदीक, नए महल के इलाके में रहते थे। मेरे पिता स्वर्गीय अक्कासाहेब महाराज के घुड़साल में क्लर्क का काम करते थे। उन्होंने छठी कक्षा

तक अंग्रेजी पढ़ी थी। छठी कक्षा तक अंग्रेजी पढ़ने वाले मेरे पिता धाराप्रवाह अंग्रेजी बोलते थे। उस समय यूरोपीय जॉकी होते थे जिन्हें "घुड़साल" कहा जाता था, ब्रिटिश उप-स्थान। घुड़साल के मुख्य अधिकारी किशाबापू थे। किशाबापू अंग्रेजी नहीं समझते थे। इसलिए, अंग्रेजी बोलने वाले मेरे पिता को घुड़साल के कामकाज संभालने पड़ते थे। उन्हें जॉकी के भोजन और आवास की व्यवस्था करनी पड़ती थी।
उस समय, प्रशिक्षक और मालिक, यानी घुड़दौड़ के घोड़ों को प्रशिक्षित करने वाले प्रशिक्षक और घोड़ों के मालिक, सभी एंग्लो-इंडियन थे। अक्कासाहेब महाराज को मेरे पिता पर बहुत भरोसा था। मेरे पिता की दो पीढ़ियाँ छत्रपति की सेवा में थीं। मेरे पिता के चचेरे भाई सुबराओ काका कदम एक निजी प्रबंधक थे, और गणपतराव जामदार काका को छत्रपति के गहनों की देखभाल करने वाला एक बहुत ही विश्वसनीय सेवक माना जाता था।
जब भी पुणे और मुंबई में घुड़दौड़ होती थी, मेरे पिता को घुड़दौड़ के मैदानों की देखरेख करनी पड़ती थी। यह काम बहुत जोखिम भरा था। छत्रपति जी का कदम परिवार पर विश्वास होने का मुख्य कारण छत्रपति परिवार के प्रति उनकी पूर्ण निष्ठा और निस्वार्थ भाव था...!
मेरे पिता का वेतन मात्र पच्चीस रुपये प्रति माह था, लेकिन इस वेतन में से भी हर महीने पाँच से दस रुपये बच जाते थे। वो समय न केवल बहुत सादा था, बल्कि हमें महल से अनाज का मासिक राशन भी मिलता था। अनाज से लेकर नमक और सरसों तक, घर का सारा सामान महल से ही आता था। इसके अलावा, हर शाम आधा किलो मटन और सुबह-शाम को घर से दो शेर शुद्ध दूध मिलता था! इसलिए पैसों की कमी का तो सवाल ही नहीं उठता था।
मेरे पिता, जो एक घुड़दौड़ के अस्तबल में काम करते थे, महल क्षेत्र में "दीवानजी" के नाम से जाने जाते थे। मेरी माँ भी कहती थीं, "दीवानजी आज पुणे गए हैं। वहाँ से वे मुंबई जाएँगे।"
दीवानजी को गरीब बच्चों की शिक्षा में मदद करने का शौक था। घर में दूर के रिश्तेदारों की चार-दो बेटियाँ माँ की देखरेख में काम करती थीं। अरिना को खाना बनाना और लोगों को स्वादिष्ट भोजन खिलाना बहुत पसंद था। वह शाकाहारी खाना तो अच्छा बनाती ही थी, साथ ही मांसाहारी व्यंजन, विशेषकर दमा पुलाव, मोतीचूर

बिरयानी, तांबड़ा और पंढर रस्सा बनाने में भी माहिर थी। उस समय मसाला बनाने के लिए उसे पत्थर की थाली या चूल्हे पर फैलाना पड़ता था। यह अपने आप में ही बहुत मेहनत का काम था। अगर घर में बड़े पैमाने पर खाना बनाना होता, तो दीवानजी सीताराम और अप्पा को बुला लेते, जो हवेली में शिक्षा के लिए रहते थे। दोनों की उम्र सोलह-सत्रह वर्ष थी। अप्पा कोल्हापुर से थे, जबकि सीताराम राधानगरी के पास फेजीवाडे नामक गाँव के एक गरीब परिवार से थे। ये दोनों बच्चे सुबह से शाम तक साथ रहते थे। दोनों ही बहुत बुद्धिमान, ईमानदार और पढ़ाई में विनम्र थे। ये दोनों बच्चे, जिन्हें छत्रपति ने विशेष शिक्षा के लिए आश्रय दिया था, उन दिनों आइना की मदद करने आते थे जब हमारे घर में बड़ा भोजन होता था। वे खुशी-खुशी सारा काम करते थे, मसालों को बांटने से लेकर थालियाँ और कटोरे साफ करने तक। वे मेरी माँ को 'अक्का' कहकर बुलाते थे। भोजन कार्यक्रम समाप्त होने के बाद, मेरी माँ उन्हें भरपेट भोजन कराती थीं। दीवानजी कभी-कभी उन्हें खर्च के लिए चार-दो रुपये दे देते थे।

जल्द ही दोनों बच्चों ने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। अप्पा ने राजाराम कॉलेज में कला विषय में दाखिला लिया, जबकि सीताराम ने विज्ञान विषय में दाखिला लिया।

"परसों दीवानजी, अप्पा और सीताराम आए थे। उन्होंने मुझसे कहा, 'हम विदेश में पढ़ाई करना चाहते हैं, हमें क्या करना चाहिए? दोनों बच्चे गुणी हैं।'"

"सिर्फ इसलिए कि वे सदाचारी हैं, उन्हें विदेश जाने की अनुमति नहीं दी जाएगी। उन्हें अपनी बुद्धिमत्ता पढ़ाई में दिखानी चाहिए!"

"हाँ, बिल्कुल। उसने मैट्रिक परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त किए और फिर कॉलेज के पहले वर्ष में भी। देखिए, थोड़ी कोशिश करने पर शायद अक्कासाहेब महाराज आपकी बात मान लें।"

"महल का वातावरण बहुत ही जादुई है। अगर आप ऐसा कहेंगे तो काम जल्दी हो जाएगा, वरना महाराजा के आसपास के कुछ उपद्रवी बिना किसी झिझक के कुछ भी बोल देंगे और महाराजा का मन बहला देंगे!"

मां ने कहा, "अगर विदेश यात्रा करना उनकी किस्मत में लिखा है, तो मुझे लगता है कि हमें कम से कम एक बार कोशिश तो करनी ही चाहिए!"

दीवानजी बहुत व्यावहारिक थे। उन्होंने अरिना से कहा, "देखो, मैं महाराज से बात करने का मौका जरूर लूंगा! लेकिन..."
"लेकिन क्या?" ऐ ने पूछा।
"थोरा महाराज के आसपास के लोग बहुत स्वार्थी हैं। वे किसी को भी आसानी से सुधरने नहीं देते! अगर आपको बात करनी है, तो आपको अक्कासाहेब महाराज से बात करनी होगी। अगर उन्होंने इसे दिल पर ले लिया, तो थोरा महाराज कोई बदलाव नहीं कर पाएंगे।"
यह महान महाराज राजाराम छत्रपति हैं। शाब्दिक अर्थ में: "सांबा" के अवतार, लेकिन उनकी बहन अक्कासाहेब महाराज हैं, जो स्वभाव से बहुत बुद्धिमान, व्यावहारिक और दयालु हैं!
दीवानजी अवसर की तलाश में थे।
उस दिन, रेस सीजन के दौरान पुणे में 'छत्रपति मेमोरियल कप' रेस आयोजित की जा रही थी। अक्कासाहेब महाराज दूरबीन लिए रेसकोर्स पर मौजूद थे। उनकी पसंदीदा अरबी नस्ल की घोड़ी 'गफाला' उस रेस में भाग लेने वाली थी।
रेस शुरू होने से पहले, अक्कासाहेब महाराज ने दीवानजी को बुलाया। "आनंदव, क्या तुम्हें लगता है कि 'गफला' जीतेगी?"
दीवानजी ने कहा, “आज तक किसी भी घोड़े या घोड़ी ने उसका ‘प्रदर्शन’ नहीं तोड़ा है। मेरे मन में यह बात बैठी है कि महाराज, ‘गफला’ पराजित होगी!”
"तो क्या हमें उस पर दस हजार का दांव लगाना चाहिए?"
‘‘बेशक!’’
दीवानजी की भविष्यवाणियाँ अक्सर गलत नहीं होती थीं। उस दिन भी ऐसा ही हुआ। ग्यारह घोड़ों को पीछे छोड़ते हुए "गफला" जीत गया। अक्कासाहेब महाराज अत्यंत प्रसन्न हुए।
शाम को वे शिव सदन महल के बरामदे में बैठे थे। दीवानीजी ने अवसर का लाभ उठाया। वे अक्कासाहेब के पास गए, उन्हें प्रणाम किया और बोले, "महाराज, मुझे आपसे कुछ कहना है!"
"बोलना? यह क्या है?"

"हमारे महल में दो लड़के पढ़ रहे हैं। दोनों ही होशियार हैं। वे इंग्लैंड जाकर पढ़ाई करना चाहते हैं।"
"तो फिर इसमें समस्या क्या है?"
"इसके लिए, महाराज, एक आदेश होना आवश्यक है।"
"महाराज, छत्रपति राजाराम महाराज द्वारा ऐसी लिखित अनुमति देना आवश्यक था!"
"ठीक है। जब तुम कोल्हापुर लौटो तो मुझे याद रखना, मैं बड़े से यह आदेश ले लूंगा।"
जैसे ही दीवानजी ने सही समय निकाला, छत्रपति का आदेश आ गया। राजमहल ने सीताराम पाटिल और अप्पा पवार, दोनों बच्चों को उच्च शिक्षा के लिए इंग्लैंड भेजने पर सहमति जताई।
उस समय यात्रा नाव से ही करनी पड़ती थी। दीवानजी, मैं और मेरी माँ उन दोनों को विदाई देने के लिए नाव से मुंबई गए। सीताराम ने ऐन के चरणों में सिर झुकाकर कहा, "अक्का, ऐसा तो सिर्फ आपके साथ ही हुआ है! बाबा का ख्याल रखना!"
आरैन भी अपने आंसू नहीं रोक पाई। अप्पा ने दीवानजी और आरैन के चरणों में सिर झुकाकर विदाई ली।
नाव ने एक उपहार दिया और वे दोनों महारानी विक्टोरिया थीं। वे इसी नाव से इंग्लैंड के लिए रवाना हुए।
वे धीरे-धीरे वहीं बस गए। अप्पा पवार अर्थशास्त्र, इतिहास और संविधान में उच्च शिक्षा प्राप्त करना चाहते थे। वहीं सीताराम पाटिल चिकित्सा का अध्ययन करना चाहते थे। उन्होंने पशु चिकित्सा का पाठ्यक्रम चुना। हमारा देश कृषि प्रधान देश है। उस समय खेती के लिए केवल पशुओं का ही उपयोग होता था। ट्रैक्टर और ट्रॉली जैसे यांत्रिक वाहन अभी भारत में नहीं आए थे। "पशु चिकित्सक पशुओं का चिकित्सक होता है। हम राधानगरी क्षेत्र में एक पशु चिकित्सालय खोलेंगे, और इसके अलावा, महाराजा के अश्व फार्म में घोड़ों की जांच के लिए हमें पुणे और मुंबई से डॉक्टरों को बुलाना होगा। उस छत्रपति की कृपा से मैं इंग्लैंड आया हूँ। मुझे उनकी सेवा करने का अवसर भी मिलेगा।" इसी विचार के साथ सीताराम पाटिल ने पशु चिकित्सा का अध्ययन शुरू किया।

अप्पा पवार एम.ए.एल.एल.बी. में हैं। उन्होंने लंदन विश्वविद्यालय से दो-तीन विषयों में डॉक्टरेट की उपाधि भी प्राप्त की। सीताराम पाटिल ने पशु चिकित्सा की डिग्री भी हासिल की। हैरानी की बात यह है कि सीताराम ने अंग्रेजी के अधिकांश छात्रों में प्रथम श्रेणी प्राप्त की।

दोनों ने अपनी पढ़ाई पूरी की और घर लौटने के लिए निकल पड़े। उस समय सीताराम पटेल को उनकी कक्षा में पढ़ने वाले श्वेत (अंग्रेज़) लड़कों ने विदाई दी। भारत के एक गाँव के लड़के को इंग्लैंड आकर एक प्रसिद्ध पशुचिकित्सक बनने पर सम्मानित किया गया।

दीवानजी को महल में एक संदेश मिला। सीताराम पाटिल और अप्पा पवार अपने वतन लौट रहे हैं। उस समय इंग्लैंड से नाव द्वारा भारत पहुँचने में 21 दिन लगते थे। इसके अलावा, नाव अदन और कराची होते हुए स्वेज नहर के रास्ते मुंबई पहुँचने वाली थी।

नाव के रवाना होने के बाद, सीताराम पाटिल अप्पा से कहने लगे, "अप्पा, क्या मुझे उस पार्टी में खाना खाने के बाद से अजीब सा महसूस होने लगा है?"

"अजीब का क्या मतलब है?"

मुझे पेट में अजीब सी बेचैनी हो रही है।

"अरे, नाव से यात्रा करते समय ऐसा सबके साथ होता है।"

"नहीं, मुझे आने में कोई परेशानी नहीं हुई।"

अप्पा ने नाव पर मौजूद डॉक्टर को बुलाया और सीताराम पाटिल को दवाइयाँ और गोलियाँ दीं। लेकिन दवाइयों का उन पर कोई असर नहीं हुआ। उनकी हालत दिन-ब-दिन बिगड़ती चली गई। उनके पेट में भोजन का कोई कण भी नहीं जा पा रहा था। अब अप्पा डर गए। उन्होंने नाव के कप्तान से कहा, “मेरे साथी सीताराम पाटिल की हालत बहुत खराब है। नाव के ईडन पहुँचने के बाद उन्हें वहाँ के अस्पताल में भर्ती कराना पड़ेगा।”

कप्तान ने कहा, "हम नाव को ज्यादा देर तक नहीं रोक सकते। ज्यादा से ज्यादा हम अदन से एक डॉक्टर को बुलाकर नाव पर ही उसका इलाज कर सकते हैं।"

अप्पा अदन के आने का इंतज़ार कर रहे थे। नाव को सुबह 6:30 बजे अदन पहुँचना था। अप्पा ने स्थानीय डॉक्टर को बुलाने का फैसला किया, लेकिन सीताराम पटेल की

नाव के अदन पहुँचने से पहले ही मृत्यु हो गई।
कैप्टन एडन के शव का पोस्टमार्टम कराया गया। वहां मौजूद डॉक्टर ने रिपोर्ट दी कि इस सज्जन को खाद्य विषाक्तता हुई थी। सीताराम पाटिल, जिन्होंने परीक्षा में सभी अंग्रेजी छात्रों में प्रथम श्रेणी प्राप्त की थी, को उनकी ही कक्षा के एक शरारती अंग्रेजी छात्र ने जहर दे दिया था।
सीताराम पाटिल का पार्थिव शरीर मुंबई लौट आया। दीवानजी नाव से उन दोनों को लेने गए थे। यह सुनकर वे अत्यंत दुखी हुए। राजाराम महाराज को इस दुखद समाचार की सूचना दी गई। सीताराम पाटिल के पार्थिव शरीर को कार से फ़ेज़िवद्या ले जाया गया। सीताराम के वृद्ध माता-पिता अपने पुत्र का पार्थिव शरीर देखकर फूट-फूटकर रोने लगे। सीताराम पाटिल के छोटे भाई चिमाजी और लक्ष्मण धाई भी बेकाबू होकर रोने लगे। पंद्रह दिन बाद, अप्पा एक थैला लेकर घर आए और अरिना से कहा, "सीताराम बाबा के आने से पहले उनके लिए कपड़े और खिलौने लाए थे, मैं वह थैला ले आया हूँ।"
उस थैले में एक बड़ा लाल रंग का स्प्रिंग से चलने वाला आग बुझाने वाला मोटर था। मैंने उस स्प्रिंग से चलने वाले मोटर से कई दिनों तक खेला।
अब जब भी मैं 'फायर फाइटर' मोटर देखता हूँ, मुझे सीतारामदादा याद आ जाते हैं। साथ ही, जब मैं राधानगरी जाता हूँ, तो मुझे बांध के पास रुकना पड़ता है। इतने वर्षों बाद भी सीतारामदादा की याद में मेरी आँखें नम हो जाती हैं। सीताराम पाटिल के साथ अध्ययन करने के लिए इंग्लैंड आए अप्पा, शिवाजी विश्वविद्यालय के पहले कुलपति डॉ. अप्पासाहेब पवार थे!
०-०-०

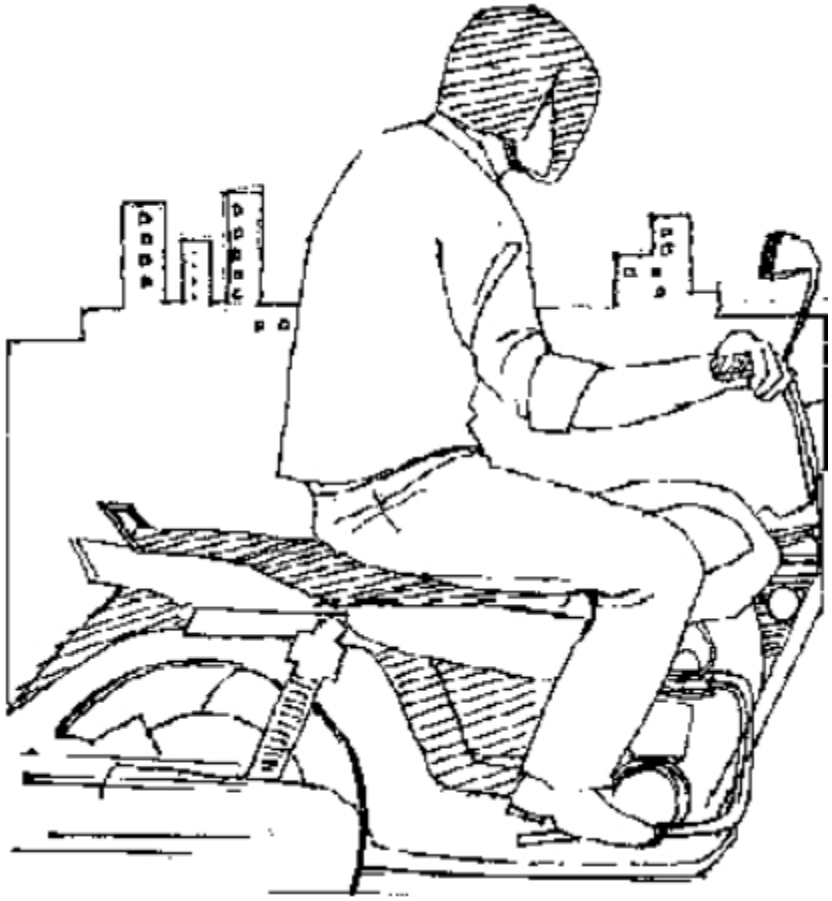

8. हेलमेट के भूत

महाराष्ट्र में एक फतवा जारी किया गया है जिसमें कहा गया है कि विभिन्न जिलों में धीरे-धीरे हेलमेट पहनना अनिवार्य किया जाएगा। कोल्हापुर, नगर, पुणे, सोलापुर सहित महाराष्ट्र के अन्य जिलों में हेलमेट को अनिवार्य किए जाने का कड़ा विरोध हो रहा है और मेरी राय में यह विरोध जायज है।

अब आइए देखते हैं कि हेलमेट अनिवार्य करने का यह नियम कैसे लागू हुआ। पुणे में रहने वाले कुछ गैर-महाराष्ट्र छात्रों ने महाराष्ट्र उच्च न्यायालय में जनहित याचिका दायर की। दो न्यायाधीशों की पीठ ने आदेश दिया कि दोपहिया वाहन चालकों को हेलमेट पहने बिना वाहन नहीं चलाना चाहिए। इन दोपहिया वाहनों के पीछे बैठे यात्रियों, चाहे वे अधेड़ उम्र की महिलाएं हों या बुजुर्ग, के लिए हेलमेट पहनना अनिवार्य है। पहली नजर में यह विचार बेहद अनुचित और हास्यास्पद लगता है, और

यह सच भी है। चाहे कोई बुजुर्ग महिला हो, दादाजी हों या बच्चा, पीछे बैठे सभी के लिए अदालत के आदेश के अनुसार हेलमेट पहनना अनिवार्य कर दिया गया। लोकतंत्र में कानून बनाने का अधिकार विधानसभा और लोकसभा को दिया गया है। न्यायपालिका को यह देखना होता है कि लोकसभा और विधानसभा द्वारा पारित कानूनों का सही ढंग से पालन हो रहा है या नहीं। कानून को लागू करने की जिम्मेदारी सरकार की होती है। लोकतंत्र में ये तीनों संस्थाएं स्वतंत्र होती हैं।

विधायी,
कार्यकारी और
न्यायपालिका के अंगों में
लोकतंत्र और हैं
स्वतंत्र।

ऐसी स्थिति में, अदालत के लिए गहन विचार-विमर्श के बाद अनिवार्य हेलमेट पर फतवा जारी करना अत्यावश्यक था। इस अनिवार्य हेलमेट के कारण लोगों को कितनी असुविधा होगी, और क्या इससे हेलमेट पहनने वालों को गर्दन संबंधी समस्याएं होंगी? दो न्यायाधीशों की पीठ ने इस बात पर विचार नहीं किया कि हेलमेट पहनने वालों के लिए इसे हर जगह अपने साथ ले जाना कितना मुश्किल और श्रमसाध्य होगा।

आईपीएल में, कोई भी फैसला सुनाने से पहले सभी पहलुओं पर विचार करना आवश्यक है। जब अदालत का फैसला और उसका कार्यान्वयन आम जनता पर लागू किया जाना हो, तो अदालत के लिए मामले को सीधे विधानसभा को भेजना उचित होगा। अदालत को जनता द्वारा बहुमत से चुने गए प्रतिनिधियों की राय लिए बिना ऐसे फैसले नहीं सुनाने चाहिए।

आज महाराष्ट्र में चरणबद्ध तरीके से हेलमेट पहनना अनिवार्य किया जा रहा है। लेकिन हर जिले के निर्वाचित नेताओं, विधानसभा और लोकसभा सदस्यों ने हेलमेट अनिवार्य करने के इस कदम का कड़ा विरोध जताया है। इसका मतलब यह है कि अगर हेलमेट अनिवार्य करने का मुद्दा विधानसभा या लोकसभा को सौंपा जाता, तो इसे तुरंत खारिज कर दिया जाता।

महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री विलासराव देशमुख पुणे में पढ़ाई कर रहे थे। उस समय वे मोटरसाइकिल का इस्तेमाल करते थे। सिर्फ पुणे में ही नहीं, बल्कि कभी-कभी वे अपने कुछ दोस्तों को पीछे बिठाकर पुणे से लातूर तक मोटरसाइकिल से यात्रा करते थे। वे भी हेलमेट नहीं पहनते थे। आज भी हेलमेट के बारे में बात करते हुए वे खुलेआम कहते हैं, "हेलमेट पहनना सरकार द्वारा अनिवार्य नहीं किया गया था।" यह अदालती फैसले के जरिए लागू हुआ। शाह बानो का मामला इस बात का जीता-जागता उदाहरण है कि कैसे शासक अपनी सुविधा और स्वार्थ के अनुसार अदालती आदेशों को दरकिनार कर सकते हैं। बहुत से लोग शाह बानो मामले के बारे में नहीं जानते होंगे, इसलिए मैं जानबूझकर इसके बारे में संक्षेप में लिख रहा हूँ।

शाह बानो नाम की एक मुस्लिम महिला ने आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 125 के तहत अपने पति के खिलाफ गुजारा भत्ता के लिए याचिका दायर की। अदालत ने उनकी याचिका स्वीकार कर ली और उनके पति को गुजारा भत्ता देने का आदेश दिया। मामला सर्वोच्च न्यायालय तक पहुंचा। सर्वोच्च न्यायालय ने भी शाह बानो के पक्ष में फैसला सुनाया, लेकिन मुस्लिम धार्मिक नेताओं ने इस फैसले पर असहमति जताई। उन्होंने सिर्फ असहमति ही नहीं जताई, बल्कि सर्वोच्च न्यायालय के आदेश को अपने शरिया कानून के विपरीत बताते हुए फैसले को रद्द कर दिया और केंद्र सरकार के मुस्लिम सांसदों का समर्थन वापस लेने की धमकी भी दी। उस समय स्वर्गीय राजीव गांधी प्रधानमंत्री थे। मुसलमानों का समर्थन खोने के भारी नुकसान के डर से राजीव गांधी ने कानून में बदलाव किया। लोकसभा में एक कानून पारित किया गया कि कोई मुस्लिम महिला आपराधिक अदालत के माध्यम से गुजारा भत्ता नहीं मांग सकेगी।

इसका मतलब यह है कि शासक जनता के साथ हुए अन्याय की परवाह किए बिना अपनी सत्ता बनाए रखने के लिए कानून बदल सकते हैं। अब हेलमेट प्रतिबंध के मामले में भी यही स्थिति उत्पन्न हो गई है। यदि महाराष्ट्र सरकार आगामी सत्र में ऐसा कानून पारित नहीं करती है कि लोगों को हेलमेट पहनने के लिए बाध्य न किया जाए, तो कांग्रेस पार्टी को आगामी चुनावों में भारी नुकसान उठाना पड़ेगा। लेकिन अभी इसमें काफी समय है। यदि हेलमेट प्रतिबंध को तुरंत नहीं रोका गया, तो महाराष्ट्र के मंत्रियों को उनके जिलों से प्रतिबंधित कर देना चाहिए।

यदि न्यायालय जनहित के विरुद्ध फतवे जारी करना बंद नहीं करते हैं, तो यह एक अत्यंत अवांछनीय कदम होगा। यह निर्वाचित प्रतिनिधियों के कानून बनाने के अधिकार का प्रत्यक्ष अतिक्रमण है।

देखिए कैसे अनिवार्य रूप से हेलमेट पहनना दोपहिया वाहन चालकों के लिए समस्याएं पैदा कर रहा है-

1) दो हेलमेट पहनकर मार्केटिंग करना या समाज में घूमना असंभव है।

2) हेलमेट पहनने से वाहनों की आवाज कानों तक नहीं पहुंच पाती, इसलिए दुर्घटनाओं की संभावना बहुत अधिक होती है।

3) स्पोंडिलोसिस जैसी पुरानी गर्दन और रीढ़ की बीमारियों के बिगड़ने की प्रबल संभावना है।

4) अपराधियों की पहचान करना मुश्किल होगा, खासकर उन लोगों की जो सोने का मंगलसूत्र तोड़कर भाग जाते हैं।

5) पुलिस को जल्द ही भ्रष्टाचार का एक और रास्ता मिल जाएगा। पुलिस विभाग में भ्रष्टाचार के सीधे-सादे आरोप हैं। उदाहरण के लिए, डी. पी. शर्मा और राहुल गोपाल जैसे वरिष्ठ अधिकारी हाल ही में भ्रष्टाचार के जाल में फँसे हैं।

6) हेलमेट पहने दोपहिया वाहन चालकों से जुड़े हादसों की संख्या बढ़ रही है। यह संख्या आगे और भी बढ़ने वाली है।

यदि उपरोक्त सभी कारणों का गहराई से अध्ययन किया जाए, तो जनता इस बात से सहमत हो जाएगी कि हेलमेट पहनने की अनिवार्यता केवल जनसंख्या कम करने के लिए लागू की जा रही है।

आज समाज के सामने मौजूद गंभीर मुद्दों को दरकिनार करते हुए, हेलमेट अनिवार्य करने का मतलब है कि सरकार जानबूझकर जनता का ध्यान अपनी अक्षम सरकार में चल रही अराजकता से हटाकर अन्य तुच्छ मामलों की ओर मोड़ रही है।

इसके अलावा, यह जांच करना आवश्यक है कि क्या इस (ए) जनहित याचिका दायर करने वाले व्यक्ति के रिश्तेदारों और दोस्तों के पास हेलमेट निर्माण कारखाना है।

जनता को इस बात पर संदेह है कि अदालतें हेलमेट से जुड़े मुद्दों पर त्वरित निर्णय कैसे दे सकती हैं, जबकि हजारों, यहां तक कि लाखों मामले और नागरिक दावे वर्षों से अदालतों में लंबित हैं।

यदि इन सभी समस्याओं का तत्काल समाधान नहीं किया गया, तो जनता के पास कानून को अपने हाथ में लेने और हेलमेट के भूत को मिटाने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचेगा।

०-०-०

9. हरिमामा जवंडल

मुझे याद है, हरिमामा की उम्र साठ या पैंसठ वर्ष रही होगी। दुबली-पतली काया, गोल चेहरा, छोटी हरी आँखें, सिर पर कसकर बंधी पगड़ी, गले से बंद सफेद कमीज, उसके ऊपर नीली जैकेट, कमर पर साफ धोती और पैरों में सूती चप्पलें - हरिमामा का पहनावा था।

हरिमामा मेरे मामा की हैं।

हरिमामा का घर बहुत ही साधारण है। केवल दो (10x8) कमरे, एक बाहरी शौचालय और स्नानघर। स्नानघर के बगल में एक पानी का जलाशय है, जो साल भर भरा रहता है। हरिमामा ने उस जलाशय में कई प्रकार की मछलियाँ छोड़ी थीं। हरिमामा, जो जल आपूर्ति विभाग से सेवानिवृत्त हो चुकी हैं, कहती हैं कि पानी प्राकृतिक रूप से उपलब्ध था।

घर में ज़रूरत की कुछ ही चीज़ें थीं। उनमें एक लोहे की तह वाली कुर्सी और दरवाज़े के सामने एक लकड़ी की बेंच थी, जहाँ तीन-चार लोग पास-पास बैठ सकते थे। घर में सिर्फ़ दो लोग थे, हरिमामा और मामी। चूंकि मामी हरिमामा के घर में रहती थीं, इसलिए हम उन्हें "मामी" कहते थे; लेकिन उनकी हरिमामा से शादी नहीं हुई थी। गोरी रंगत वाली, 52 साल की मामी के माथे पर एक बड़ा टैटू था। चूंकि उन्होंने माथे पर कुमकुम नहीं लगाया था, इसलिए टैटू साफ़ दिखाई देता था। उनके दोनों हाथों पर भी टैटू बने हुए थे। उनके हाथों पर ज़्यादातर टैटू हरिमामा ने ही बनवाए होंगे, उनके मिलने के बाद। समय के साथ टैटू थोड़े फीके पड़ गए थे, लेकिन मामी के हाथ पर गुदे हुए अक्षर "हरिबा जवंडल" पढ़े जा सकते थे।

आंटी ज्यादा बात नहीं करती थीं। घर में बच्चे न होने से एक अजीब सी खामोशी और शांति छाई हुई थी! निःसंतान दंपत्ति साफ-सफाई को लेकर बहुत सजग होते हैं। मेज पर रखे पीतल के बर्तन, प्लेट और कटोरी शीशे की तरह साफ थे!

हरिमामा को गांव में इधर-उधर घूमने का शौक था! उनके इस शौक की वजह से मुझे, मेरे चाचा गानपा और चाचा तम्मा को काफी खर्च करना पड़ता था।

मैं अंग्रेजी की तीसरी और चौथी कक्षा में था, गणपा और तम्मा मुझसे कुछ साल आगे थे। तीनों को स्कूल बंक करने की आदत थी और वे अपने थैलों में चिथड़े रखते थे। कुछ लोग इन चिथड़ों को "गैलोर" कहते हैं। यह "गैलोर" मैंने खुद बनाया था। गाड़ी की भीतरी पट्टियों को सीधी रेखा में काटा गया था और दोनों पट्टियों के बीच चमड़े का

एक टुकड़ा बांधा गया था ताकि उसमें पत्थर रखे जा सकें। एक "V" आकार की पेड़ की शाखा काटी गई और उसमें एक चिथड़ा बांधा गया। मैं थैलों में गोल-गोल रेतीले पत्थर भरकर तेमलाई के मंदिर ले जाता था, और कभी-कभी रंकाला के पीछे, पाताला इलाके में भी जाता था। यह मत सोचिए कि मैं अब अपनी तारीफ कर रहा हूँ; लेकिन उस उम्र में मैंने इन चिथड़ों से अनगिनत तरह के पक्षियों, छिपकलियों और खारे पानी के मगरमच्छों को मार गिराया था। इतना ही नहीं, मुझे पचगांव रोड पर स्थित कचरा डिपो में चरने आए बगुले को गोली मारने का हुनर भी आ गया था। शाम होते ही मैं पेड़ पर बैठ जाता था और जब बगुले उड़ जाते थे, तो मैं उन्हें कपड़े के टुकड़े से मार गिराता था। अब पचहत्तर साल की उम्र पार करने के बाद भी घर में 1-2 बगुले जरूर रहते हैं।

मुझे अपने बचपन में पक्षियों और जानवरों को मारने का पछतावा है। विश्वप्रसिद्ध पक्षी विज्ञानी सलीम अली को भी बचपन में पक्षियों को मारने का ऐसा ही शौक था; लेकिन उन्होंने पक्षियों को मारना छोड़ दिया और पक्षियों का इतना गहन अध्ययन किया कि दुनिया उनकी बचपन की गलतियों को भूल गई। वे विश्वप्रसिद्ध पक्षी विज्ञानी बने।

एक बार जब हम तीनों रंकाला में थे, तो विपरीत दिशा से आ रही हरिमामा ने हमें देख लिया। हम ईंट के निशाने पर राइफल से निशाना लगाने की प्रतियोगिता कर रहे थे। हरिमामा ने हाथ में पकड़ी छतरी नीचे रख दी, पास आकर बोलीं, "तुम कहते हो कि घर पर पढ़ाई करते हो, और स्कूल छोड़कर ये धंधा करते हो? बाबा, अब घर आ जाइए, मैं शांताबाई को आपके धंधे के बारे में बता दूंगी।"

मेरे छोटे भाई को देखकर हरिमामा ने कहा, "तुम गधे, कम से कम भैंसों की देखभाल करना तो सीख लो! इस लड़के को क्यों बिगाड़ रहे हो?"

मेरे रिश्तेदारों को बचपन से ही मुझसे कुछ उम्मीदें रही होंगी। बचपन से ही मुझे किसी ने मूर्ख नहीं कहा। यहां तक कि दीवानजी (पिता) और माताजी भी मुझे "अरे! बाबा" कहकर पुकारते थे।

उस शाम जब हम घर लौटे, तो खूब बातें हुईं। हरिमामा, पुलिस इंस्पेक्टर के वेश में, अपनी जांघों पर हाथ फेरते हुए और पैरों के तलवों पर हाथ रखते हुए बोलीं, “उनसे पूछो, सच है या झूठ?” मेरी माँ ने मुझे समझाया, “बच्चों का स्कूल बंक करना ठीक

नहीं है! बड़े होकर उन्हें पछतावा होगा," वगैरह; लेकिन ये घटनाएँ बार-बार दोहराई जाती रहीं। एक बार तेमलाई के पास, एक बार यल्लामा नदी पर, जब हम जाल से मछली पकड़ रहे थे, और एक बार पंचगंगा नदी के किनारे, हरिमामा हमें वहीं पकड़ लेतीं। ऐसा लगता था मानो हरिमामा हमेशा हमारे साथ ही हों।

हरिमामा को थप्पड़ मारने का बहुत शौक था। चाहे कोई छोटी सी घटना ही क्यों न हो, वो उसके बारे में आधे घंटे तक बात करते रहते थे। उनकी कल्पना शक्ति इसमें उनकी मदद करती थी। इस बीच, मैं आँखें बंद करके स्कूल में ध्यान दे रहा था। उस समय यूरोप में द्वितीय विश्व युद्ध शुरू हो रहा था। अखबारों में युद्ध की खबरें छप रही थीं। हरिमामा उन्हें पढ़ते और अपनी कल्पना शक्ति का इस्तेमाल करते हुए हमारी गली में आकर दूसरों को वो खबरें सुनाते थे।

उस समय मेरी चाची, उनकी बेटियाँ और बहुएँ, जो पड़ोस के रिश्तेदारों की पत्नियाँ थीं, लावियार पेठ में रहती थीं। हरिमामा, मानो अभी-अभी युद्ध के मैदान से लौटी हों, बोलीं, "मैं आपको क्या बताऊँ, हिटलर ने इतनी बड़ी तोपें तैयार कर रखी हैं कि अगर वह जर्मनी में बैठ जाए, तो वह उन तोपों से लंदन शहर को तबाह कर देगा।"

उस दिन, मैंने उनकी थपथपाहट सुनी और कहा, “लेकिन हरिमामा, जर्मनी और इंग्लैंड के बीच सैकड़ों मील की दूरी है।” हरिमामा को मेरा बीच में पड़ना पसंद नहीं आया। उन्होंने मुझसे कुछ नाराज़गी से कहा, “क्या जानते हो बाबा? आज जर्मनी दुनिया की सबसे बड़ी शक्ति है।” “लेकिन हरिमामा, इंग्लैंड, अमेरिका और रूस एक तरफ हैं। हिटलर सफल नहीं होगा।” हरिमामा ने हाथ हिलाते हुए और मुझे बुलाते हुए कहा, “क्या तुम्हें पता है कि जर्मन वायुसेना कितनी बड़ी है?”

मैंने कहा, "वहाँ सौ या पाँच सौ विमान होंगे! अरे! जर्मनी के पास तो पाँच हज़ार विमानों का बेड़ा है! एक दिन, भयंकर आग की तरह, हिटलर इंग्लैंड, फ्रांस और अमेरिका को दुनिया के नक्शे से मिटा देगा।"

"यह कैसे?" मैं जानबूझकर हरिमामा को समय-समय पर चाबी देता रहता था। हरिमामा पूछतीं, "क्या तुम्हें पता है हिटलर का हवाई अड्डा कहाँ है?"

"जर्मनी में!" "अरे! हिटलर का हवाई अड्डा पृथ्वी से चालीस मील दूर अंतरिक्ष में है।" "अंतरिक्ष में हवाई अड्डा? यह कैसे संभव है?" "जर्मनों के लिए क्या असंभव है? अगर आप किसी वस्तु को उस बिंदु तक ले जाते हैं जहाँ पृथ्वी का गुरुत्वाकर्षण समाप्त

होता है, तो वह स्थिर रहेगी, क्या आपको नहीं लगता कि हमने आपको स्कूल में यही सिखाया था?" "लेकिन आपने यह कैसे तय किया कि यह गुरुत्वाकर्षण बल चालीस मील पर समाप्त होता है?"
लेकिन अब, मेरी शंकाओं से हरिमामा थोड़ी नाराज़ हो गईं और बोलीं, "बाबा, मैं तुमसे कह रही हूँ, अगर तुम्हें यह सच नहीं लगता, तो चुप रहो। जब मैं बोल रही हूँ तो मुझसे कोई भी अनावश्यक सवाल मत पूछो।"
"ठीक है, मैं तुम्हारे पास बैठूंगा और सुनूंगा। तुम अपना युद्ध घोष जारी रखो।"
मेरी पूछताछ का हरिमाम पर कोई असर नहीं हुआ। उस दिन भी, उन्होंने मेरी मौजूदगी को नजरअंदाज करते हुए अपनी बकबक जारी रखी।
"हाँ, तो आप क्या कह रहे थे? हिटलर ने आसमान में अपना हवाई अड्डा बना लिया है। उसने वहाँ एक हज़ार एक विमान तैनात कर रखे हैं। जर्मनी में एक विशाल दूरबीन बनाई गई है। उसे उस हवाई अड्डे पर ले जाया गया है। उस दूरबीन के ज़रिए जर्मन साफ़-साफ़ देख सकते हैं कि यूरोप के किस देश में दुश्मन के ठिकाने कहाँ हैं! और फिर, अंतरिक्ष अड्डे से विमान नीचे आकर दुश्मन के ठिकानों को नष्ट कर देंगे! इसे ही जर्मनी का टैंक कहते हैं!"
मैं एक तरफ बैठा था। मेरे चाचा गणपा मेरे बगल में बैठे थे। हरिमामा की तेज़ थापा की आवाज़ सुनते हुए, मैं दोनों हाथों के अंगूठों से कुछ लपेटने का इशारा कर रहा था। गणपा ने मुझसे धीरे से कहा, "क्या कर रहे हो बाबा?" "गणपतराव हरिमामा की थापा की गड्डी लपेट रहे हैं। माघ काल से अब तक तीन-चार गड्डी लपेट चुके हैं। इसे लपेटकर अपनी जेब में रख लो!"
मेरे जवाब पर गणपा हँस पड़ा। वो थोड़ा ज़ोर से हँसा। हरिमामा का ध्यान उसकी ओर गया। हरिमामा ने हमें इन लड़कों का मज़ाक उड़ाने के लिए डाँटा और कहा, "अरे, यहाँ से चलते हैं! हमें नहीं पता दुनिया में क्या हो रहा है। चलो यहाँ से चलते हैं!"
गली की साधारण महिलाओं को हरिमामा बहुत विद्वान लगती थीं।
हरिमामा काफी दिनों से घर नहीं आई हैं। उनकी तबीयत खराब समझकर मेरी मां और मौसी उन्हें घर पर देखने गईं। मेरी मां ने मुझसे कहा, "हरिमामा अब भरोसेमंद नहीं रहीं। अस्थमा की वजह से वे बहुत कमजोर हो गई हैं। बाबा, कृपया एक बार आकर उन्हें देख लीजिए।"

मैं चली गई। आंटी ने हरिमामा के कान में चिल्लाकर कहा, जो तकिये पर सिर पीछे झुकाकर बैठी थीं। "शांताबाई के पिता यहाँ हैं," हाँफती हुई हरिमामा ने कहा, "मैं तो बस..."

कुछ देर बाद, बड़ी मुश्किल से, उन्होंने अपना सिर मेरी तरफ घुमाया और रुककर कहा, "मन लगाकर पढ़ाई करो, नाम कमाओ। तुम्हारी माँ ने तुम्हारे पिता की पीठ पीछे बहुत कष्ट सहकर तुम्हें पढ़ाया है। उन्होंने तुम्हें बचपन से पाला-पोसा है। उस माँ की दयालुता को कभी मत भूलना।" अपने जीवन में पहली बार, हरिमामा ने एक समझदार व्यक्ति की तरह बात की।

०-०-०

10. प्रिया तेंदुलकर

जब मैंने ऑल इंडिया रेडियो पर प्रिया तेंदुलकर की मृत्यु की खबर सुनी, तो मुझे वास्तव में विश्वास नहीं हुआ; लेकिन जब लगभग नौ बजे अखबार आया, तो मुझे प्रिया की तस्वीर के साथ आई खबर पर विश्वास करना पड़ा।

पुरानी यादें ताजा हो गईं। बीस साल पहले, एक फिल्म निर्माता के बुलावे पर मैं शालिनी सिनेटोन गया था। वहाँ दफ्तर के सामने, उन्नीस-बीस साल की एक युवती पीपल के पेड़ की डाल पर बैठी थी। मेरा ध्यान उसकी ओर गया। दुबली-पतली, सीधी नाक, चमकीली आँखें और कंधे तक बॉब कट वाली वह युवती नीले रंग का चूड़ीदार पहने थी। उसके पैरों में उसके कपड़ों के रंग से मिलती-जुलती सैंडल थीं। उसके हाथ में एक मोटी अंग्रेजी उपन्यास थी। मैं सोच रहा था, "यह कौन हो सकती है?" जब उसने मुझे गौर से देखा, तो उसने पूछा-

"आप बाबा कदम हैं, है ना?"

"जी हाँ! आपने मुझे कैसे पहचाना?"

मैं आपकी 'फैन' हूँ। मेरा नाम प्रिया तेंदुलकर है!

जहां वह बैठी थी, वहां आकर मैंने कहा, "लेकिन क्या आप मुझे पहचानती हैं?"

"इसमें मुश्किल क्या है?" "हर उपन्यास के पीछे आपकी एक तस्वीर होती है, है ना?"

मैंने पूछा, "क्या आप मुंबई में थे?"

"होऽऽऽऽ!"

"यह कैसा है?"

"गोलीबारी के लिए आओ!"

"महान!"

"लेकिन मुझे लगता है कि आज यहां कोई गोलीबारी नहीं हो रही है!"

"जी हां, शूटिंग दोपहर 2:30 बजे प्रभाकर स्टूडियो में होगी। यहां नहीं।"

मैंने घड़ी देखी। साढ़े बारह बज रहे थे। मैंने प्रिया से कहा, "मुझे यहाँ एक चर्चा के लिए बुलाया गया है। जैसे ही वह काम खत्म होगा, मैं प्रभाकर के यहाँ तुम्हारी शूटिंग देखने आऊँगा!"

"अरे, लेकिन मेरी भूमिका इतनी महत्वपूर्ण नहीं है, मैं तो बस अपने पूरे मेकअप के साथ नायिका के पीछे भागना चाहती हूँ!"
"शुरुआत में चीजें इसी तरह करनी पड़ती हैं।"
मैंने इस तरह से बात की मानो मेरे चार या छह उपन्यासों पर फिल्में बनने से मेरा अनुभव और भी समृद्ध हो गया हो।
"मैंने आपके उपन्यासों पर आधारित फिल्में देखी हैं, और निर्माता और निर्देशक आपके अच्छे उपन्यासों के लिए लंबे समय से इंतजार कर रहे हैं।"
"आपने बिल्कुल वही कहा जो मैं सोच रहा था।"
मैंने मुस्कुराते हुए कहा।
पहले परिचय न होने के बावजूद प्रिया ने सहजता से बात की। उसकी आँखों की चमक उसके आत्मविश्वास को दर्शाती थी।
जिस निर्माता ने मुझे चर्चा के लिए आमंत्रित किया था, वह कभी आया ही नहीं।
मैं प्रिया के साथ प्रभाकर स्टूडियो आया था। वहाँ मेरी मुलाकात बी. मजनालकर से हुई, जो एक अभिनेता थे और कभी-कभार कॉमेडी फिल्मों में भूमिकाएँ निभाते थे।
पता नहीं उस दिन क्या संयोग था, प्रिया की प्रभाकर स्टूडियो में होने वाली शूटिंग भी रद्द हो गई।
प्रिया ने चेहरे पर असंतोष का भाव लिए कहा, "समय की सरासर बर्बादी!"
प्रिया, बी. मजनलकर और मैंने कैंटीन में साथ में चाय पी। उस समय, साथ में प्याज के पकौड़े भी परोसे जा रहे थे। बी. मजनलकर ने प्रिया से कहा,
"क्या आप कोल्हापुरी भजिया का 'टेस्ट' देंगे?"
"नहीं, धन्यवाद, लेकिन मैं इस आदमी के घर का सफेद चिकन शोरबा चखना चाहता हूँ!"
मैंने कहा, "मैं इसे आज ही करने की योजना बना रहा हूँ।"
"नहीं, धन्यवाद, अगली बार। मुझे कल मुंबई में एयर होस्टेस की नौकरी के लिए इंटरव्यू का बुलावा आया है! यह मेरा बहुत पुराना सपना है! मुझे आज रात ट्रेन से जाना होगा।"
मैंने कहा, "आप उस नौकरी के लिए बिल्कुल उपयुक्त हैं।"

हम स्टूडियो परिसर में बैठे और लगभग तीन घंटे तक बातें करते रहे। बातचीत के दौरान प्रिया ने मुझे अपनी पसंद-नापसंद के बारे में बताया। उन्होंने यह भी बताया कि जन्म से ही उनके दिल में एक छोटा सा छेद है, इसलिए उन्हें खाने में नमक बिल्कुल नहीं डालना पड़ता। जब उन्होंने कहा कि उन्हें गाड़ी चलाना बहुत पसंद है, तो मैंने पूछा, "क्या आप मुंबई में भी गाड़ी चलाती हैं?"
"हाँ, आपको एक बार मेरी परीक्षा लेनी चाहिए!"
मैं कभी-कभार मुंबई आता हूं। लेकिन मुझे वहां दो दिन से ज्यादा रुकना पसंद नहीं है।
प्रिया ने दिल खोलकर मुस्कुराते हुए कहा, "भले ही मेरा जन्म और पालन-पोषण मुंबई में हुआ हो, लेकिन मुझे पूरी उम्मीद है कि एक दिन मैं मुंबई से हमेशा के लिए निकल पाऊंगी।"
उसके बाद मैं मुंबई में प्रिया के घर उससे मिलने गया। उसने अपने पिता, श्री विजय तेंदुलकर, और मेरा परिचय कराया। लेकिन उन्होंने बस हल्की सी मुस्कान दी। वे स्वभाव से कुछ "संकोची" प्रतीत हुए।
प्रिया ने उनसे कहा, "पापा, क्या आप आज प्रीमियर में नहीं आ रहे हैं?"
"नहीं, मैं लिखना चाहता हूँ। तुम लिखो।"
"प्रिया, प्रिया," उसकी बहन ने पुकारा। "ओह, जयराम का बेटा तुम्हें बहुत याद कर रहा है।"
प्रिया की बहन एक प्यारे से साढ़े तीन साल के लड़के को हमारे पास लेकर आई। प्रिया को देखते ही वह लड़का दौड़कर उसके पास आ गया। प्रिया ने मुझसे पूछा, "क्या आप जानते हैं कि यह किसका हाथ है?"
"किसका?"
"यह जयराम हार्डिकर का बच्चा है, जिसकी परसों कोल्हापुर के पास एक दुर्घटना में शांताबाई जोगा के साथ मृत्यु हो गई थी! यह तब से मेरे पास ही है!"
बोलते समय वह अपनी घड़ी देख रही थी। प्रिया ने मुझसे पूछा, "क्या पापा आज मेरे साथ प्रीमियर में आ रहे हैं?"
"जाओ, मैं भी कहीं और नहीं जाना चाहता।"

प्रिया ने बच्चे को उसकी बहन को वापस सौंप दिया और मुझसे कहा, "चलो, मैं यहाँ हूँ।"
प्रिया बिना ज्यादा सज-धज के आई। वो गाड़ी चलाने के लिए बैठ गई; मैं उसके बगल में बैठ गया। वो मुझसे बातें कर रही थी। मैं मुंबई में दो ऐसी महिलाओं को जानता था जो बहुत ही सलीके से गाड़ी चलाती थीं। एक थीं पद्मा चव्हाण और दूसरी थीं प्रिया तेंदुलकर!
प्रिया ने मुझसे पूछा, "क्या चलते समय आप थोड़ा लंगड़ाते हैं?"
मैंने कहा, "मेरे दोनों घुटनों में गठिया है!"
वाह, इसीलिए तो आप इतना अच्छा लिखते हैं!
"मेरी लेखनी का गठिया से क्या लेना-देना है?"
"अरे, हम उस बीमारी को गठिया नहीं कहते, हम उसे सिर्फ 'गठिया' कहते हैं। पी. एल. पडगांवकर जैसे प्रसिद्ध लेखक भी इससे बच नहीं पाए हैं।"
प्रिया की बैठकें चल रही थीं। पत्राचार जारी था। मैंने एक बार उससे पूछा,
"प्रिया की शादी कब होगी?"
"शादी?" प्रिया ने जोर से हंसते हुए कहा।
"पापा, मैं शादी नहीं कर सकती, और अगर कर भी लूं तो वो ज्यादा दिन नहीं टिकेगी!"
"क्यों नहीं!"
"मेरा स्वभाव! पिताजी, एक ऐसा युवक जो मुझे जानता हो और मेरी गरिमा का ख्याल रखेगा, अभी पैदा होना बाकी है।"
प्रिया का विवाह हुआ, लेकिन यह अल्पकालिक रहा। इसके बाद, प्रिया ने साहित्यिक कार्यों पर ध्यान केंद्रित किया और मराठी साहित्य में ऐसी रचनाएँ रचीं जिन्होंने अमिट छाप छोड़ी। उन्होंने टीवी धारावाहिकों और फिल्मों में भी अपनी प्रतिभा का प्रदर्शन किया।
मैंने उसे सात-आठ साल से नहीं देखा था, इसलिए मैंने डेढ़ साल पहले उसे एक लंबा पत्र भेजा, जिसमें मैंने उसकी कुशलता की कामना की और अंत में लिखा, "प्रिया, मैं जानना चाहता हूँ कि तुम मेरे घर सफेद चावल खाने कब आओगी!"

यह पता लगाने में पंद्रह दिन लग गए कि पत्र उस तक पहुंचा या नहीं, लेकिन एक रात लगभग 11:15 बजे, मैरी ने मुझे मेरी आधी नींद से जगाया और कहा,
“प्रिया मुंबई से बोल रही है,” मैं उठा और रिसीवर कान से लगा लिया। प्रिया डेढ़ घंटे तक फोन पर बोलती रही। उसने मुझसे कहा, “मैंने तुम्हारा पत्र दस बार पढ़ा होगा, उसमें लिखा है कि अगर तुम काम के सिलसिले में कोल्हापुर आओ तो मुझसे मिलना। लेकिन अगर काम नहीं भी मिला तो भी मैं खास तौर पर तुमसे मिलने कोल्हापुर आऊंगी। मैं तुम्हारी दोस्ती कभी नहीं भूलूंगी।”
लेकिन दिन निकलने से पहले ही प्रिया ने दुनिया को अलविदा कह दिया। अब बस उस "उज्ज्वल" और "दयालु" इंसान की यादें और उसका आखिरी पत्र ही बाकी हैं।
ति. बाबांस,
सा. न.
अपने पुराने पत्रों को देखते हुए मुझे आपका लिखा हुआ एक पत्र मिला जो आपने मुझे 1981 में लिखा था। इसका मतलब यह नहीं है कि मैं आपको भूल गया हूँ। आपने मेरे जीवन के एक कठिन समय में मेरी अमूल्य सहायता की थी, जिसका एहसान मैं कभी नहीं चुका सकता। यह मेरे जीवन भर मेरे साथ रहेगा। आपके साथ बिताए पलों की यादें मेरे लिए उतनी ही अनमोल हैं जितनी कि मेरा पसंदीदा खाना। लेकिन आज मुझे वह पत्र मिला और मुझे लिखने की इच्छा हुई। मैंने सोचा, बाबा मुझे भूले नहीं होंगे। लिखने में क्या बुराई है?
आप कैसे हैं? आपके पैर कैसे हैं?
कोल्हापुर आने का मौका मिलना मुश्किल है। मैंने कभी मराठी फिल्म निर्माताओं को अपना नहीं माना, और अब तो ऐसा सोचना नामुमकिन ही है। लेकिन मैं लंबे समय से आपके उपन्यास पर आधारित फिल्म में काम करना चाहता हूँ। यह कहने की हिम्मत करने के लिए मुझे माफ़ करना। मैं इंतज़ार करूँगा। अंत तक।
मैं आपसे विशेष रूप से मिलने के लिए कोल्हापुर आना चाहता हूँ। आने से पहले मैं आपको सूचित कर दूंगा।
मैं आपकी तस्वीरें देखना चाहता हूँ। मैं आपको अपनी तस्वीरें दिखाना चाहता हूँ। मेरी कहानियों का संग्रह प्रकाशित हो रहा है। मैं उसे लेकर आऊंगा और आपके चरणों में अर्पित करूंगा।

मैं महान लेखक श्री बाबा कदम का सदा ऋणी रहूंगा, जिन्होंने मुझे एक महान व्यक्ति की तरह माना, जबकि मैं कोई खास व्यक्ति नहीं था।
प्रकृति का ख्याल रखें।
अगर आप समय मिलने पर मुझे पत्र लिखें, तो मैं उसे आपके अन्य पत्रों की तरह ही संभाल कर रखूंगा।

हार्दिक शुभकामनाओं सहित
आपका
प्रिया

०-०-०

11. "अर्देशित खुरोदी"

1966 में मेरा तबादला बारशी में हो गया, लेकिन बारशी का कार्यभार संभाले बिना ही मेरा तबादला वापस सोलापुर शहर, नंबर 2, न्यायिक न्यायालय में हो गया। श्रीमती मैरी ने कॉलेज में दाखिला ले लिया। चिरंजीव उमेश बारशी के हाई स्कूल में पढ़ रहे थे। दोनों की पढ़ाई में कोई बाधा न आए, इसलिए मैंने सोलापुर में अकेले रहने का फैसला किया। बारशी के तत्कालीन मेयर श्री भाऊसाहेब जादबुके ने मुझे सोलापुर स्थित अपने विश्राम गृह, जयशंकर मिल में रहने की अनुमति दी। जादबुके का विश्राम गृह सदर बाजार क्षेत्र में "किनारा" नामक बंगले में था।

मुझे डेढ़ साल सोलापुर में रहना पड़ा। बाद में मेरा तबादला वापस बारशी होना था। मुझे होटल या रेस्तरां का खाना बिल्कुल पसंद नहीं था। मेरी ज़रूरतें बहुत कम थीं। सुबह एक पतली ज्वार की रोटी और शाम को आधी रोटी। सुबह चावल नहीं, लेकिन शाम को एक कटोरी चावल। मैं हर बार अदालत से आते समय आधा पाव मटन लेकर आती थी और उसे चूल्हे पर पकाती थी। श्रीमती मैरी मुझे खूब चटनी, मसाले आदि देती थीं। मैं मांस बहुत अच्छे से पका सकती हूँ। चिकन करी, मटन, सूखे कटलेट, कभी-कभी मटन स्टू, मटन को भजा के साथ पकाती थी! सोलापुर पुलिस विभाग मेरी इस आदत को समझ गया। फिर सोलापुर तालुका के फौजदार, जेल रोड पुलिस स्टेशन के फौजदार, कभी-कभी शहर के डिप्टी स्पेशलिस्ट, गृह निरीक्षक आदि मेरे विश्राम गृह में खाना खाने आने लगे। मैं भी कभी-कभार उनके घर जाती थी। सोलापुर में डेढ़ साल बहुत खुशी भरे रहे। उन डेढ़ सालों में मैंने चार बच्चों को जन्म दिया। मेरे उपन्यास ‘‘इंसाफ’’ का विमोचन सोलापुर के पुलिस परेड ग्राउंड में मुख्यमंत्री वसंतराव नाइक द्वारा बड़े धूमधाम से किया गया था। उस समय सोलापुर के डीएसपी वी. आर. द्रविड़ आईपीएस थे! वे मेरे प्रति बहुत लालची थे।

इस बाज़ार क्षेत्र में कई सेवानिवृत्त रेल कर्मचारी रहते थे। उनमें से एक 77 वर्षीय पारसी सज्जन थे जिनका नाम अर्देशित खुरोदी था। वे रेलवे इंजन चालक के पद से सेवानिवृत्त हुए थे। एक बार किराने की दुकान के मालिक प्रकाश पारस्वत मुझे

अर्देशित खुरोदी के घर ले गए थे। जाने से पहले प्रकाश ने मुझे उस सज्जन के बारे में बहुत सी जानकारी दी थी।
"अरे, ये बूढ़ा आदमी तो थोड़ा पागल है!"
"रहने दो, मुझे ऐसे लोगों के स्वभाव का अध्ययन करना अच्छा लगता है। पागल होने का क्या मतलब होता है?"
इस बात से कोई सहमत नहीं है। दिल्ली में उसका एक बड़ा बेटा है। वह डेयरी फार्मिंग में उच्च शिक्षा प्राप्त करके स्कॉटलैंड आया है। दिल्ली में उसका एक बड़ा बंगला है। उसके पास गाड़ियाँ हैं, घर में नौकर-चाकर हैं। बच्चे की माँ अंधी है। वह चाहती है कि उसका पिता उसके साथ रहे, लेकिन यह बूढ़ा बहुत जिद्दी है। "तेरी शान, तेरी खूबसूरती, तुझे लखलभ" कहकर पुकारता है! बीस साल पहले वह खुरोड़ी की एक लड़की, "डॉली" के साथ सोलापुर में रहने आया था। पहले वह पुलिस विभाग के लोगों से दोस्ती रखता था, लेकिन विक्रम देशमुख नाम के एक जवान सिपाही से प्यार हो जाने के बाद "डॉली" बूढ़े को छोड़कर भाग गई। तब बूढ़े ने आईजी और डीआईजी से अपील की। देशमुख के खिलाफ धारा 363 के तहत मामला भी दर्ज किया गया, लेकिन डॉली के बालिग होने के कारण अदालत ने देशमुख को बरी कर दिया। तब से, जब भी वह खाकी वर्दी में किसी को देखता है, बूढ़ा उसे "भांचोड़, हरामजादे" जैसी गालियाँ देता है। डैम्बिस"।
"प्रकाश, मैं भी पुलिस विभाग में हूं, तो मुझे मेरा पैसा वापस कैसे मिलेगा?"
"'नहीं, पिताजी, आप अभियोक्ता हैं, आप लिखते हैं, आप कलम चलाते हैं।'" जब मैंने खुरोदी चाचा को इसके बारे में बताया, तो उन्होंने कहा, "मुझे उनसे एक बार मिलना होगा।"
72 वर्ष के एक व्यक्ति के सिर पर बनपवा के आकार की एक छोटी सफेद टोपी थी। उन्होंने मलमल की बनियान पहनी हुई थी, पारसी धर्म के अनुसार कमर पर "पवित्र धागा" (नादा) बंधा हुआ था, टखनों से ऊपर तक की पतलून और पैरों में काला रुआपता था। जैसे ही उन्होंने मुझे प्रकाश के साथ आते देखा, खुरोड़ी चाचा खड़े हो गए। उन्होंने हाथ मिलाने के लिए अपना दाहिना हाथ आगे बढ़ाया और कहा,
"अरे श्रीमान कदम, मैंने आपके बारे में बहुत कुछ सुना है! कृपया बैठ जाइए!" मैं अपने बगल वाली कुर्सी पर बैठ गया।

मैंने कहा, "चाचा जी, मैं उपन्यास लिखता हूँ!"
‘‘हांऽ हाऽऽ परसो चीफ मिनिस्टरने तुम्हारे नॉव्हेलका पब्लिशिंग किया ना? डिस्ट्रिक्ट जज्ज टी. आर. कुलकर्णीने आपकी बडी तारीफ की! मैने ‘संचार’ और ‘समाचार’ में पढा!’’
उस समय सोलापुर में संचार और समाचार प्रमुख दैनिक समाचार पत्र थे!
मतलब, इस उम्र में भी एक बूढ़ा आदमी अखबार पढ़ता है! मैंने मन ही मन सोचा।
‘‘अरे प्रकाश, जा एक बिस्किट का पुडा लेके आ, मैं कदम साहाबको कॉफी बनाता हूँ!’’
"नहीं, नहीं, चाचाजी, मुझे चाय या कॉफी पसंद नहीं है!"
"आप बैठ जाइए, चलिए बातें करते हैं!"
प्रकाश ने हमारा परिचय करवाया। उसके बाद, जब भी मुझे खाली समय मिलता, मैं अर्देशित चाचा के घर जाकर बैठ जाता। चाचा को घड़ियाँ ठीक करने का शौक था। वे घड़ी में खराबी का पता लगाने के लिए अपनी आँख में लेंस डालते थे। घड़ी ठीक करते समय वे मुझे रेलवे विभाग में काम करने के अपने अनुभव बताते थे!
"चाचा जी, आप रेलवे विभाग में कैसे आ गए?" अर्देशित को मराठी, अंग्रेजी और हिंदी अच्छी तरह आती थी। वह बोलते समय इन सभी भाषाओं का सहजता से प्रयोग करता था।
''अरे मिस्टर स्टेप, डेट इज़ ए लाँग लाँग स्टोरी''! मैं नैनटिन फोर्टीन के युद्ध में सोल्जर था। जब इटली के सामने हमारा युनिट था, तब जर्मन के दावे मुझे पापर साध्य लगी बबीते
तुरंत ही चाचा ने अपनी पैंट ऊपर खींची और अपनी जांघ पर लगी गोली का घाव दिखाया।
‘‘मै पकड गया POW प्रिझनर ऑफ वॉर कॅम्पमें मैं नजरबंद हुवा। एक महिने के बाद कॅम्पसे रात मे भागा। और ब्रिटिश बटालियनमे आया। एक पाव, इन्जुअड। वहासे लंडन ले गया, उधर सिक्स मंथ ट्रीटमेंट हुई। मै वापस इंडिया आया। खाली एक पाव इन्जुअर्ड हुवा था बाकी मै हंड्रेड पर्सेट तंदुरूस्त था। मुझे सिव्हिल साव्हaस के बारे मे पूछाँ! मै बोला मै रेल्वे इंजिन ड्रायव्हर बनना चाहता हूँ। बस चलो, आंग्रेज सरकारने मुझे रेल्वे इंजिन ड्रायव्हिंग का ट्रेनिंग दिया। तीस साल के बाद मै रिटायर हुवा। अब

मुझे एट थाऊजंड पेन्शन मिलती है। लडका दिल्ली को बुलाता है, लेकिन मै इधर ही हॅपी हूँ। बुढापे मे लडकेको क्याँ तकलीफ देना?''
मैं अर्देशित चाचा के स्वभाव की बारीकियों को समझने की कोशिश कर रहा था। इतने सालों तक रेलवे इंजन चालक के रूप में काम करने के कारण, उन्हें हमेशा लगता था कि वे इंजन चालक के कर्तव्य पर हैं। वे बार-बार अपनी घड़ी देखते। कुछ याद आने का नाटक करते हुए वे दरवाजे पर जाते। उन्होंने दरवाजे पर लोहे की कुंडी लगा रखी थी, बिल्कुल इंजन की तरह। वे एक हाथ से कुंडी खोलते और बाहर देखते। घड़ी फिर से मरम्मत के लिए गई है! उनकी बेचैनी देखकर मैंने एक बार उनसे कहा, "चाचा जी, आप बार-बार बाहर क्यों जाते हैं?"
चाचा आपल्या दंतहीन बोळक्याने हसत हसत म्हणाला, ''अरे मिस्टर कदम, इतने साल मे इंजिन चलाया था, तो रिटायर होने के बाद भी मै ड्युटीपर हूँ ऐसा लगता है।''
चाचाजी कभी कप और तश्तरी में चाय नहीं पीते थे। उनके पास एक नीले रंग का एनामेल मग था। वे उसी में चाय पीते थे। लेकिन हमें वे कप और तश्तरी में चाय परोसते थे।
एक दिन, दोपहर करीब तीन-चार बजे, जब मैं खुरोदी चाचा के यहाँ बैठा था, तभी बॉब कट और पोनीटेल वाली बाईस साल की एक लड़की अंदर आई। उसने खुरोदी से कहा, "अंकल, मम्मी को पच्चीस रुपये चाहिए।"
लड़की के मुंह से ये शब्द सुनकर बूढ़ा आदमी गुस्से से आग बबूला हो गया। "कमीने, तेरी माँ एक कुतिया है! उस दुष्ट औरत को तेरे बाप के सामने बौना कर देना चाहिए था!"
लड़की चुपचाप खड़ी रही।
उसे शायद पहले से ही आभास हो गया था कि उसे यह सब सुनना पड़ेगा। बूढ़े आदमी ने पहले लड़की की माँ को डाँटा और फिर खूंटी पर टंगे अपने कोट की जेब से लड़की को पच्चीस रुपये दिए। लड़की ने "धन्यवाद" कहा और चली गई। मैं इस बात को लेकर असमंजस में था कि वह लड़की कौन थी, उसकी माँ बूढ़े आदमी से पैसे क्यों माँग रही थी, और उसने पहले उसे डाँटा और फिर लड़की को पैसे क्यों दिए।

लड़की के जाने के बाद, बूढ़े चाचा ने मुझसे कहा, "श्रीमान कदम, जीवन में किसी से भी वादा मत करना, बाद में पछताओगे।" मेरी उत्सुकता को भांपते हुए, चाचा ने उस दिन मुझे यह बात बताना शुरू किया।

श्रीमान कदम, जॉन ब्रॉकहर्स्ट मेरा साथी गार्ड था। मैं तीन साल से उसका दोस्त था। रेलवे विभाग को हमारी दोस्ती के बारे में पता था, इसलिए हम दोनों को साथ में ड्यूटी मिलती थी! सोलापुर हमारा मुख्यालय था! पंद्रह दिन सोलापुर-पुणे, पंद्रह दिन सोलापुर-शाहबादवाड़ी, ड्यूटी पूरी करने के बाद हम दोनों विश्राम कक्ष में नहाते थे और अपने साथ लाया हुआ खाना खाते थे।

ब्रोंखर्स्ट शराब पीते थे। वे हर दिन खाने से पहले 3-4 पेग लेते थे। हालांकि, सेना में 10-12 साल रहने के बावजूद मैंने कभी शराब को हाथ नहीं लगाया। आज भी मैं शराब से पूरी तरह परहेज करता हूँ।

ब्रोंखर्स्ट शराब पीकर खूब बातें करता था। एक बार उसने मुझसे कहा, "अर्देशिट, मुझसे वादा करो!"

मैंने पूछा, "किस बारे में?"

हम कई सालों से दोस्त हैं, हमारे बच्चे अभी छोटे हैं। अगर मैं पहले मर जाऊं, तो मेरे बाद तुम मेरी पत्नी और बच्चों की देखभाल करोगे। अगर तुम पहले मर जाओ, तो मैं तुम्हारी पत्नी और बच्चों की देखभाल करूंगा!

मुझे लगा कि उस दिन ब्रोंखर्स्ट ने कुछ ज़्यादा ही पी लिया था। मैंने उनसे वादा किया कि मैं इस मामले को यहीं खत्म कर दूंगा, और हैरानी की बात यह है कि जैसे ही बातचीत खत्म होने वाली थी, चौथे दिन ब्रोंखर्स्ट को दिल का दौरा पड़ गया।

उसके जाने के बाद, उसकी पत्नी, "क्विन", को उसके तीन लाख रुपये का फंड मिला। उसे हर महीने दो हज़ार रुपये की पेंशन भी मिलती है, लेकिन यह "क्विन" बहुत ही धूर्त और खर्चीली औरत है, उसने सारा फंड हड़प लिया! वह तो दस तारीख को ही पेंशन खत्म कर देती है। फिर जब उसे किसी चीज़ की ज़रूरत होती है, तो वह उस लड़की को मेरे पास भेज देती है। मैं उस "मासूम" लड़की को डांटता हूँ, लेकिन अगले ही पल मुझे ब्रोंखर्स्ट से किया वादा याद आ जाता है। मैं अनिच्छा से उसे पैसे दे देता हूँ!

वह सारा इतिहास सुनकर मैं दंग रह गया। मैंने रेलवे इंजन चालक और गार्ड के जीवन पर एक उपन्यास लिखने का फैसला किया। अर्देशित चाचा के मार्गदर्शन में मैंने तीन-चार बार रेलवे इंजन में यात्रा की। मैंने उसकी बारीकियों का अध्ययन किया और उपन्यास "शेवात्वे स्टेशन" लिखा।

इस उपन्यास के अब तक 3-4 संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। नया संस्करण जल्द ही प्रकाशित होगा। श्रीराम लागू इस उपन्यास पर फिल्म बनाना चाहते थे। परसों मैं सोलापुर गया था, जहाँ प्रकाशक ने मुझे बताया कि चाचा खुरोड़ी का देहांत दस वर्ष पहले हो गया था। मैं वह घर देखने गया, लेकिन बिल्डर ने उसे गिरा दिया था। अब उस जगह पर चार मंजिला इमारत में फ्लैट बने हुए हैं।

लेकिन मुझे अंकल खुरोदी याद आ गए, जो उस पुराने घर के दरवाजे के हैंडल से टिके हुए बाहर देख रहे थे और फिर चाय की चुस्की ले रहे थे।

०-०-०

12. “विथावाहिनी”

पांच फुट दो इंच लंबी विथावाहिनी, बारशी के मेरे घनिष्ठ मित्र कल्लप्पा की पत्नी थीं। वह महिला पढ़-लिख नहीं सकती थीं, लेकिन उनके कौशल किसी "स्नातक" को पढ़ाने के समान थे!

पच्चीस साल पहले, कोटगुंड परिवार जीविका कमाने के लिए बीजापुर से बारशी आया था। उनसे पहले बीजापुर क्षेत्र के कुछ लोग बारशी में बस चुके थे। उनसे कोटगुंड परिवार को पता चला कि बारशी में दो-तीन सूत मिलें हैं। दाल प्रसंस्करण के लिए एक दर्जन से दो दर्जन कारखाने हैं। उन्हें कहीं न कहीं रोजगार मिल ही जाएगा। पति-पत्नी के लिए जीविका कमाना मुश्किल नहीं होगा।

जैसा कि उम्मीद थी, कल्लप्पा को मराठे मिल में नौकरी मिल गई। उस समय दैनिक मजदूरी 7 से 8 रुपये थी। कोटगुंड दंपति ने एक छोटा सा कमरा किराए पर लिया। कल्लप्पा हर सुबह अपना दोपहर का भोजन पैक करके काम पर जाता था। सारा दिन खाली बैठने के बजाय, विठाबाई चार पैसे कमाना चाहती थी, इसलिए उसने अपनी पड़ोसी नूरबी से मदद मांगी।
"नूरबी, बीड़ी बांधकर तुम कितना कमाती हो?"
‘‘हं, दिनभरं काम करी तो आठ दस रुपये मिलते है’’
"तो मुझे बिद्यानी भी सिखाओगी? वो कहती है कि मुझे बैठे-बैठे चार पैसे कमाने चाहिए!" शिक्षित समाज के लोगों और खुद काम करके जीविका चलाने वाले लोगों में बहुत बड़ा अंतर होता है। एक शिक्षित और बूढ़ा व्यक्ति किसी के कहने पर भी अपना काम नहीं करेगा। लेकिन जो लोग अपने दम पर जीते हैं, वे निस्वार्थ भाव से दूसरों की जीविका कमाने में मदद करेंगे।
नूरबी म्हणाली, ‘‘भामी कल आप जाएंगे तांबोळी साहब के दुकान में मै तुमको बिडी बांधनेको सिखाऊंगी।’’
"पहले आप मुझे बीड़ी बांधना सिखाइए, उसके बाद ही हम दुकान चलेंगे। अगर वे मुझसे पूछें कि क्या मुझे बीड़ी बांधनी आती है, तो मैं आज क्या कहूँगी?"
“यह असल में क्या है, मैं तुम्हें सिखाऊँगी।” नूरबी ने विठाबाई को बीड़ी के पत्ते काटना, उसमें चुटकी भर तंबाकू मिलाना, पत्ते को मोड़ना, उस पर लाल धागा बाँधना और छोटी सी छुरी की धार से बीड़ी के दोनों किनारों को बंद करना सिखाया। तीसरे दिन विठाबाई ने इक्यावन बीड़ियाँ बाँधीं। एक समान आकार और माप की बीड़ियों को देखकर नूरबी ने कहा,
‘‘भाभी तू तो मेरेसे भी अच्छी बिडी बनाने लगी।’’
चौथ्या दिवशी नूरबी विठाबाईला तांबोळीच्या बिडीच्या दुकानात घेऊन गेली. रमजान नूरबीला म्हणाला, ‘‘ये औरत कितने सालसे बिडी बनाती है?’’ ‘‘सालसे नही जी खाली चार दिन पहले मैनेच उसको सिखाया!’’
विथाबाई द्वारा बनाई गई अनोखी मशीन में बनी बीड़ियों को देखकर रमज़ान साहब बहुत खुश हुए। विथाबाई कभी दस, कभी बारह, कभी पंद्रह रुपये कमाने लगीं।

कोटगुंट के इस दंपत्ति को इस बात से संतोष था कि इस क्षेत्र में आने के बावजूद उन्होंने थोड़े ही समय में चार पैसे कमाना शुरू कर दिया था। कल्लप्पा ने छठी या सातवीं कक्षा तक पढ़ाई की थी। कन्नड़ के साथ-साथ उन्हें मराठी और टूटी-फूटी हिंदी भी आती थी। हुंडेकारी स्थित मराठे मिल के एक ठेकेदार ने उनसे कहा, “कल्लप्पा, तुम्हें इलेक्ट्रीशियन का कोर्स करना चाहिए। बारशी में इसकी बहुत मांग है।”

"उसका क्या होगा?"

"आप बिजली के उपकरण लगा सकते हैं। आप बैठकर बैटरी चार्जिंग का काम कर सकते हैं।"

लेकिन इसके लिए मुझे सोलापुर जाना होगा!

"तो जाओ, ठीक है? वैसे भी, तुम्हारी पत्नी दिन में 10-15 रुपये कमा रही है।"

उस शाम, कल्लप्पा ने विथाबाई से कहा, "दर्जी ने कहा, 'इलेक्ट्रीशियन का कोर्स कर लो!' मिल में तुम्हारी नौकरी तो है ही, लेकिन तुम अपने खाली समय में निजी तौर पर काम करके चार पैसे भी कमा सकती हो।"

"ठीक है, चार महीने कोई ज्यादा समय नहीं है!"

इन चार महीनों में कल्लप्पा के बोलने और व्यवहार में बहुत बदलाव आया। उसने पैंट और कमीज़ पहनना शुरू कर दिया। उसकी टोपी छूट गई। उसने बाल बढ़ाना और भांग काटना शुरू कर दिया। चक्की का काम निपटाने के बाद, वह गाँव में बिजली फिटिंग का काम करने लगा।

बरशित का तेल मिल चौक उद्यमनगर का दिल था! वहाँ चार-पाँच खराद मशीनें थीं। मूंगफली का तेल निकालने के लिए छड़ें इन्हीं मशीनों पर बनाई जाती थीं। वहाँ दो-तीन बिजली से चलने वाली वेल्डिंग की दुकानें भी थीं। दूसरी तरफ़ कारों की मरम्मत होती थी। गन्नी फोरमैन का एक गैराज था। यह गन्नी साहब नूरबी का घनिष्ठ मित्र था, जिसके साथ काम करना बहुत सुखद था। बीजापुर से आकर थोड़े ही समय में यहाँ बस गए कोटगुंड दंपति के प्रति उसके मन में आदर और स्नेह पैदा हो गया था।

जब कल्लप्पा मिल में काम नहीं था, तो गन्नी ने फोरमैन के गैरेज में "स्वयंसेवक" के रूप में काम करना शुरू कर दिया। जल्द ही, वह जीप, एम्बेसडर और फिएट जैसी कारों की मरम्मत करने लगा। बरशी उसे एक बहुत ही बहुमुखी और ईमानदार

सज्जन के रूप में जानने लगा। वह हमेशा मुस्कुराता रहता था, विनोदी था और जो कुछ भी उसके पास था, उसी में संतुष्ट रहता था!
इस कोटगुंड दंपति को बहुत बड़ा दुख झेलना पड़ा। शादी के कई साल बीत जाने के बाद भी उनके कोई संतान नहीं थी!
जब कोई महिला लंबे समय तक संतान नहीं पैदा करती, तो समाज एक ही धारणा बना लेता है: पत्नी में जरूर कोई कमी है!
गन्नी के भाई बाशा ने कहा, "अबे कल्लाप्पा, अब दोबारा शादी कर लो, इतना पैसा तुम किसके लिए कमाते हो?" कल्लाप्पा ने अपनी पत्नी से कहा, जिसने कहा, "लोग कहते हैं कि मुझमें कुछ गड़बड़ है! तुम जाओ और दोबारा शादी कर लो। लेकिन मैं उस घर में नहीं रहूंगी। तुम और तुम्हारी पत्नी आत्मनिर्भर बनो!"
शुरू में कल्लप्पा फैसला लेने में हिचकिचा रहे थे, लेकिन जब उनकी पत्नी ने उन्हें हरी झंडी दे दी, तो वे सहमत हो गए।
वह बीजापुर गया, और जब वह वहाँ पहुँचा, तो कल्लप्पा, जो पहले एक लापरवाह आदमी जैसा दिखता था, अब चार-पाँच साल में पैंट और मनीला कमीज़ पहने और छोटे बाल कटवाए हुए, अपने कबीले के लोगों को देखकर आश्चर्यचकित रह गया। उस (धंगर) कबीले में एक या दो बार शादी करने में कोई बुराई नहीं थी।
शाम को, विठाबाई के बूढ़े पिता को जब कल्लप्पा के बीजापुर आने का उद्देश्य पता चला, तो उन्होंने कहा, "विठा, मैं दूसरे परिवार की लड़की को दुल्हन के रूप में स्वीकार नहीं करूँगा। लेकिन अगर मेरी प्यारी बहन मेरे घर आ रही है, तो मुझे उसे स्वीकार करने में क्या आपत्ति है?" कल्लप्पा ने सोचा और अपने ससुर को सिर हिलाकर सहमति दी।
दो दिन बाद, कल्लप्पा हल्दी के शव के साथ बारशी पहुंचे। उनके आने तक विट्ठा को इस बात का जरा भी अंदाजा नहीं था कि उनकी बहन उनकी पत्नी बनकर घर आ रही है।
विथाबाई ने अपने दुख को किसी तरह अंदर ही अंदर दबा लिया, लाख कोशिश करने के बावजूद वह इस एहसास को भुला नहीं पाईं कि उनके पति उनसे कुछ हद तक दूर हो गए हैं। लेकिन उनकी बहन "कुस" बहुत संतानोत्पत्ति वाली थीं। एक के बाद एक चार संतानें हुईं। सबसे बड़े दत्ता थे! उनके बाद तीन बेटियाँ हुईं। विथाबाई ने सभी

बच्चों को अपने कंधों पर उठाया। बच्चे विथाबाई को "आया" कहकर पुकारते थे और सभी बच्चे अपनी माँ को "यव्वा" कहते थे।
तेलगिरानी चौक में भले लोग रहने की हिम्मत नहीं करते थे। क्योंकि उस इलाके में करीब दो सौ वेश्याएं रहती थीं। तेरह से चौदह साल की लड़कियां, चेहरे पर चटख लिपस्टिक और तेज इत्र लगाए, अपना पेट भरने के लिए जिस्म बेचती थीं। उनमें मराठवाड़ा से लेकर हुबली-धारवाड़ तक की औरतें और लड़कियां शामिल थीं। चार-दो नेपाली औरतें भी ग्राहकों को बेवकूफ बनाने के लिए छोटी, चपटी स्कर्ट और कुछ बिंदीदार कपड़े पहनकर आती थीं।
वहाँ, कल्लप्पा ने सस्ते में चार कमरों का घर खरीदा। एक बार कल्लप्पा ने मुझसे कहा, "अबा, विथा कहती है, क्या अबा हमारे घर रात के खाने पर आएँगे?"
मैंने तुरंत कहा, "क्यों नहीं आते? लेकिन अगर कोई मुझे उस गली में जाते हुए देख लेगा, तो लोग इसका अलग-अलग अर्थ निकालेंगे।"
"बिल्कुल नहीं! बरशी में लगभग हर कोई अब आपको जानता है। कोई बात नहीं, लेकिन मैं आऊंगा!"
मैं वहां गया, और अगर मैं किसी को बताता कि विठाबाई धनगर समुदाय से थीं, तो भी कोई विश्वास नहीं करता। घर साफ-सुथरा था, बर्तन चमकीले थे, और पलंग करीने से लगे हुए थे।
विथावाहिनी ने काली मिर्च वाली मटन ग्रेवी और चिकन 'सुक्का' बहुत ही शानदार तरीके से बनाया था।
बारशी से मेरा तबादला होने के बाद भी मुझे उस मौली के हाथों से बना स्वादिष्ट भोजन कई बार चखने का मौका मिला।
बारशी से चले जाने के बाद, मैं साल में तीन-चार बार बारशी जाया करता था। हम सरकारी विश्राम गृह में रुकते, शिकार का कार्यक्रम तय करते और आसपास के गांवों में रहने वाले पाताल और शिकारियों से विदा लेते।
विथावाहिनी मुझसे विश्राम गृह में मिलने आती थी। वह अपने साथ सब्ज़ियाँ लाती थी। विथावाई मटन के खाने को भी सब्ज़ियाँ कहती थी। मैं टिफिन से ज्वार की पतली रोटी और सूखा मटन लेकर शिकार पर चला जाता था।

विथावाहिनी अपनी बहन की देखभाल करती थी। वह अपने बच्चों को अपने बच्चों की तरह मानती थी। उसने तेलगिरनी चौक के बाज़ार के प्रवेश द्वार पर एक किराने की दुकान खोली। उसने अपने पति के लिए एक जीप और 38 मॉडल की शेवरले कार खरीदी। उसने बैटरी चार्जिंग की दुकान भी खोली। कल्लप्पा ने महीने में सात से आठ हज़ार रुपये कमाना शुरू किया। लेकिन आखिरकार, जब उसकी कमाई ज़रूरत से ज़्यादा होने लगी, तो हालात बदल गए।

कभी-कभी कल्लप्पा, जो एक-दो पैग पी लेता था, हर दिन एक चौथाई से भी कम नहीं पाता था। हर बार विथावाहिनी मुझसे दया भाव से कहती, "अबा, आप अब इंसान नहीं रहे! अगर आपको अपने हितों की चिंता नहीं है, तो कम से कम अपने डर के प्रति तो थोड़ा सावधान रहें!"

"किसी शराबी को शराब छोड़ने के लिए कहना कभी भी मूर्खतापूर्ण काम नहीं करना चाहिए।" मैं यही सोचती थी। मैं अक्सर यह बात इशारे में कहती थी। "एना, तुम्हें हर जगह खुशी मिली है। आज तुम तीन-चार व्यवसाय कर रही हो, तुम्हारी आजीविका अच्छी तरह से स्थापित है, अब तुम शराब के चक्कर में क्यों पड़ रही हो? क्या शराब कभी बेहतर हुई है?"

बस बहुत हो गया, "पिताजी, आज के लिए बस इतना ही काफी है। अगर कल से मैंने आपको छुआ, तो कसम से!" ऐसा कई बार हुआ, और यह स्पष्ट हो गया कि कलप्पा की हालत जल्द ही बिगड़ने लगेगी।

बेचारी विथावाहिनी को चिंता होने लगी कि कहीं उसे परिवार को मुसीबत में देखने का दुर्भाग्य न झेलना पड़े। उस दिवाली, मैं विथावाहिनी की साड़ी लेकर बारशी गई। विथावाहिनी ने मुझे नई साड़ी पहनाई और भाऊबीजा के दिन उसे लहराया। हमने स्वादिष्ट मटन का भोजन किया।

वह हमारी आखिरी मुलाकात थी। डेढ़ महीने बाद, कल्लप्पा का पोस्टकार्ड आया। पूर्णिमा के आखिरी दिन, विठाबाई का "दिल का दौरा" पड़ने से निधन हो गया।

वह कौन है? मैं उस "विथावाहिनी" को फिर कभी नहीं देख पाऊँगी, जो बीजापुर में पैदा हुई, बारशी में बसी, जिसने मुझ जैसे सरकारी वकील को भाई की तरह माना और बारशी में मुझे स्वादिष्ट भोजन खिलाया।

०-०-०

13. "कैनरी शिकार"

“अब चलो, नागासा, उठो! आज जंगल में चलते हैं, चटाई के नीचे छिपे भेड़िये को, हिरण के शरीर को, दोपहर में झरने को!”

"शिवाबा, जल्दी करो, बड़े-बड़े!"

"ओह, हम तैयार हैं। नानी, मैं अभी चाय बना रही हूँ, इसलिए मैंने काम रोक दिया।"

“अच्छा, पिताजी, अपने पीनट बटर को ढक कर रखिए। सांचे से वापस आकर खा लेना! मैं मैदान के बीचोंबीच उड़ने जा रहा हूँ, और मैं ऐसा करने में सक्षम रहा हूँ।”

इस पर सी. मोहन सिंह ने कहा, "नाना सदनकड़ा, अपनी जल्दबाजी तो देखो!"

तभी भगवा वस्त्र पहने, होठों पर घनी मूंछों वाला खांडू चिक्तावले आया और अपनी तीखी आवाज में चिल्लाया, "अरे बड़े-बड़े, चाय पीते हैं बाबा, आप तो छोटे बच्चे की तरह गुड़ खा रहे हैं!"

ये “संवाद” कोल्हापुर से दस किलोमीटर दूर मथाची कनेरी गाँव में नाना टाकले के घर में हुआ करते थे! मेरे मामा मेजर शिवाजीराव शेल्के और उनके मित्र कैप्टन मोहन सिंह बायस, दोनों ही पट्टी के शिकारी थे। जब मैं स्कूली बच्चा था, तब से ही मैं उनके साथ तीतर और खरगोश का शिकार करने कनेरी जाया करता था। कैप्टन मोहन सिंह बायस और मेजर शिवाजीराव शेल्के दोनों ही बारह बोर की तोपों से उड़ते हुए तीतरों और भागते हुए खरगोशों को निशाना बनाने में माहिर थे।

तीतर और खरगोश का शिकार करने वाले शिकारी को "दर्दी" कहा जाता है। क्योंकि तीतर सुबह और शाम को चरने के लिए निकलते हैं। दिन के समय वे किसी गंदी झाड़ी में छिपे रहते हैं। खरगोश निशाचर जानवर हैं। दिन में वे कभी दिखाई नहीं देते। जैसे ही सूरज डूबता है और अंधेरा होने लगता है, खरगोश झाड़ियों से बाहर "घूमने" के लिए निकलते हैं। उनका शिकार करने का एक खास तरीका है और वह है उन्हें "शिकार करना"! जितने भी शिकारी हों, वे झाड़ियों को भेदते हुए एक पंक्ति में खड़े हो जाते हैं। शिकारी के हाथ में लाठी होती है। जैसे ही तीतर या खरगोश जिस झाड़ी में छिपा होता है, वह लाठी पर बैठती है, वह ज़ोरदार धमाके के साथ उड़ जाता है। जब तीतर अचानक झाड़ियों से उठता है, तो शिकारी बारह बोर की बंदूक से हवा में ही उस पर गोली चला देता है। कभी-कभी, खरगोश भी झाड़ियों के हिलने की आवाज़ की दिशा में दौड़ते हैं। शिकारी बंदूक से ऐसे दौड़ते हुए खरगोश पर गोली चला देता है। जैसे ही लाठी लगती है, खरगोश ढेर हो जाता है।

सुबह करीब 8-8:30 बजे शुरू होने वाला "हक्या" जुलूस 12:30 बजे समाप्त होता था। बीच में दोपहर के भोजन का अवकाश होता था। आठ-दस फेरीवालों और तीन-चार बंदूकधारियों के लिए भोजन ढोने वाला लड़का भी सिर पर भोजन रखकर सामान ढोने के काम में लगा रहता था।

कडाप्पा कनेरी मठ के नाम से जाना जाने वाला प्राचीन मंदिर एक पहाड़ी पर स्थित है। इस मंदिर की देखरेख स्वामी महाराज करते हैं। यह इलाका बेहद खूबसूरत है। चारों ओर घनी झाड़ियों और पानी से ढकी पहाड़ियाँ और घाटियाँ हैं। यह इलाका

इसलिए सुंदर था क्योंकि यहाँ शहरी बस्तियों या मानवीय गतिविधियों का कोई शोर नहीं था। इसीलिए यह खरगोशों और तीतरों के लिए एक सुरक्षित निवास स्थान था। लेकिन गर्मियों के महीनों में, हम जैसे शौकिया शिकारी यहाँ शरण लिए हुए खरगोशों और तीतरों के रोमांचक शिकार के लिए यहाँ आ जाते थे। तीन से चार घंटे शिकार करने और पहाड़ियों की पथरीली चढ़ाइयों पर चढ़ने के बाद, दोपहर 12 से 12:30 बजे के आसपास हमें भूख लग जाती थी। तब सभी लोग मठ के उत्तर में घने जंगल में एक विशाल बरगद के पेड़ के नीचे दोपहर का भोजन करने के लिए रुकते थे। तब तक सात-आठ तीतर और एक खरगोश पकड़ा जा चुका होता था। सभी शिकार को एक डंडे से बाँध दिया जाता था। दो लड़के शिकार लेकर झोपड़ी के पीछे रेंगते थे। कभी-कभी उन्हें 7-8 खरगोश मिल जाते थे। उनका बोझ बढ़ता जाता था। खांडू रेंगते हुए लड़के को खूब गालियाँ देता था। "तुम्हारे माता-पिता ने तो हमें खाना तक नहीं दिया! चलो, चलते हैं!"

बरगद के पेड़ों के किनारे पहाड़ों से निकलने वाली उस धारा का स्वच्छ और बहता पानी मन को ताजगी से भर देता था। हर कोई कुछ न कुछ खाना और रोटी लाता था, कभी चावल, कभी भरवां रोटी! कुछ लोग आलू की सब्ज़ी लाते थे, कुछ अंडे की भुर्जी (भगड़ा) और कभी आमलेट पाव! खाना शुरू होने से पहले, खांडू और नाना ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ करते हुए खेतों से प्याज़ तोड़ते थे। किसान मौजूद होते हुए भी, हम जैसे कभी-कभार आने वाले मेहमानों से कुछ नहीं कहते थे। फिर खांडू चाकू से प्याज़ के पत्ते काटते, प्याज़ को पत्थर पर रखते और हथौड़े से तोड़ते। उस अवली के खाने की यादें तीस-चालीस साल बाद भी ताज़ा हैं।

खाना खाते समय हम सब एक-दूसरे का मजाक उड़ाते रहे। अगर शिकारी ने 'बार' को मिस कर दिया था, तो वह बंदूक क्यों ले गया था? दिवाली अभी खत्म नहीं हुई है!

खाना खाते समय नाना टाकले अपनी पुरानी यादों में खो जाते और कहते, "मोहन सिंह (जिसका नाम बिगड़ा हुआ है) के पीछे मैं उस कुंड में भागा था, एक जंगली सूअर को मार गिराया था, और उसका भाला दो टुकड़ों में टूट गया था! मैं शाक से पूछता, "नाना, आपके पास बंदूक कब से आ गई? आप क्यों आ रहे हैं?" नाना कहते, "उस भाले से इतने सारे जंगली सूअर कैसे मार गिराए जो आपके सिर पर भी नहीं लगा!"

"क्या मतलब है, बूढ़े कुत्ते? मैं तो गंध से जाल में छिपे जंगली सूअर का पीछा करता था, उसे चारों तरफ से घेर लेता था, फिर भाले से उस पर वार करता था!" "लेकिन क्या जंगली सूअर बहुत ताकतवर नहीं होता? कहते हैं कि वह कभी-कभी इंसानों पर भी हमला कर देता है!"
"तुमने जित्रपम को कितनी बार डंडे से पीटा है?" "जित्रपम" शब्द का प्रयोग खेत के जानवरों और यहां तक कि जंगल के जानवरों के लिए भी किया जाता था।
दोपहर का खाना ऐसी ही बातों में बीतता, फिर सिगरेट पीते! नाना हमेशा हुक्का पीते थे। मेजर शेल्के पनामा सिगरेट पीते थे, जबकि कैप्टन मोहन सिंह कागज के टुकड़ों से सिगरेट बनाते, उनमें इंग्लैंड में बना पाइप तंबाकू भरते और पीते थे। वो हमें खांडू देते और कहते, "स्कूल में पढ़ने वाले लड़कों को खांडू खाना चाहिए! नहीं तो तुम बकवास करोगे!"
दोपहर के भोजन के बाद, वापसी के रास्ते की तलाश शुरू हुई। इस दौरान, चार-छह और तीतर और एक और खरगोश मिला!
सुबह 8 बजे से शुरू होकर, दोपहर के भोजन के लिए आधे घंटे के ब्रेक के साथ, इतनी कसरत करने के लिए पहाड़ियों पर चढ़ने और उतरने में छह या सात घंटे लगते थे, लेकिन उस समय ऐसा महसूस नहीं हुआ।
बाद में, जब मैं अठारह साल का हुआ, तो मैंने बंदूक का लाइसेंस बनवाया। सबसे पहले मैंने एक मजल-लोडर बंदूक, एक शॉटगन ली। इस बंदूक की नली में अल्कोहल, कागज और नारियल के छिलके भरकर उसमें गोलियां भरनी पड़ती थीं। उस बंदूक को चलाना बहुत मुश्किल काम था। लेकिन उस बंदूक से मैंने कई उड़ती हुई चिड़ियों और दौड़ते हुए खरगोशों को भी पकड़ा।
कैप्टन मोहन सिंह सेवानिवृत्त हैं और सोलापुर में रहते हैं। मेजर शिवाजीराव का निधन ढाई साल पहले हो गया था। नाना टाकले और खांडू चिकलावले दोनों अब इस दुनिया में नहीं हैं। मुझे भी घुटनों में दर्द के कारण ज्यादा चलने-फिरने में दिक्कत होती है। ऐसे में तो मेरे लिए कंधे पर तोप लेकर पहाड़ियों पर चढ़ना-उतरना बिल्कुल असंभव है।
कभी-कभी मैं कानेरी तक गाड़ी चलाकर जाता हूँ। मैं मठ की पहाड़ी पर गाड़ी खड़ी करता हूँ और उन पहाड़ियों को याद करता हूँ जहाँ मैं कभी खरगोश और तीतर का

शिकार किया करता था।
अब मैं बस यादों का आनंद लेना चाहता हूँ!
०-०-०

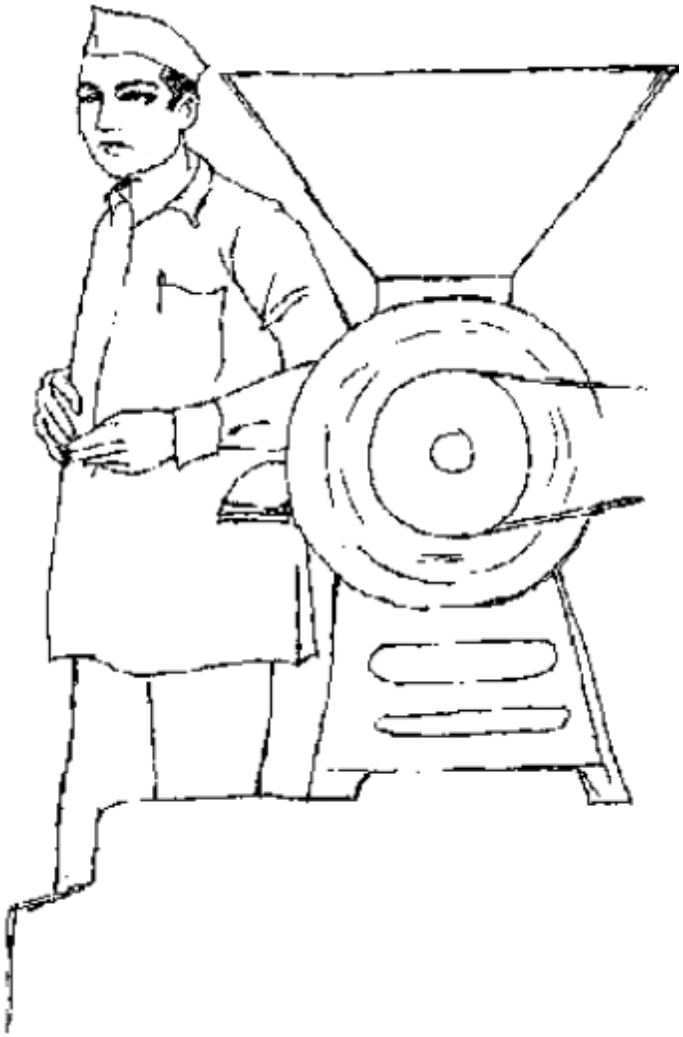

१४. महादेव मोरे

कानों तक खींची हुई गांधी टोपी। शरीर पर एक साधारण पतलून-कम-कमाई। पूरा शरीर आटे से सना हुआ! इस वेश में निप्पानी के पुराने स्टैंड क्षेत्र में आटा चक्की चलाने वाला एक व्यक्ति दिखाई देगा। ये हैं अत्यंत प्रभावशाली ग्रामीण कथा-उपन्यासकार महादेव मोरे।

महादेव मोरे पिछले कई वर्षों से इस आटा चक्की का संचालन कर रहे हैं और ग्रामीण साहित्य का सृजन कर रहे हैं। निप्पानी के मध्यमवर्गीय परिवार में जन्मे महादेवराव ने कोई विश्वविद्यालयी उपाधि प्राप्त नहीं की है। उनके घर में कोई साहित्यिक परंपरा नहीं थी और न ही किसी प्रतिष्ठित साहित्यकार ने उन्हें हाथ में उंगली दिखाकर सरस्वती के दरबार में प्रवेश दिलाया। लेकिन जैसा कि कहते हैं, "महान साहित्यकार जन्मजात होते हैं, बनाए नहीं जाते", महादेव स्वयं को एक सर्वमान्य साहित्यकार मानते हैं।

मराठी साहित्य के प्रति उनके प्रेम और मानव स्वभाव के उनके सूक्ष्म अवलोकन ने उनकी साहित्यिक छवि को आकार दिया है।

आज तक उनकी लगभग 40 कविताएँ और दस से बारह कहानी संग्रह प्रकाशित हो चुके हैं। मराठी साहित्य में अग्रणी स्थान प्राप्त कर चुकीं स्वर्गीय श्रीमती दुर्गा भागवत भी महादेव मोरे से उनकी आटा चक्की पर मिलने गई थीं। उन्होंने उनके साहित्य की प्रशंसा की और उन्हें और अधिक लिखने का आशीर्वाद दिया।

मेरी पहली मुलाकात महादेव मोरे से 1965 में हुई थी। मैं अपने पहले उपन्यास 'प्रयाल' के लिए प्रकाशकों की तलाश कर रहा था। दस-बारह प्रकाशकों ने मुझे यह कहकर लौटा दिया था, "आप इस क्षेत्र में नए हैं, आपका इतना बड़ा उपन्यास कौन प्रकाशित करेगा?" उस समय कोल्हापुर में चंद्रकांत शेट्टी नाम का एक बहुत ही ईमानदार और गुणी छोटा प्रकाशक था!

चंद्रकट शेट्टी के प्रकाशन गृह का कार्यालय उस समय के नवोदित लेखकों के लिए एक आश्रय स्थल हुआ करता था। महादेव मोरे, रंगराव बापू पाटिल, विलास मोहिते आदि, जो हाल ही में लेखन की दुनिया में उभरे थे, अक्सर यहाँ आते थे। मैं भी अनजाने में ही इसमें शामिल हो गया। इनमें से रंगराव बापू पाटिल और महादेव मोरे, दोनों ही समय के साथ ग्रामीण कथाकारों के रूप में प्रसिद्ध हुए। विलास मोहिते बाद में पुलिस विभाग में शामिल हो गए। उस अनुभव के आधार पर उन्होंने "फुलांछे गौल" नामक उत्कृष्ट कथा संग्रह लिखा। यह संग्रह व्यापक रूप से सराहा गया और इसे 11 प्रतिष्ठित पुरस्कार मिले। महादेव मोरे के कथा संग्रह "चितक" को भी राज्य सरकार से पुरस्कार प्राप्त हुआ है।

महादेव मोरे ने कुछ समय तक मोटर वाहन व्यवसाय में काम किया। मोटर चालक का जीवन एक अनूठा अनुभव होता है, विशेष रूप से वाहन चलाने और चालक के जीवन के संदर्भ में। उन्होंने अपने उपन्यास में मोटर व्यवसाय की कई बारीकियों को कुशलतापूर्वक चित्रित किया है। यदि निप्पानी क्षेत्र की बोली में रचित इन साहित्यिक कृतियों का अंग्रेजी में अनुवाद किया जाता, तो पश्चिमी विद्वान इनकी साहित्यिक गुणवत्ता को समझ पाते। जी हाँ, चंद्रकांत शेट्टी द्वारा प्रकाशित अन्नाभाऊ साठे के उपन्यासों ने अन्नाभाऊ को न केवल महाराष्ट्र में बल्कि विदेशों में भी प्रसिद्धि दिलाई। उनके दो-तीन उपन्यासों का रूसी भाषा में अनुवाद हो चुका है। महादेवराव की लेखन शैली भी उतनी ही बेजोड़ है।

यदि निप्पानी नाम से ख्याति प्राप्त गाँव का अर्थ तंबाकू और तंबाकू का अर्थ निप्पानी है, और यह बात तंबाकू व्यवसाय की बारीकियों को ठीक से नहीं दर्शाती, तो महादेवराव मोरे किस प्रकार के लेखक हैं? तंबाकू के गोदामों में काम करने वाली महिलाएं, गोदाम के मालिक द्वारा विशेष रूप से नियुक्त इरसाल मुकादम जो उनकी बेबसी का फायदा उठाता है, इन सभी को उनके साहित्य में पढ़कर ऐसा लगेगा मानो आप स्वयं उसी गोदाम में बैठकर उपन्यास पढ़ रहे हों।

महादेवराव ने देवदासी के जीवन का भी गहन अवलोकन किया है। 1973 में प्रकाशित उनके उपन्यास 'वर अभाल खाली धरती' ने मराठी साहित्य में बहुमूल्य योगदान दिया है।

देवदासी के जीवन पर आधारित इस उपन्यास में उन्होंने अंधविश्वास और योगियों के जीवन का सजीव चित्रण किया है।

इसके अगले दिन उनकी पुस्तक "फेसेस बिहाइंड द फेसेस" प्रकाशित हुई। ये सभी लेख एक समाचार पत्र के साप्ताहिक परिशिष्ट में प्रकाशित हुए थे। पाठकों की अच्छी प्रतिक्रिया को देखते हुए, अनिल मेहता ने मेहता प्रकाशन के माध्यम से मोरे को इस पुस्तक के लिए स्वर्गीय रणजीत देसाई पुरस्कार से सम्मानित किया।

हाल ही में, महादेवराव मोरे को स्कूलों और कॉलेजों द्वारा "मुख्य अतिथि" के रूप में आमंत्रित किया गया है। मैंने उनका भाषण केवल एक-दो बार ही सुना है। मैं उससे बहुत प्रभावित हुआ। कहते हैं कि जिनकी कलम अच्छी होती है, उनकी वाणी में उतना तीखापन नहीं होता। लेकिन महादेवराव भाषण देने में भी उतने ही

आत्मविश्वास से भरे हैं जितना कि वे लिखते हैं। मुझे आज भी वह सहज भाषण याद है जो उन्होंने मेहता द्वारा उन्हें पुरस्कार प्रदान किए जाने पर दिया था।
कहते हैं कि एक लेखक को मानसिक और आर्थिक स्वास्थ्य की आवश्यकता होती है। मौर्य आर्थिक स्वास्थ्य को लेकर ज्यादा चिंतित नहीं हैं। क्योंकि उन्होंने मुझे कई बार बताया है कि उन्होंने कभी पैसा कमाने के लिए नहीं लिखा। लेकिन मैं हमेशा उनके मानसिक स्वास्थ्य को लेकर चिंतित रहती हूँ। क्योंकि श्रीमती वत्सला वाहिनी पिछले कई वर्षों से गठिया से पीड़ित हैं। एलोपैथी से लेकर होम्योपैथी, आयुर्वेद, सभी प्रकार के उपचार किए गए। लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। महादेवराव, जो दिनभर आटा चक्की में खड़े रहते हैं, चक्की बंद होने पर अक्सर घर जाकर अपना खाना खुद बनाते हैं। कभी-कभी मैं सोचती हूँ कि अगर ऐसा महान क्षेत्रीय लेखक यूरोप-अमेरिका में पैदा हुआ होता, तो कितना सुखी होता? लेकिन नहीं, भाग्य का यह खेल थोड़ा अजीब है। ऐसी उच्च कोटि की साहित्यिक सेवा उन लोगों को नहीं मिल सकती जिनके पास सभी भौतिक सुविधाएँ हों। इसके विपरीत, केवल वे लोग जो विपरीत परिस्थितियों से जूझते हुए संतुष्ट जीवन जीते हैं, वे ही महादेवराव जैसे उत्कृष्ट साहित्य की रचना करते हैं।
उनकी साहित्य की एक और अनूठी विशेषता जो मुझे दिखाई देती है, वह है क्षेत्रीय भाषा का उनका प्रयोग। उन्होंने अपने साहित्य में कभी भी अलंकारिक या बनावटी भाषा का प्रयोग नहीं किया है। उन्होंने अपने साहित्य के लिए उस सीमावर्ती क्षेत्र की बोली का उपयोग किया है जहाँ वे रहते हैं।
कभी-कभी, आवश्यकता पड़ने पर, वे लेखन के दौरान कुछ कहावतों का प्रयोग करते हैं, लेकिन बहुत चतुराई से।
मनोरंजन से भरपूर हर तरह की रचना करने वाले लोकप्रिय लेखकों को मराठी आलोचकों द्वारा लगातार नजरअंदाज किया जाता रहा है। महादेव मोरे भी इसका अपवाद नहीं हैं।
हम कभी-कभार मिलते हैं और साहित्यिक चर्चाएँ बहुत जीवंत होती हैं। अगले दिन बातचीत के दौरान उन्होंने कहा, "वह सज्जन, जिनका नाम अक्सर मराठी साहित्य के एक ज्ञानी और अंतर्दृष्टिपूर्ण आलोचक के रूप में लिया जाता है, उन्होंने मेरी कहानियों या उपन्यासों का एक भी संग्रह पढ़े बिना कुछ पुराने विचार व्यक्त कर दिए। मुझे

उनकी बुद्धिमत्ता पर ईर्ष्या हुई। लेकिन ऐसे महान और सम्मानित आलोचक की गलतियों को कौन बताएगा?"

मैंने कहा, “महादेवराव, यह मत सोचिए कि यह सिर्फ आपके साथ हो रहा है।” “आपकी मांग के अनुसार मैं आपूर्ति करता हूँ,” परसों औरंगाबाद में मेरे साक्षात्कार के दौरान एक स्वघोषित आलोचक ने यह बयान दिया। इस पर सभागार में एकत्रित 20,000 श्रोताओं ने उस आलोचक के बयान का जोरदार विरोध किया; “बैठ जाइए। बाबा कदम की रचनाएँ सच्ची घटनाओं पर आधारित हैं। उनके उपन्यासों में चित्रित विषय वास्तविक घटनाएँ हैं। उनके उपन्यास पढ़ते समय हमें ऐसा लगता है कि यह कहीं न कहीं घटित हुआ है, इसलिए हम पिछले 35 वर्षों से उनका साहित्य पढ़ रहे हैं।” साक्षात्कारकर्ता का चेहरा देखने लायक हो गया।

मैं महादेवराव से अक्सर मिलना चाहता हूँ। लेकिन इस मेहनती लेखक को रविवार के अलावा कभी समय नहीं मिलता। इसलिए मैं कभी-कभार निप्पानी के पुराने ठेले पर पहुँच जाता हूँ। चक्की में काम करते हुए, अपने नाखूनों पर आटा लगाए महादेवराव मुस्कुराते हुए मेरा स्वागत करते हैं। वे पास के एक होटल में जाते हैं और मुझे चाय पिलाते हैं।

मैंने कुछ लेखकों को आलीशान बंगलों में रहते और कई नौकर रखते हुए देखा है। लेकिन मुझे यह कर्मयोगी लेखक, जो जीविका कमाने के लिए सूर्योदय से सूर्यास्त तक काम करता है, कहीं अधिक सम्माननीय लगता है।

०-०-०

15. भीमा मुंडे

कई वर्षों तक भीमा मुंडे बारशी तालुका के 'चुम्बा' गाँव के सरपंच रहे। 'चुम्बा' गाँव बारशी से 13-14 मील उत्तर में एक पर्वत की ढलान पर स्थित था। गाँव की आबादी लगभग तीन से चार हजार थी और अधिकांश लोग कृषि में लगे हुए थे। उस क्षेत्र में

बारिश की कमी थी, लेकिन गाँव की खासियत यह थी कि 20-25 फीट तक खोदने पर पानी निकल आता था। पानी की मात्रा कम थी, लेकिन उस पर गर्मियों की दालें, हल्दी और ज्वार उगाए जाते थे। अधिकांश लोग निरक्षर थे।
मुझे इस गाँव से लगाव होने का एक कारण था। गाँव से आधा मील दूर स्थित कोरेगांव झील की खासियत यह थी कि दिवाली के आसपास उस इलाके में खूब बारिश होती थी। लेकिन सारा पानी नाले में बह जाता था। श्वेत अधिकारियों ने सोचा कि अगर वे उस पानी को रोक दें, तो यहाँ एक सुंदर झील बन जाएगी। झील बनने के बाद, सर्दियों के मौसम में जंगली बत्तखें भी इस झील में आने लगीं। ब्रिटिश अधिकारियों ने उस जगह पर एक जल निकासी झील बनाने का फैसला किया।
उस समय वही लोग शासक थे। उन्होंने बिना किसी देरी के अपने मन में आने वाली योजनाओं को लागू किया। जिन दो पहाड़ियों से वर्षा का जल बहता था, उन पर डेढ़ से दो सौ फीट ऊँचा मिट्टी का बांध बनाया गया। जलस्तर एक निश्चित सीमा से अधिक होने पर बांध को टूटने से बचाने के लिए, पूर्वी तरफ एक मजबूत पत्थर की दीवार 'निकास' के रूप में बनाई गई। एक पत्थर पर झील के निर्माण का वर्ष 'जनवरी 1921' अंकित है।
उसी वर्ष अक्टूबर में भारी वर्षा हुई। उम्मीद के मुताबिक, झील पूरी तरह से भर गई। कलेक्टर और डीएसपी झील देखने आए। झील को भरा हुआ देखकर डीएसपी ने कलेक्टर से कहा,
“वॉट ए ब्युटिफुल स्पॉट, लेट अस हॅव द स्मॉल रेस्ट हाऊस ऑन द इस्टर्न साइड!”
तुरंत ही पूर्वी तरफ चार कमरों वाला एक विश्राम गृह बनाया गया। इसमें चार कमरे, गद्दे और कुर्सियाँ लगाई गईं। साथ ही, बेहतरीन कांच की प्लेटें, कटोरे और छुरी भी उपलब्ध कराई गईं। विश्राम गृह में एक स्थायी रसोइया नियुक्त किया गया। एक दूसरे चौकीदार को "बंगला रक्षक" के रूप में नियुक्त किया गया।
अगले वर्ष की सर्दियों में जंगली अवस्था में पाए जाते हैं (प्रवासी) उड़ती हुई बत्तखों के झुंड झील पर उतर आए। संग्राहक और उनका परिवार वहीं बंगले में ठहरे हुए थे। दिन भर उड़ती हुई बत्तखों का शिकार करने, जी भर कर झील में तैरने और सूर्यास्त के समय लॉन में मेज़-कुर्सियों पर बैठकर स्कॉच व्हिस्की का आनंद लेने का कार्यक्रम शुरू हुआ। पास की रसोई में रसोइया शिकार की गई बत्तखों को पकाता था।

जब यह सब हुआ तब तो मेरा जन्म भी नहीं हुआ था। तो आप कहेंगे, आपको यह कैसे पता चला?
1960 में, जब मैं अभियोक्ता के रूप में बारशी गया, तो चुम्ब के सरपंच भीमराव मुंडे मुझसे मिलने अदालत आए। उस समय मैं अदालत में अपने कार्यालय में बैठा था। चमत्कार के बाद सरपंच ने मुझसे कहा, "महोदय, कभी गाँव आइएगा। क्या आप भी समझते हैं कि यह शिकार की आवाज़ है?"
वह हट्टा-कट्टा, सांवली त्वचा वाला था, उसने अपने माथे पर गांधी टोपी थोड़ी नीचे झुका रखी थी, और उसने अपने पंप शूज़ धोती से उतारकर दरवाजे के बाहर रख दिए थे।
मैंने यह भी सुना है कि आपके गांव के पास एक अच्छा पिकनिक स्थल है। मैं अगले शनिवार को आऊंगा। क्या वहां ठहरने के लिए कोई सिंचाई बंगला है?
"हाँ, यहाँ पूरा अनुशासन है! बस आप अपने हथियार लेकर आइए!"
शनिवार को मैं अपने साथ पापा शेख को ले गया, जो मेरे साथ तैनात पुलिसकर्मी थे। जैसे ही मैं झील पर पहुँचा, मुझे पल भर के लिए कश्मीर की याद आ गई। आसपास की हरी पहाड़ियाँ और किनारे पर लगे पेड़ झील के शांत पानी में प्रतिबिंबित हो रहे थे, और किनारे पर मुझे लाल पोचार्ड, पिंटेल, बहमानी और मुलाई बत्तखों के झुंड दिखाई दिए। पहाड़ी घाटी से मोर और लंगूरों की आवाज़ें आने लगीं। मेरे साथ आए सरपंच ने मुझे बताया, "परसों तक इस घाटी में जंगली सूअरों के झुंड हुआ करते थे। अब तो कभी-कभार ही 'थिस्की' दिखाई देते हैं!"
छींक क्या होती है?
"यह हिरणों की एक छोटी नस्ल है। जब वे किसी इंसान को देखते हैं, तो वे 'थिस्सास' जैसी आवाज निकालते हैं और 'टैन टैन' की आवाज करते हुए कूदते हुए भाग जाते हैं।"
"बिल्कुल सही। उन हिरणों को अंग्रेजी में ''चिक्स'' कहते हैं!"
"कुर्दवाड़ी के पास स्थित एक स्टेशन का नाम संभवतः इसी कारण से ''चिक हिल'' रखा गया है!"
"पर ये तो बहुत भारी है खाने के लिए! बकरी का मांस तो स्वादिष्ट है! भीमरावन को इस इलाके की पूरी जानकारी है। उस पहाड़ की चोटी दिख रही है, 'जोतिबा', उसके

सामने वंजरवाड़ी है, और उसके आगे 'भूम' तालुका है! "सरपंच जी, तय हो गया, अब से मैं हर शनिवार को इसी बंगले में रहने आऊँगी!" "ज़रूर, आइए, मैं आपकी और सिद्रिम की शादी करवा दूँगा।" "सिद्रिम कौन है?" "सिद्रिम एक वदार है। वो गाँवों में कुएँ खुदवाने का ठेका लेता है। आप ज़रूर उसके दोस्त बन जाएँगे। वो नंबर वन शिकारी है! उसने अपने भाले से अनगिनत सूअर मारे हैं!"
"वाह! तो फिर उनका परिचय कराना ही होगा!"
भीमराव का घर गाँव के दक्षिणी छोर पर था। घर के सामने एक बांध था। उस बांध से पानी पंप करके लाया जाता था। घर के बगल में सरपंच का दफ्तर था। दफ्तर में लोहे का पलंग था। सामने शीशे वाली लोहे की अलमारी थी। एक शाम जब मैं झील जा रहा था, सरपंच ने मुझे अपने दफ्तर बुलाया। दफ्तर जाते समय मैंने उनसे कहा, "सरपंच जी, मैं चाय-कॉफी नहीं पीता। दरअसल, मुझे नींद नहीं आती।"
“छीचे, मैं तुम्हें चाय-कॉफी क्यों दूं!” सरपंच ने कमरे के ताले में लगी चाबी से लोहे की अलमारी का दरवाजा खोला। उसके सामने रम, ब्रांडी, व्हिस्की और जिन की बोतलें रखी थीं! इतने दूरदराज के गांव में रहने वाले सरपंच के घर में विदेशी शराब की बोतलें देखकर मैं हैरान रह गया और बोला, “आप तो सच में बहुत अमीर लग रहे हैं!”
"ओह! महोदय, आप जैसा अधिकारी उनका खुले दिल से स्वागत करने आया है!"
तो आप क्या लेते हैं?
"हमें शराब के नशे में चूर किसी व्यक्ति द्वारा काटी गई चींटी भी खाने को नहीं मिलती। हम अपने ही उगाए संतरे और खट्टे फल खाते हैं।"
मैं सरपंच के साथ दस-बारह घंटे बैठा रहा। “बैठना” का अर्थ है “शराब पार्टी”। लेकिन सरपंच मुझे व्हिस्की देते और खुद चार-पाँच उंगली वाला पटियाला पेग पीते। मैं उसमें थोड़ा पानी मिला लेता, नहीं तो मैं उसे सीधे ही पी जाता! सरपंच उस पर चारमीनार सिगरेट जलाते!
“भाई, आपकी सहनशक्ति तो कमाल की है,” मैंने कहा। इस पर सरपंच ने कहा, “साहब, मैं जवानी में कुश्ती करता था। मैंने कोल्हापुर के आपके खासबाग मैदान में एक चंबा पहलवान से लड़ाई की थी। पंजाबी जाति बहुत ताकतवर होती है, एक घंटे तक ज़बरदस्त मुकाबला चला। आखिर में रेफरी ने फैसला सुनाया! आपका खासबाग मैदान तो वाकई शानदार है! पूरे महाराष्ट्र में कहीं और नहीं मिलेगा!”

मैंने एक बार भीमराव से बस इतना कहा था, "बाबा, आप इतने सालों से सरपंच हैं, आपको कोई विरोधी नजर नहीं आता।"
"पिताजी, मेरे करीबी लोग मुझे 'बाबा' की जगह 'नाना' कहकर बुलाते हैं।"
"तो फिर बात क्या है, अबा, स्वार्थवश राजनीति करने वाला व्यक्ति सत्ता में लंबे समय तक नहीं टिक सकता? इस सरपंच पद से मुझे क्या लाभ होगा? मैंने ईमानदारी और लगन से साठ-सत्तर एकड़ जमीन हासिल की है। मैं इससे संतुष्ट हूँ। अब मैं एक बार जिला परिषद का चुनाव जीतना चाहता हूँ। लेकिन हमारे तालुका की राजनीति तो पूरी तरह से गंदी है!"
"राजनीति में कौन साफ-सुथरा है, नाना?"
"समाज में केवल वही लोग राजनीति में रुचि रखते हैं जो गलत तरीकों से धन कमाते हैं! उन्हें सत्ता चाहिए। इसके बिना उन्हें सम्मान नहीं मिलता? लेकिन गांव में आपका विरोध कौन करता है? उन्होंने आपको बताया ही नहीं!"
"एक जयलय है और दूसरी संध्या।"
नाना कभी भी जालंधर और संदीपान का नाम सीधे तौर पर नहीं लेते थे। ज्वार की कटाई के बाद, कडाब्याओं की बाड़ी गाँव के बाहर रखी जाती थी। एक बार, नाना के विरोधी जालंधर की बाड़ी में आधी रात को अचानक आग लग गई। लोगों की चीखें सुनकर नाना घर से बाहर निकले। उन्होंने अपनी डीजल इंजन चालू की और सामने वाले बांध से पानी पंप करना शुरू कर दिया। उन्होंने गाँव के कुछ लड़कों की कतार बनाई। वे घर से बाल्टियाँ, घड़े और बर्तन लाए और आग बुझाने के लिए उन पर पानी डाला। नाना बाड़ी के सबसे आगे खड़े थे। आग से उनके हाथ जल गए। गाँव में हमारे विरोधी जालंधर की बाड़ी बुझाने के लिए आगे गए नाना के जले हुए हाथों को देखकर मैंने कहा, “नाना, आपका गुस्सा बेकाबू है! जालंधर आपका प्रतिद्वंदी है, अगर उसकी बाड़ी में आग लगती है, तो लगती है। आप उसे बुझाने क्यों गए थे?”
"पिताजी, उनके मूक जानवरों ने क्या किया? क्या वे जानवर भूख से मर जाते या नहीं?"
मैंने नाना की आंखों में मानवता और करुणा देखी।
यह देखकर कि मैं हमेशा झील के किनारे एक बंगले में रहता था, नानी ने मुझसे कहा, "पिताजी, आपके लिए मैं गांव के अंत में एक पहाड़ी पर एक छोटा सा विश्राम गृह

बनवाऊंगी।"
मुझे लगा कि उसने ये बात यूं ही कह दी होगी। लेकिन सच में, नाना ने पहाड़ी पर एक बड़ा कमरा बनवाया। उन्होंने मोटर से टंकी में पानी भरा। उन्होंने कमरे के बगल में एक छोटा सा बाथरूम और शौचालय भी बनवाया।
"अब्बा, आप हमारे विश्राम गृह कब आएँगी?" नानी ने घर के सामने वाले कमरे में मेरे लिए गवरान चिकन पकाते हुए और चूल्हा जलाते हुए मुझसे पूछा। "मैं अगली यात्रा पर ज़रूर आऊँगी। नानी, मुझे पहाड़ी पर बने आपके विश्राम गृह में रुकना बहुत अच्छा लगेगा। मुझे ऐसी जगहें बहुत पसंद हैं जहाँ से सूर्योदय और सूर्यास्त दिखाई देते हैं!"
नाना ने अपनी बेटियों का विवाह एक शिक्षित परिवार में किया। उन्होंने अपने बच्चों को बहुत कुछ सिखाया भी। नाना ने पूरे परिवार के लिए अच्छी व्यवस्था करके इस दुनिया को अलविदा कहा।
अब मैं साल में एक या दो बार बारशी जाता हूँ। चुम्बचा झील तो मैं कभी नहीं चूकता। लेकिन मुझे कभी उस विश्राम गृह में ठहरने का मौका नहीं मिला जो मेरे दादा-दादी ने झील के पास पहाड़ी पर बनवाया था।
०-०-०

१६. “भाभी यू आर ग्रेट”

उस समय, सोलापुर में करीम रामपुरे नाम का एक बहादुर युवक जुआघर चलाता था। उस अड्डे पर कई तरह के जुए खेले जाते थे। सिक्कों और ताश के दांव लगते थे, और कपास के वायदा भाव पर सैकड़ों रुपये का लेन-देन होता था। अब, जब इतने तरह के जुए खुलेआम चलाए जा रहे हों, तो किसी न किसी के संरक्षण की ज़रूरत तो

होती ही है! जब आप "संपर्क" कहते हैं, तो क्या आपको याद नहीं आता? ऊपर से नीचे तक, हर कोई "संपर्क" को जानता है। उप पुलिस अधीक्षक से लेकर पुलिस कांस्टेबल तक, हर कोई करीम को जानता था। वह सबके लिए सैकड़ों रुपये खर्च करता था। मंगलवार को, अगर कोई कांस्टेबल दोपहर में बाजार में करीम से मिलता, तो उसे सौ रुपये का नोट मिलता। करीम हर किसी को उसकी हैसियत के हिसाब से चाय पिलाता था। पुलिस उप अधीक्षक से लेकर हर कोई करीम की "उदारता" का लाभ उठा चुका था।

मैंने इस करीम रामपुरे को कभी देखा नहीं था, चाहे वो काला हो या गोरा। मैंने विभाग के लोगों से ही उसकी "बदनामी" के बारे में सुना था। लेकिन एक दिन, मुझे उसे करीब से देखने का मौका मिला। सिर्फ देखा ही नहीं, बल्कि उसके स्वभाव, उसके साहस और उसकी ईमानदारी को भी महसूस किया। आप सोच सकते हैं कि जुए का अड्डा चलाने वाले में ईमानदारी कैसे हो सकती है; लेकिन ऐसा नहीं है। समाज द्वारा अपराधी करार दिया गया व्यक्ति भी नेक हो सकता है!

उस समय, “शर्मा” नाम का एक आईपीएस अधिकारी “प्रोबेशन” पर सोलापुर आया था। प्रोबेशन यानी, अनुभव प्राप्त करने के लिए प्रशिक्षु के रूप में। प्रोबेशन अवधि समाप्त होने पर, उसे स्थायी रूप से नियुक्त कर दिया गया। इस प्रशिक्षण के दौरान, यदि कोई पुलिस अधिकारी कोई गंभीर मामला दर्ज करता और वह अदालत में “साबित” हो जाता, तो उसे उस अधिकारी के “सेवा रिकॉर्ड” में दर्ज किया जाता था। ज़ाहिर है, जब उसे सोलापुर में ऐसे ही एक “सनसनीखेज” मामले को संभालने के लिए कहा गया, तो “शर्मा” की पहली मुलाकात करीम रामपुरे से हुई!

उस समय करीम के "अवैध शराबखाने" में प्रतिदिन बीस से पच्चीस हजार रुपये का कारोबार होता था। शर्मा ने अपने सबसे भरोसेमंद हेड कांस्टेबल मकांदर को बुलाया। कांस्टेबल और हेड कांस्टेबल अपने बॉस के सामने खड़े होने का एक खास तरीका रखते हैं। मैं उस तरीके को "चापलूसी करके खड़े होना" कहता हूँ।

‘‘मकानदार, कितने साल तुम सिटी मे हो?’’

‘‘मेरी सब हयात सिटी मे गई ।’’

‘‘करीम रामपुरे को तुम पहचानते हो?’’

‘‘हाँ साब, बहोत अच्छी तरहसे मै उसे पहचानता हूँ!’’

‘‘हमको उसके जुगार अड्डेपे रेड डालनेकी है!’’
‘‘हाँ साब’’
‘‘मुझे दो अच्छे पंच चाहिए, कोर्ट मे होस्टाईल नही होनेवाले, समझा?’’
मकान मालिक, जो कि मुख्य कांस्टेबल था, मन ही मन हँसा। "करीम रामपुरे और उसके जुआघर पर छापा मारने की योजना बना रहा है, महोदय! वह छापा मार तो सकता है; लेकिन उस मामले में करीम को दोषी ठहराया जाना नामुमकिन है!" फिर भी, मकान मालिक जानता था कि ऐसा नया, अनुभवहीन और अति उत्साही अधिकारी उसे इस "सौदे" के बारे में कुछ भी नहीं सिखा पाएगा।
‘‘हाँ साब,उसके उपर अभीतक किसी भी अफसरने रेड नही डाली थी!’’
‘‘तो, परसो मंगलवार है, उसी दिन रातको दस बजे ‘‘रेड’’ का बंदोबस्त कर दो!’’
‘‘जी हाँ साहब’’
मंगलवार रात करीब 10:30 बजे एस.पी. शर्मा, हेड कांस्टेबल मकांदर, चौधरी, गायकवाड़ और दस से बारह पुलिस कांस्टेबलों ने करीम के जुआखाने पर छापा मारा। उस समय वहां सात लोग ताश खेल रहे थे। दूसरे कमरे में छह लोग "फ्लश" खेल रहे थे। उनके सामने नोटों के ढेर लगे थे। पुलिस ने जजों के सामने नोटों की गिनती की।
अचानक छापा मारने वाले अधिकारी शर्मा ने लोगों पर पिस्तौल तानते हुए कहा,
‘‘खामोश! अपनी अपनी जगहपे चूप बैठो!’’
दूसरी तरफ पैसे गिन रहे करीम आगे आए और हाथ जोड़कर शर्मा साहब से बोले,
‘‘साब, एक दफा माफ करो!’’
"चुप रहो, बदमाश! मकान मालिक, इसे हथकड़ी पहनाओ!"
मकान मालिक ने करीम को हथकड़ी पहना दी। उस जुआघर से सैंतालीस हजार दो सौ तैंतीस रुपये बरामद हुए। करीम के पास से तेरह हजार रुपये भी जब्त कर लिए गए।
पंचनामा लिखने का काम रात के दो बजे तक जारी रहा। पंचनामा दो विश्वसनीय पंचों, शिवलिंग बलन्नवर और प्रकाश पारसवार की उपस्थिति में लिखा गया। जुआ खेलने के लिए मौके पर मौजूद अठारह लोगों को भी गिरफ्तार किया गया।

अगले दिन, यह खबर "संचार" के पहले पन्ने पर छपी। "ए.एस.पी. शर्मा ने मंगवार पेठ में कुख्यात अपराधी करीम रामपुरे के जुआ अड्डे पर छापा मारा! साठ हजार रुपये से अधिक जब्त।" नीचे दी गई विस्तृत खबर में आरोपियों के नाम दिए गए थे। औपचारिकताओं को पूरा करने के बाद, सोलापुर मजिस्ट्रेट कोर्ट नंबर 2 में करीम और जुआ खेलने के लिए जमा हुए अठारह लोगों के खिलाफ आरोप तय किए गए। इनमें दस चादर कारखाने के मालिक और दो होटल व्यवसायी शामिल थे। इनमें से छह लोग विभिन्न व्यवसायों में धनी थे।

डीएसपी साहब ने शर्मा को बधाई देते हुए कहा, "देखिए, इस मामले में दोषसिद्धि हो!" (मामले को साबित करने की कोशिश कीजिए)

"येस सर!"

उस छापेमारी के लिए शर्मा की हर स्तर पर प्रशंसा हुई। सरकारी अभियोजक के तौर पर मुझे उस मामले को संभालना था। अधिवक्ता राचेटी को आरोपियों की ओर से बचाव पक्ष का काम करना था।

लगभग पाँच फीट चार इंच लंबे, बड़ी-बड़ी आँखों और घुंघराले बालों वाले एडवोकेट रैचेटी तेलुगु समुदाय से थे। लेकिन वे धाराप्रवाह मराठी और अंग्रेजी बोलते थे। आपराधिक मामलों में एडवोकेट रैचेटी का नाम एडवोकेट वर्दे, केलकर, माने और इनामदार के साथ लिया जाता था!

सुनवाई का दिन आ गया। मजिस्ट्रेट और मामले के अन्य गवाहों को बुलाया गया। मुझे पूरा विश्वास था कि मामला साबित हो जाएगा। ग्यारह बजे, हेड कांस्टेबल मकांदर अदालत में मेरे पास आए। उन्होंने सलाम किया और कहा,

"साब एक गडबड हो गई!"

"क्या हुआ?" मैं इतनी अच्छी हिंदी बोल सकता हूँ कि कोई दूसरा व्यक्ति समझ सके।

"साब, वो पंच शिवलिंग, परसो मर गया! टी.बी.से बीमार था ना?"

"ऐसे बिमार आदमीको तुम पंच कायको बनाया?"

"किसको मालुम था साब वो इतने जल्दी मर जाएगा?"

"अच्छा, तो दुसरा पंच प्रकाश तो ठीक है ना?"

"वो ठीक है साब,....."

जब मकान मालिक ने दूसरे मध्यस्थ के बारे में कुछ और नहीं कहा, तो मैंने उनसे कहा, "मकंदर, शर्मा साहब ने आपको पहले ही निर्देश दिए थे कि ऐसे मध्यस्थ नियुक्त करें जो अदालत में असफल न हों, है ना? लेकिन प्रकाश का क्या? मकान मालिक ने जो चौंकाने वाली सच्चाई बताई, उसे सुनकर मैं दंग रह गया।"

प्रकाश सदर बाजार इलाके में एक बेहद लोकप्रिय युवा कार्यकर्ता थे। हर साल नवरात्रि के दौरान, वे सदर बाजार चौक पर लक्ष्मी जी की मूर्ति स्थापित करते थे। नौ दिनों तक देवी के सामने कोई न कोई सांस्कृतिक कार्यक्रम आयोजित किया जाता था। खाली तारकोल के डिब्बों पर तख्ते रखकर एक अस्थायी मंच बनाया जाता था।

प्रकाश की युवा मंडली एक स्थायी सागौन की लकड़ी का मंच बनाना चाहती थी, लेकिन इसमें साठ से सत्तर हजार रुपये का खर्च आएगा। किसी ने करीम रामपुरे को यह बात बताई। करीम ने प्रकाश से संपर्क किया। करीम ने वादा किया कि अगर प्रकाश समस्या का समाधान करने में मदद करेंगे, तो वे उनकी मंडली के लिए सागौन की लकड़ी का मंच बना देंगे।

मुझे इस बात का कोई अंदाजा नहीं था कि उनके बीच क्या बातचीत हुई थी। चूंकि एक मध्यस्थ की मृत्यु हो गई थी, इसलिए मुझे प्रकाश को दूसरे मध्यस्थ के रूप में नियुक्त करना पड़ा। प्रकाश को अदालत में पेश होने के लिए बुलाया गया था। वह अदालत में मुझे आश्वस्त कर रहा था कि प्रकाश सरकार की ओर से गवाही देगा। "चिंता मत करो।"

प्रकाश की गवाही शुरू हुई। मैंने उससे पूछा,

"क्या आप शर्मासाहेब के साथ करीम रामपुरे के जुआ अड्डे पर छापा मारने गए थे?"

नहीं! मैंने पुलिस स्टेशन में अपने हस्ताक्षर करवाए थे। मैं कहीं नहीं गया था!

हो गया! सरकार को बरी कर दिया गया। यह अनुभव मेरे लिए नया नहीं था। इससे पहले भी कई शराबी और जुआरी मुझे धोखा दे चुके थे, जिन्होंने अंत तक सरकार के पक्ष में गवाही देने का वादा किया था।

मैंने अदालत की अनुमति से जिरह की। लेकिन अंत में जो होना था वही हुआ। एसपी शर्मा और अन्य पुलिस गवाहों के बयानों पर विश्वास नहीं किया गया। मामले में बरी कर दिया गया। मैंने अपील दायर की, लेकिन अदालत ने सभी आरोपियों को यह

कहकर बरी कर दिया कि एक न्यायाधीश की मृत्यु हो गई है और दूसरा "विरोधी" है। शर्मा साहब ने बहुत हंगामा किया, लेकिन व्यर्थ!
एक महीने बाद, मेरी मुलाकात प्रकाश से हुई। मैंने उनसे पूछा, "करीम मामले में आप 'विरोधी' क्यों हो गए थे?"
"मैं आपको सच बता रहा हूँ, महोदय। हर साल नवरात्रि के दौरान हम दुर्गा प्रतिमा स्थापित करते हैं। नौ दिनों तक देवी के सामने सांस्कृतिक कार्यक्रम प्रस्तुत करते हैं। खुले बैरल पर तख्ते रखकर बनाया गया मंच दो-तीन बार गिर चुका है। इसलिए, हमारे दल को एक स्थायी सागौन के मंच की आवश्यकता है। लेकिन दल के पास इतने पैसे नहीं हैं। करीम ने मुझसे कहा कि अगर आप मेरे साथ कानूनी काम में मदद करें, तो मैं आपके दल की आवश्यकताओं के अनुसार सागौन का मंच बना दूँगा!"
"क्या करीम बोर्ड को 50-60 हजार रुपये देगा?"
"जी हां, महोदय, उन्होंने मुझसे यही वादा किया था।"
"और आपको लगा कि यह सच था?"
"जी जनाब। वह जुआघर का मालिक करीम कभी झूठ नहीं बोलता। आप देख लेंगे कि वह अपना वादा निभाता है या नहीं।"
एक महीने बाद, प्रकाश ने मुझे बताया। करीम ने सागौन की लकड़ी का एक मंच बनाया और उसे मंडली को दे दिया।
पंद्रह दिन बाद करीम मुझसे मिलने घर आया।
मैंने पूछा, "तुम क्यों आए हो?"
मुझे एक निवेदन करना है!
"कैसे?"
"तुम्हें मेरे घर रात के खाने पर आना चाहिए!"
"करीम, क्या तुम पागल हो? मैं, सरकारी वकील, आरोपी के घर खाने पर कैसे आ सकता हूँ? और मैंने तुम्हारा केस सुलझाने में तुम्हारी कोई मदद नहीं की! मैं नहीं आ पाऊँगा, तुम जाओ!"
करीम ने हाथ जोड़कर कहा,
"मेरे लिए मत आना, बल्कि मेरी पत्नी के लिए आना?"
"क्या? आपकी पत्नी? मैं उन्हें नहीं जानता।"

"आप उसे शायद न जानते हों, लेकिन वह आपको बहुत अच्छी तरह जानती है!"
मैं और भी ज़्यादा उलझन में पड़ गया। जब उसने कहा कि उसकी पत्नी मुझे जानती है, तो मैंने कहा, "कुछ तो गड़बड़ है।" करीम के बार-बार अनुरोध करने पर मैं उसके घर रात के खाने पर आने के लिए राज़ी हो गया।
मंगलवार पेठ में बाजार के पास एक सुनसान गली में करीम का घर था। घर में मक्का और मदीना के धार्मिक स्थलों की तस्वीरें लगी थीं। दरवाजे पर कांच के मोतियों के पर्दे लगे थे। घर से बिरयानी पकने की खुशबू आ रही थी।
करीम ने मुझसे पूछा,
"सर, आपका ब्रांड क्या है?"
"आपने ऐसा क्यों कहा? मैं कभी-कभी शराब पीता हूँ, लेकिन आपको यह किसने बताया?"
"मेरी खुफिया एजेंसी आपकी पुलिस एजेंसी से कहीं ज्यादा भरोसेमंद है। इसके अलावा, 'बीबी' ने कहा, आपको इसे जरूर लेना चाहिए!"
“बिब्बी? तुम्हारी वो बीबी कहाँ है?” मैंने कुछ परेशान होकर कहा।
करीम ने अंदर के दरवाजे से आवाज़ लगाई, "बीबी!"
मन का पर्दा हिला। वह चरमराया। मैंने लालसा से दरवाजे की ओर देखा। उस पर्दे के पीछे से, काले रेशमी साड़ी पहने, गोरी त्वचा और झुर्रियों वाले चेहरे वाली एक युवती आई। उसने बड़े ही विनम्रता से मुझसे हाथ मिलाया और कहा,
"सर, मैं आपका पाठक हूँ। मैंने आज तक आपके सारे उपन्यास पढ़े हैं। मैं आपसे एक बार मिलना चाहता था। करीम की वजह से ही मुझे आपके बारे में पता चला।"
मैंने अवाक होकर कहा, "लेकिन क्या आप मराठी पढ़ सकते हैं? आपको किसने सिखाई?"
"सर, मैं संगमेश्वर कॉलेज का स्नातक हूँ! मैंने बी.ए. में मराठी को वैकल्पिक विषय के रूप में लिया था! आपके साहित्य से मुझे आपकी कई पसंद-नापसंद समझ में आईं। आखिर साहित्य तो लेखक की छवि का दर्पण होता है, है ना?"
मैं इस बारे में कुछ नहीं कह सका! मैंने करीम से कहा, जो पास ही में डिप्लोमैट डीलक्स व्हिस्की की बोतल और गिलास लिए खड़ा था, "डबल पेग पी लो!"
"तुम पानी से बाहर क्यों नहीं निकल जाते?"

"थोड़ा सोडा, थोड़ा पानी"
मैंने अपना गिलास करीम की पत्नी की ओर उठाया, जो मेरी ओर मुस्कुरा रही थी, और कहा,
“भाभी, यू आर ग्रेट, आय विल नेव्हर फर्गेट यू!”
०-०-०

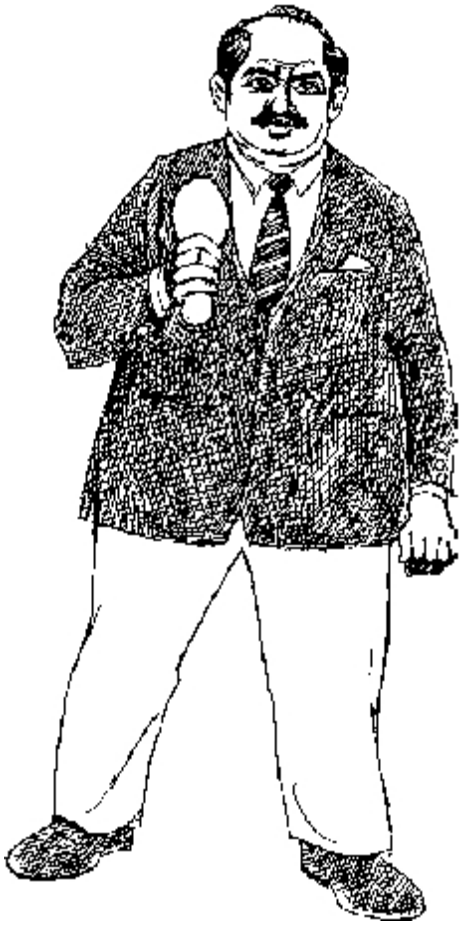

17. ऐसा वकील, ऐसा न्यायाधीश

मैंने जून 1959 में इचलकरंजी मजिस्ट्रेट कोर्ट में पुलिस अभियोजक के रूप में कार्यभार संभाला। "महाराष्ट्र का मैनचेस्टर" कहलाने वाला यह शहर आंध्र, कर्नाटक और तमिलनाडु के बड़ी संख्या में कारीगरों का घर था, जो ऑर्डर पर कपड़े बुनने का

काम करते थे। इसके अलावा, आसपास के क्षेत्रों और इचलकरंजी के निवासी भी रोजगार के अवसरों के कारण इस शहर की ओर आकर्षित हुए।
मजदूरों ने बताया कि यहाँ-वहाँ सब कुछ एक जैसा ही था। वे दिन भर कड़ी मेहनत करते, शाम को कपास के वायदा भाव पर एक-दो रुपये का दांव लगाकर अपनी किस्मत आजमाते, हाथ से चलने वाला भट्ठा जलाते और अपने ठहरने की जगह पर चले जाते। अधिकतर मजदूर काम नहीं करते थे (कोई काम नहीं करते थे)। हालांकि, कुछ लोग अपनी पत्नियों और बच्चों को साथ ले आते थे। जो लोग काम नहीं करते थे, वे वेश्यावृत्ति वाले इलाके में जाते थे। संक्षेप में, उस समय इचलकरंजी में हाथ से चलने वाला भट्ठा, जुआ और वेश्यावृत्ति का धंधा खूब फल-फूल रहा था।
पुलिस विभाग इस सामाजिक-आर्थिक स्थिति से पूरी तरह अवगत था। फिर भी, ऊपर से, यानी डीएससी कार्यालय से आदेश आ रहे थे - हर महीने 10-20 विशिष्ट मामले दर्ज करो, जैसे शराब, जुआ और वेश्यावृत्ति रोकथाम के मामले! साथ ही आंकड़े भी बताए जाते थे कि कितने मामले शराब से संबंधित होने चाहिए, कितने जुए से और कितने वेश्यावृत्ति निषेध अधिनियम के तहत दर्ज होने चाहिए।
ऊपर से आदेश आया और फौजदार और हवलदार अपने-अपने "कोटे" को पूरा करने के काम में जुट गए।
पुलिस को हाथ से बनी शराब की तस्करी और बिक्री करने वाले लोगों की पूरी जानकारी थी। उन्हें जुआरियों, खिलाड़ियों और सट्टेबाजों की भी जानकारी थी। पुलिस स्टेशन में वेश्यावृत्ति से जीविका चलाने वाले लोगों का भी रिकॉर्ड रखा जाता था। उन्हें पुलिस स्टेशन बुलाया जाता था।
"ओह भीमा, इस खेप के लिए शराब के बारह बक्से चाहिए!" फौजदार।
"सर, क्या आप कृपया संख्या थोड़ी कम कर सकते हैं?" भीम्या ने पूछा।
"अरे, हम इससे कम कैसे कर सकते हैं? आदेश तो ऊपर से आया है। कम से कम बारह मामले दर्ज करने होंगे।"
"आपने इसे पिछले बैच को क्यों नहीं दिया? कृपया मुझे थोड़ी छूट दीजिए।"
"तो फिर आप मुझे कितना देंगे?"
"आठ गुना आठ।"

फिर भीमा के खिलाफ आठ मामले दर्ज किए गए। हर मामले को दर्ज करने वाला कांस्टेबल अलग था। कभी-कभी भीमा के गुर्गे ही आरोपी बन जाते थे। न्यायाधीशों का चयन तय था। सभी न्यायाधीश एक ही जाति के व्यापारी थे। उन्हें बर्खास्त कर दिया गया! जुआ और वेश्यावृत्ति के मामले भी इसी तरह दर्ज किए गए।
आरोपपत्र अदालत को भेजा जाएगा। सरकारी वकील होने के नाते, मेरे पास मूल शिकायत, पंचनामा, शराब परीक्षण का रासायनिक विश्लेषक प्रमाण पत्र आदि "मामले के कागजात" के रूप में होंगे।
शुरू में, जब मैं नया था, तो मुझे हर मामला "वास्तविक" लगता था। मैं उन मामलों को पूरी एकाग्रता से संभालता था। लेकिन बाद में, मुझे जल्द ही एहसास हुआ कि ये सारे मामले मनगढ़ंत कहानियों पर आधारित हैं। "तुम इसे रोने की तरह करते हो," मैं इसे "हत्या" की तरह करता हूँ, और पुलिस और अपराधियों के बीच यही सिलसिला चलता रहता है।
एक बार, मध्यावधि अवकाश के दौरान, मैं अदालत के सामने उदया के एक होटल में कॉफ़ी पीने गया। मेरे बगल में, विभाजन के दूसरी ओर, आरोपी, न्यायाधीश और कांस्टेबल, यानी उस मामले के अभियोक्ता बैठे थे, जिसकी पैरवी मैंने अभी-अभी की थी, और वे सब हँस रहे थे। उन्हें इस बात का ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था कि मैं विभाजन के दूसरी ओर हूँ। वे आपस में चर्चा कर रहे थे।
“रानेसाहेब, यह नया सरकारी वकील (कांस्टेबल का उपनाम) कहाँ है?”
“का?”
"अरे, वो अपने जजों को डांट रहा है, कह रहा है कि अगर तुम 'विरोधी' बनोगे तो वो तुम पर मुकदमा करेगा! उसे देने और लेने के लिए क्या है?"
"ऐसा मत करो, इसमें उसका हाथ है, उसने तुमसे काम करवाया है! चुप रहो, गुमान रव्हा। ये इसलिए है क्योंकि तुम्हारे बाल झड़ रहे हैं! बाबा, मेरे लिए एक और भजी लाओ, अगर आप आलू की भजी खाना चाहते हैं तो चन्नप्पा उड़ जाएगा।"
"वड़ा गरम है, क्या हम इसे ले आएं?" लड़के ने कहा।
"ले आओ, मैंने सुबह से कुछ नहीं खाया है।" मुक्का।
यह "संवाद" सुनने के बाद मुझे लगा कि इस "फर्जी" मामले में ज्यादा मेहनत करने का कोई फायदा नहीं है। हालांकि, भारतीय दंड संहिता के मामले में ये गवाह और

शिकायतकर्ता मजबूती से लड़ते हैं। मैं उनके काम पर ध्यान देता था।
उस समय, मुझे शिरोली से किन्नी, घुंकी, वथर, हुपरी रेंडल तक के क्षेत्र में इचलकरंजी की अदालत में "भारतीय दंड संहिता" के तहत मामलों की सुनवाई करनी पड़ती थी। इन मामलों में विविधता थी। शिकायतकर्ता, आरोपी, अपराध में सहयोगी अलग-अलग थे, और हर मामले में अपराध करने का कारण भी अलग था। मुझे शराब, जुआ और "वेश्यावृत्ति अधिनियम" के फर्जी मामलों की सुनवाई करने की तुलना में भारतीय दंड संहिता के तहत मामलों की सुनवाई करना बेहतर लगता था! उस मामले में, जब आरोपी अपने बचाव के लिए एक जाने-माने कानूनी विशेषज्ञ को लेकर आया, तो मुझे भी उससे मुकाबला करने की चुनौती महसूस हुई! मुझे स्वर्गीय केशवराव चौगुले, सगाली के प्रसिद्ध वकील, कोल्हापुर के वामनराव अडके, केशवराव किंकर, बापू कर्मकार जैसे एक से अधिक प्रतिष्ठित वकीलों के खिलाफ काम करने का अवसर मिला।
उसी दौरान, मैंने ऐसे वकीलों को भी देखा जो खुद को कानून का बड़ा जानकार समझते थे। कुरुंदवाड की अदालत में, एक वकील आरोपी का बचाव करते हुए जजों को दिखाने के लिए कई सारे केस कानून लेकर आता था, लेकिन मज़े की बात यह है कि उनमें से एक भी केस उसके काम का नहीं था। सांगली का एक और वकील अक्सर जयसिंहपुर और कुरुंदवाड की अदालतों में आता-जाता रहता था। उसके पास एक छोटी सी मॉरिस कार थी। वह हमेशा जजों से खास गुज़ारिश करता था कि उसके सारे केस एक ही दिन निपटा दिए जाएं। मान लीजिए, अगर उस दिन उसके पास 8-10 केस होते, तो वह हर केस के पक्षकारों से पेट्रोल का पैसा लेता था। सांगली से कुरुंदवाड आने के लिए वह हर पक्षकार से 75 रुपये लेता था। इस तरह उसे दस केसों के लिए 750 रुपये किराया मिलता था। मैंने मज़ाक में उसे 'कार से पेट भरने वाला वकील' कहा!
वकीलों का एक और समूह था। वे अदालत में सिर्फ एक बार अपने कानूनी कागजात दाखिल करने आते थे। उसके बाद, हर सुनवाई में वे एक याचिका दायर करते थे! आज कोल्हापुर की अदालत में एक "हत्या" का मामला चल रहा है, और अगले दिन उच्च न्यायालय में अपील चल रही है। इस तरह वकालत करने वालों में एक "सोसाइटी" वकील भी था। उसने दरवाजे पर अपने नाम का बोर्ड लगा रखा था।

उसके पास डिग्रियां थीं। फिर उस पर लिखा था - "भारत के सर्वोच्च न्यायालय के वकील!" मैंने अपने 30 साल के सरकारी कार्यकाल में उसे कभी कोल्हापुर की किसी अदालत में काम करते नहीं देखा। बाद में मेरा तबादला कोल्हापुर हो गया। न केवल भारत में, बल्कि दुनिया भर में आपराधिक कानून मुख्य रूप से व्यावहारिक ज्ञान पर आधारित है। इसमें किताबी ज्ञान 1/4 है, जबकि (सामान्य ज्ञान) व्यावहारिक ज्ञान 3/4 है। ऐसे में, कई लोग आठ घंटे तक बार लाइब्रेरी में मोटी-मोटी कानून की किताबों में सिर गड़ाए बैठे रहते थे। उनकी वकालत सिर्फ एक काला कोट पहनने तक ही सीमित थी। मुझे अपनी नौकरी की वजह से वकीलों के कई उदाहरण देखने का मौका मिला। कुछ ऐसे महान वकील भी थे जो न्यायाधीशों की अनावश्यक प्रशंसा करके और अहंकार दिखाकर वकालत करते थे, वहीं मैंने ऐसे वकील भी देखे जो वास्तव में अपनी आत्मसम्मान की रक्षा के लिए न्यायाधीशों से लड़ने में सक्षम थे। इस संबंध में एक घटना का उल्लेख करना उचित होगा। उस समय, जब मैं पुराने महल में आपराधिक न्यायालय में कार्यरत था, मेरे सामने अधिवक्ता केशवराव किंकर बैठे थे। बोलते हुए, केशवराव के एक कथन पर न्यायाधीश ने उनसे कहा,
"तुम्हें कानून किस गधे ने सिखाया?"
न्यायाधीश का इस तरह की भाषा का प्रयोग करना गलत था। न्यायाधीश के इस उद्गार से केशवराव किंकर को गहरा आहत हुए। लेकिन उन्होंने अदालत की कुर्सी थामे रखी और कहा, "मैं अभी यहाँ आपके प्रश्न का उत्तर नहीं दे सकता, लेकिन जब अदालत की कार्यवाही समाप्त होने के बाद आप सीढ़ियों से नीचे आएंगे, तभी आपको इस प्रश्न का उत्तर मिलेगा।" कार्यवाही समाप्त होने के बाद, क्रोधित केशवराव बाररूम में नीचे आए। उन्होंने अपना कोट उतारा। उन्होंने अपनी कमीज की आस्तीनें मोड़ीं और फिर नीचे एक नींबू के पेड़ की शाखा पर अपने कोल्हापुरी सैंडल हाथों में लिए खड़े हो गए। उन्होंने कहा कि वे स्वामी के प्रश्न का उत्तर यहीं चौक में देंगे। नीचे, अदालत के क्लर्क ने मजिस्ट्रेट को इसकी सूचना दी। सौ-दो सौ लोग केशवराव के चारों ओर जमा हो गए। अदालत का समय समाप्त हो चुका था, लेकिन मजिस्ट्रेट नीचे आने को तैयार नहीं थे। उन्हें केशवराव को किसी और रास्ते से जाने के लिए कहना चाहिए था, लेकिन कोई दूसरा रास्ता था ही नहीं। अंत में, मजिस्ट्रेट ने क्लर्क के माध्यम से केशवराव को संदेश भेजा, "मुझसे गलती हो गई! मुझे आपका

अपमान नहीं करना चाहिए था।" केशवराव ने मकान मालिक से कहा, "महोदय, आपको यहां आकर मुझसे व्यक्तिगत रूप से माफी मांगनी चाहिए।" मामला और बिगड़ता जा रहा था। तभी बार के वरिष्ठ वकील डी. जी. राणे, बापू कर्मकार, शेल्के और निम्बालकर आगे आए और केशवराव को शांत करने में सफल रहे।

न्यायाधीशों का एक वर्ग ऐसा भी है जो पदभार संभालने के बाद दूसरों को तुच्छ समझते हैं। न्यायाधीशों की शक्तियाँ न्यायालय की चारदीवारी तक ही सीमित हैं। यदि कोई न्यायाधीश कानून को अपने हाथ में लेकर कोई गैरकानूनी कार्य करता है, तो उसे केशव राव की तरह दंडित करने के अलावा कोई चारा नहीं बचता। न्यायाधीशों के मामले में कलेक्टर, डीएसपी और निर्वाचित प्रतिनिधि चुप रहते हैं।

जब लोग कानून को अपने हाथ में लेने वाले न्यायाधीशों के खिलाफ उच्च न्यायालय में शिकायत करते हैं, तो एक सेवानिवृत्त वरिष्ठ न्यायाधीश छड़ी के सहारे पान चबाते हुए आते हैं। वे शिकायतकर्ताओं को अस्पष्ट आश्वासन देकर चले जाते हैं। गैरकानूनी कार्य करने वाले न्यायाधीश को ऊपर से एक साधारण चेतावनी तक नहीं दी जाती।

मैंने अपने कार्यक्षेत्र में ऐसे कई मामले देखे हैं। यदि आम लोग अन्याय के निवारण के लिए संगठित होकर ऐसे न्यायाधीशों के विरुद्ध कानून अपने हाथ में ले लें, तो इसका क्या लाभ?

०-०-०

१८. के. वासुदेव

उस समय मेरी उम्र पंद्रह वर्ष थी। मैं अंग्रेजी की दूसरी या तीसरी कक्षा में पढ़ता था। मुझे पढ़ाई से इतनी नफरत थी कि स्कूल जाने का ख्याल भी भला किसने सोचा होगा? मेरे मन में ऐसे गंदे ख्याल आते थे कि कहीं भूकंप से मेरा स्कूल ढह न जाए। स्कूल जाने के बजाय, मैं अपनी बटेरों को लेकर 'जिती' (अब जयंती) नदी के किनारे घूमता और उनका शिकार करता। कभी-कभी नदी के किनारे बने सुनसान घर के पास

घनेरी की झाड़ियों के नीचे मुझे बटेरें दिखाई देती थीं। उन बटेरों के साथ उड़ने में मुझे एक अलग ही रोमांच महसूस होता था।
मेरे पिता की असमय मृत्यु के बाद, मैं और मेरी माँ लावियार पेठ में अपने मामा के साथ रहने आ गए थे। मेरे मामा अक्कलकोट में सैन्य अधिकारी थे। घर में हम दोनों ही थे। लेकिन पूरा लावियार पेठ मेरी मौसियों, मामाओं के भाइयों और उनके बच्चों का घर था। इसीलिए मेरी माँ को उनसे सहारा मिलता था।
मैं स्कूल से बंक मारकर खास बच्चों के साथ खेलने में माहिर थी, कभी पासा खेलती, कभी शतरंज, कभी बटन-बटन। लेकिन आइना को अपने इकलौते बच्चे के भविष्य की चिंता सताती रहती थी। शादी से पहले उसने कुछ समय यूनिवर्सिटी हाई स्कूल में पढ़ाई की थी। इसीलिए उसे भक्तिसेवा यूनिवर्सिटी हाई स्कूल से लगाव था। चाहे कुछ भी हो जाए, स्कूल बदलने या किसी दूसरे स्कूल में जाने का ख्याल उसके मन में कभी नहीं आया।
एक दिन वह मेरे साथ स्कूल आई। उसने दीक्षित मास्टर से मुलाकात की और कहा, "सर, हमारे बाबा की तबीयत ठीक नहीं लग रही है। इन उड़ने वाले लड़कों की संगति से उनका जीवन बर्बाद हो जाएगा। मैं चाहती हूँ कि उन्हें तपोवन पर बिठा दिया जाए!"
"शांताक्का, तुम्हें समाधान मिल गया है, इसे कल से भेज देना।"
मैं तपोवन में दाखिल हुआ। यूनिवर्सिटी हाई स्कूल के बोर्डिंग स्कूल का नाम 'तपोवन' था। उस बोर्डिंग स्कूल का अनुशासन बहुत सख्त था। मुझे सुबह 4:30 बजे उठना पड़ता था। प्राकृतिक क्रियाएं पूरी करने के बाद, मुझे नीचे लगे नल के ठंडे पानी से स्नान करना होता था। स्नान के बाद, सामूहिक व्यायाम, शक्ति प्रशिक्षण, ध्यान लगाना और फिर 'परंधम' में प्रार्थना होती थी। उसके बाद, दूध और चाय का फूलदान भी वर्जित था। फिर पढ़ाई। वह भी वहीं रहने वाले शिक्षक के मार्गदर्शन में। फिर 10:30 बजे, भोजन में सख्त पाबंदी थी! रोटी या चपाती और कच्ची सब्जियां, साथ में चावली। पिता का रसोइया रोटी को थपथपाता और बीड़ी पर फूंक मारता था। तपोवन के प्रमुख दीक्षित गुरुजी थे। विवाह के बाद ब्रह्मचर्य का व्रत लेने वाले वे एक ब्रह्मचारी थे। दूसरे थे रामदास स्वामी! वे कम बोलते थे, लेकिन जब उन्हें गौर से देखते थे, तो ऐसा लगता था मानो उनकी पीठ पर बेंत रखी हो। उनकी सफेद दाढ़ी, घनी मूंछें, कंधे तक लंबे बाल थे। उन्होंने नेहरू शर्ट पहनी थी, उसके ऊपर जैकेट, कमर पर सफेद

शॉर्ट्स और सिर पर कोशा पटका था। उनका आहार दूध और केले थे। रात में जब वे हमारे साथ बैठते थे, तो चम्मच से उबली हुई सब्जियों की थाली खाते थे। उस समय वे दिल खोलकर बातें करते थे।

दस साल की उम्र तक मेरा पालन-पोषण कोल्हापुर राज्य की संस्कृति में हुआ। मुझे गरमागरम सूप और मटन खाने की लत लग गई थी। वो नमकीन, मुलायम सब्जी का पत्ता थाली से हटता ही नहीं था। उस समय कलाम्बा जेल पास ही थी। मुझे ऐसा लगता था जैसे मैं जेल में हूँ। रात को जागने पर मुझे महल के दिन याद आते थे, सुबह उबले अंडे, कभी ऑमलेट, कभी टोस्ट, पोल्सन मक्खन और केसरिया रंग के कप में कड़क दूध वाली चाय! इस पृष्ठभूमि में, मुझे तपोवन का खाना और माहौल बिल्कुल पसंद नहीं था। किसी गाँव में भाग जाने और किसी होटल में काम करके गुज़ारा करने का ख्याल भी दो-चार बार आया।

लेकिन, ज़रूर कोई दैवीय योजना रही होगी कि मुझे तपोवन का आनंद मिले। तपोवन की मुख्य इमारत के पीछे एक कोने में आठ गुणा दस फीट का कमरा था। उसमें पत्तों के फ्रेम वाला दरवाज़ा था। वहाँ कोई नहीं रहता था। रविवार का दिन था। सुबह करीब नौ बजे अचानक एक व्यक्ति प्रकट हुआ। उम्र लगभग पैंतीस वर्ष। ठोड़ी पर काली दाढ़ी, मामूली मूंछें, कंधे तक लंबे घुंघराले बाल। उस सज्जन के कंधे पर खादी का शबनम बैग, शरीर पर खादी का नेहरू सद्रा, खादी की पतलून और पैरों में साधारण चप्पलें थीं।

दीक्षित गुरुजी गांव में स्कूल जाने की तैयारी कर रहे थे। वे रविवार को भी स्कूल जाते थे। वे अपनी साइकिल पकड़े खड़े थे। अपने सामने आए सज्जन को देखकर उन्होंने कहा, "यह धूमकेतु इस तरह कैसे उग आया?"

घरवाले ने हंसते हुए कहा, "मैं बहुत घूमा हूँ, महोदय, मैंने नैनीताल, माउंट आबू, राजस्थान में बहुत यात्रा की है।"

"ठीक है, हमें इन अनपढ़ लड़कों को कुछ अच्छा काम देने के लिए भी किसी की ज़रूरत थी।" मैं आगे खड़ा था। 'अनपढ़' विशेषण मेरे लिए ही कहा गया था। मैं इतना तो समझ ही गया था। दीक्षित साहब ने मुझसे कहा, "बाबा, आज से तुम्हारे 'रेक्टर' के. वासुदेव हैं! उनकी बात मानो! उन्हें चित्रकला का बहुत ज्ञान है। वे तुम्हें चित्रकला सिखाएंगे!" दीक्षित साहब साइकिल पर सवार होकर चले गए। स्कूल शुरू होने के

बाद हर दिन, गाँव से डेढ़ से दो मील पैदल चलकर, पीठ पर दफ्तर का सामान लादकर तपोवन आने पर, मेरे शरीर में बिल्कुल भी ऊर्जा नहीं बचती थी। और यही तो डॉक्टर का दिन में दो बार का खाना था! मैं तंग आ चुका था। मैंने मन ही मन सोचा, "ये दाढ़ी वाले लोग किस तरह की चित्रकला सिखाने वाले हैं? तपोवन में रहने के लिए दाढ़ी होना तो एक 'योग्यता' होनी चाहिए!"
"चलो, बाटू, अपना कमरा साफ करते हैं!" उसने मेरी पीठ पर हाथ रखते हुए कहा।
"आप यहाँ पर कितने समय से हैं?"
"एक साल हो गया!"
घर पर कौन है?
"कोई नहीं, बस मैं और मेरी माँ। मेरे पिता की मृत्यु हो चुकी है।"
उसकी आँखों में शरारत भरी चमक थी और उसने मुझसे कहा, "खूब पढ़ाई करके तुम नाम कमाओगे!" "किस बात से? मुझे तो स्कूल बिल्कुल पसंद नहीं है।"
"बचपन में स्कूल में रुचि न रखने वाले कई बच्चे आगे चलकर प्रसिद्ध हो जाते हैं!"
के. वासुदेव ने सबसे पहले कमरे से चूहों को भगाया। उन्होंने झाड़ू से कमरा साफ किया। पता नहीं मैं उनकी मदद कर रहा था या नहीं, लेकिन पहली बार उनसे मिलते ही मुझे उनके साथ एक आत्मीयता का अहसास हुआ।
जब मैं काम कर रहा था, वे मुझसे बातें कर रहे थे। “बाटू, शाम को यहाँ गायन के उस्ताद आते हैं, है ना?” “हाँ, सोलहवें आते हैं!”
"क्या आप गाना सीख रहे हैं या नहीं?"
"उम...हाँ, मैंने गाने की कोशिश की, लेकिन उन्होंने मुझे 'धोबी' कहकर पुकारा।"
के. वासुदेव हँसे और मुझसे बोले, "उन्होंने ऐसा इसलिए कहा होगा क्योंकि तुम गायन पर ध्यान नहीं देते। अरे, गायन तो एक कला है जो इंसान को ईश्वर के करीब ले जाती है। अच्छा, क्या तुम्हें चित्रकारी पसंद है? हाँ, लेकिन जब मैं किसी इंसान का चित्र बनाने की कोशिश करता हूँ, तो एक बंदर निकल आता है। फिर मैं उसकी पूंछ बाँधकर उसे पेड़ की डाल पर बिठा देता हूँ।"
"अच्छा, अब से मैं तुम्हें चित्रकारी सिखाऊँगी! तुम्हें स्कूल में कौन सा विषय पसंद है?"
"बिल्कुल नहीं! मैं एक दिन यहाँ से चली जाऊँगी! अधिकारियों ने मुझे मेरी मर्ज़ी के खिलाफ यहाँ रखा है!"

उसने आंखें घुमाईं और मुझे अपने करीब खींचते हुए कहा, "अरे, ऐसा कुछ मत करो। सोचो उस माँ को कितना दुख होगा! मैं बहुत समझदार नहीं हूँ। लेकिन मैं तुम्हें धीरे-धीरे सिखा दूंगा।"

वासुदेव गौशाला से गोबर लाकर कमरा साफ करने लगे। सफाई करते हुए उन्होंने मुझसे कहा, “बौनी गायों के गोबर में कीटनाशक गुण होते हैं।” धीरे-धीरे मुझे के. वासुदेव की संगति अच्छी लगने लगी। वे अपने बाएं हाथ से सुंदर रेखाचित्र बनाते और मुझे अपने सामने बिठाते। मैंने जो रेखाचित्र बनाया था, वह कई वर्षों तक मेरे पास रहा। दिन-ब-दिन बीतते गए।

यह स्वतंत्रता का दौर था। महात्मा गांधी ने ‘चले जाओ’ का नारा लगाया था। ब्रिटिश साम्राज्य हिल रहा था। सांगली और सतारा जिलों के क्रांतिकारी भूमिगत हो गए थे और ब्रिटिश सरकार से बचने की कोशिश कर रहे थे। भैया यशवंतराव चव्हाण, भाई किसान वीर, भैया नाना पाटिल, नागनाथ अन्ना नायकवाड़ी रेलगाड़ियों को अवरुद्ध कर रहे थे और खजाने लूट रहे थे। स्टेशनों में आग लगाई जा रही थी। वे बापूजी के अहिंसा के सिद्धांत में विश्वास नहीं करते थे।

सांगली और सतारा जिलों में क्रांतिकारियों की गतिविधियों की खबरें प्रतिदिन अखबारों में छपती थीं। के. वासुदेव ऐसे अखबार तपोवन लाते थे और उन्हें ध्यान से पढ़ते थे। उस दिन उन्होंने मुझसे कहा, "बटू, मैं कुछ ज़रूरी काम से गाँव जा रहा हूँ। मैं कोल्हापुर वापस आ जाऊँगा। नियमित रूप से पढ़ाई करते रहो, तुम बुद्धिमान और समझदार हो, मुझे पूरा विश्वास है। तुम्हारा भविष्य उज्ज्वल है।"

अगले दिन, सुबह-सुबह के. वासुदेव चले गए। किसी को पता नहीं चला। एक महीने बाद, वासुदेव कहाँ रह रहे थे? पुलिस विभाग को यह जानकारी चाहिए थी कि उनके साथ कौन आ रहा था और कौन जा रहा था। पुलिस ने मुझसे भी पूछताछ की। लेकिन पुलिस को कोई सुराग नहीं मिला।

के. वासुदेव हत्यारों में से एक नहीं थे। वे तो बस भूमिगत क्रांतिकारियों को आपस में जोड़ रहे थे और महत्वपूर्ण काम कर रहे थे।

इसी बीच, मैंने तपोवन छोड़ दिया। वर्ष 1947 का आरंभ हुआ। मैं छठी कक्षा में अंग्रेजी पढ़ रहा था। 15 अगस्त 1947 को दिल्ली के लाल किले पर तिरंगा फहराया गया। क्रांतिकारियों के विरुद्ध मामले वापस ले लिए गए। इसके विपरीत,

क्रांतिकारियों को स्वतंत्रता मिलने के बाद स्वतंत्रता सेनानियों को मानदेय मिलना शुरू हो गया। के. वासुदेव ने मानदेय स्वीकार नहीं किया। लगभग 1948 में, के. वासुदेव फिर से प्रकट हुए। मैं उनसे मिलने तपोवन गया। तब उन्होंने कहा, "बटू, मेरी एक आखिरी इच्छा है! वह क्या है?"

“मेरी यही कामना थी कि भारत माता अत्याचार से मुक्त हो जाए और मैं हिमालय की यात्रा कर सकूँ। मेरी दोनों इच्छाएँ पूरी हो गई हैं। आप कैसे हैं?” उन्होंने मुझसे पूछा।

के. वासुदेव ने हिमालय की चोटियों के ऐसे अद्‌भुत परिदृश्य बनाए थे। मानसरोवर में कैलाश शिखर के प्रतिबिंब की एक तस्वीर दिखाते हुए के. वासुदेव ने मुझे बताया,

"बाटू, जब यह परिदृश्य जर्जर अवस्था में था, तब इतालवी चित्रकार टूरिस्टबाई ने मुझसे कहा, 'मुझे यह जर्जर चित्र बेच दो। मैं तुम्हें पाँच सौ डॉलर दूंगी!' मैंने उसे नहीं दिया। ओह, क्या मैं इस जीवन में कभी किसी की दौलत के लिए लालची हुई हूँ? मैं उसे पाँच हज़ार डॉलर भी नहीं देती।"

जब मैं हिमालय की उन तस्वीरों को देखकर मंत्रमुग्ध हो रहा था, तभी के. वासुदेव उठे। उन्होंने अपने कंधे के थैले से खजूरों का एक गुच्छा निकाला। उन्होंने बर्तन से दूध एक प्याले में डाला और मुझे देते हुए कहा, “छोटे खजूर और गाय का दूध सबसे अच्छा भोजन है! इन्हें कभी-कभार खाइए!” उन्होंने मुझे हिमालय के साधुओं से जुड़ी कई यादें सुनाईं। सरकारी वकील के पद से सेवानिवृत्त होने के बाद, मैंने के. वासुदेव को अपने घर रात के खाने पर आमंत्रित किया। वे बहुत थके होने के बावजूद आए। पुरानी यादें ताजा हो गईं, उन्होंने मुझसे कहा, “दीक्षित महोदय, आप उस समय एक निकम्मे छात्र थे, है ना? मुझे आज उनकी जरूरत है। आपके 670 लोकप्रिय उपन्यासों और 1500 प्राकृतिक दृश्यों, आपकी बी.ए. और एल.एल.बी. की डिग्री को देखकर, मैं कहता, ‘मेरा अनुमान बिल्कुल गलत था!’”

कुछ दिनों बाद के. वासुदेव का भी देहांत हो गया। यह मेरे लिए बड़े सौभाग्य की बात है कि एक अत्यंत संवेदनशील, देशभक्त चित्रकार कुछ क्षणों के लिए मेरे जीवन में आया और चला गया।

(के. वासुदेव, क्रांतिकारी और चित्रकार)

०-०-०

19. स्वतंत्रता सेनानी शिंत्रे

परसों मैंने अखबार में खबर पढ़ी। रेल मंत्री लालू प्रसाद एक स्वतंत्रता सेनानी हैं... मुझे आश्चर्य हुआ! उन्होंने इस बारे में विस्तार से बताया था। भारत के स्वतंत्रता संग्राम के दौरान प्राणों की आहुति देने वाले, कष्ट सहने वाले और जेल तक जाने वाले देशभक्तों को 1,000 रुपये का मानदेय और रेल एवं अनुसूचित जनजाति (एसटी) सेवाओं के लिए देश भर में यात्रा करने हेतु दो पास दिए जाते हैं। एक पास स्वतंत्रता सेनानी के लिए और दूसरा उनके सहायक के लिए होता है, लेकिन लगभग 98 प्रतिशत स्वतंत्रता सेनानी इन पासों को दूसरों को बेचकर पैसा कमाते हैं।

जैसे ही मैंने वह खबर पढ़ी, कागल तालुका के पिंपलगांव के स्वतंत्रता सेनानी सूर्याजी शिन्त्रे मेरे सामने आ गए। मैं उन्हें इस जीवन में कभी नहीं भूलूंगा और वे भी मुझे कभी नहीं भूलेंगे।

मैं कागल की मजिस्ट्रेट अदालत में एक नहीं, दो नहीं, बल्कि बारह वर्षों तक लोक अभियोजक रहा हूँ और आपराधिक मामलों की पैरवी करता रहा हूँ। इन बारह वर्षों के दौरान, मुझे अनेक अपराधियों को करीब से देखने और समझने का अवसर मिला है।

मेरा दफ्तर अदालत परिसर के भीतर कागलकर सरकार के पुराने मकान में था। वहीं मैं सरकारी गवाहों को मुकदमों के जवाब देने के तरीके बताता था। सुबह 11:30 बजे, अदालत का क्लर्क "सरकारी वकील" कहकर पुकारता था और मैं काला कोट पहनकर ऊपर अदालत कक्ष में चला जाता था।

उस दिन अदालत में दो पक्षों के बीच निजी शिकायत होने के कारण मुझे अदालत में थोड़ा देर से जाना पड़ा। अभियोजन पक्ष की ड्यूटी पर तैनात कांस्टेबल पाटिल अदालत में आते ही मेरे पास आते और 100 मिलीलीटर शराब पी लेते थे। अगर वे ऐसा नहीं करते तो उनके हाथ-पैर कांपने लगते थे। कांस्टेबल सुब्रव पाटिल, जो मुझे शराबबंदी के मामलों की पैरवी करने के लिए दस्तावेज़ देते थे और गवाहों के बयानों के बारे में जानकारी देते थे, कई सालों से शराब पीते आ रहे थे, लेकिन किसी ने भी "मानवता" के नाम पर उनके खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की।

उस दिन, रात करीब 10:45 बजे, अदालत परिसर में अफरा-तफरी मच गई। किसी को ठीक से पता नहीं था कि क्या हुआ था। इससे पहले कि मैं कांस्टेबल पाताल से कह पाता कि "बाहर जाकर देखो क्या हुआ है", दो कांस्टेबल, पांच-छह ग्रामीण, पिंपलगांव के तलाठी, पुलिस पाताल और कागल तालुका के मामलदार राजभाऊ मेरे कार्यालय में आ गए।

ममलदार राजभाऊ बाबर की कमीज़ फटी हुई थी। उनके सीने और गालों पर खरोंचें थीं। वे कुछ गुस्से में और उत्तेजित अवस्था में थे। कागल पुलिस स्टेशन के फौजदार तालेकर भी भीड़ को चीरते हुए दफ्तर में आए। मैंने ममलदार बाबर और फौजदार को आगे की कुर्सियों पर बैठने का निर्देश दिया। दफ्तर छोटा होने के कारण, पाटिल

कांस्टेबल ने अंदर आने की कोशिश कर रहे लोगों को बाहर निकाल दिया। मैंने ममलदार बाबर से पूछा कि क्या हुआ था।
वह थोड़ा बैठ गया और मुझे बताने लगा। “हर साल, किसानों की अनाज की आमदनी का एक छोटा हिस्सा सरकार द्वारा तालुका के अनाज गोदाम के लिए 'लेवी' के रूप में वसूला जाता है। चालू वर्ष की लेवी वसूली चल रही थी। पिंपलगांव के सूर्याजी शिन्त्रे दो खंडी धान उगाते हैं। आज सुबह, उनसे लेवी के रूप में धान की एक बोरी लेने के लिए, पिंपलगांव पुलिस, तलाठी और मेरा सहायक सुबह 9 बजे शिन्त्रे के घर गए। धान की बोरियाँ घर के सामने रखी थीं। चूंकि मकान मालिक मौजूद नहीं था, इसलिए हम वहीं रुक गए और मकान मालिक को संदेश भेजा। उनके दो घर हैं, वह दूसरे घर में थे। वह आए। हमने उन्हें अपने आने का उद्देश्य बताया। तभी वह अचानक क्रोधित हो गए और मेरी ओर दौड़े। उन्होंने मुझसे झगड़ा शुरू कर दिया। मेरी कमीज फट गई, मुझे जगह-जगह खरोंचें आईं। उन्होंने मुझसे कहा, 'क्या तुम्हें नहीं पता? मैं एक स्वतंत्रता सेनानी हूँ। मेरा प्रमाण पत्र और सरकार द्वारा दिया गया तांबे का पट्टिका देखो!' 'तुम मेरी अनुमति के बिना मेरे घर में कैसे घुस सकते हो?'"
"मैं सरकारी नौकरी के लिए आया हूँ। हमें कर के रूप में चावल की एक बोरी चाहिए!"
"लेवी बावी को कुछ नहीं मिलेगा! पहले यहाँ से निकल जाओ! तुम्हें क्या लगता है कि असली स्वतंत्रता सेनानी कौन है? तुम भले ही तालुका के मामलदार हो, लेकिन जब मैं कलेक्टर से मिलने जाता हूँ, तो वो भी मुझे देखकर सम्मानपूर्वक खड़े हो जाते हैं, और तुम मेरी अनुमति के बिना घर में घुस जाते हो? कल मैं मुख्यमंत्री से मिलूंगा। अगर तुम्हारा तबादला सीधे चंद्रपुर नहीं हुआ, तो सूर्याजी शिन्त्रे का कोई अस्तित्व नहीं रहेगा। समझे?"
मैंने चुपचाप राजभाऊ की बात सुनी और वहाँ मौजूद कागल पुलिस को बताया, “सरकारी कामकाज में बाधा डालने और एक सरकारी अधिकारी को गाड़ी से कुचलकर उसके कपड़े फाड़ने और मामूली चोटें पहुँचाने के आरोप में सूर्याजी शिन्त्रे के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 186 और 332 के तहत मामला दर्ज करें और उन्हें तुरंत गिरफ्तार करें! यह किस तरह का स्वतंत्रता सेनानी है? एक सच्चा स्वतंत्रता सेनानी कभी ऐसा लापरवाह काम नहीं करेगा और स्वतंत्रता आंदोलन में

सूर्याजी शिन्त्रे की क्या भूमिका थी? अगर उन्हें जेल की सजा सुनाई जाती है, तो मुझे आठ से दस दिनों के भीतर यह जानकारी चाहिए कि उन्हें किस जेल में रखा गया था और कितने समय के लिए।"
सैनिकों ने मुझे सलाम किया और कहा, "जी जनाब, जैसा आपने कहा, मैं आपको सूर्याजी शिंत्रे के बारे में विस्तृत जानकारी प्रस्तुत करता हूँ!"
मेरे सुझाव के अनुसार, राजाभाऊ बाबर ने कागल पुलिस स्टेशन में सूर्याजी शिन्त्रे के खिलाफ शिकायत दर्ज की। कागल पुलिस ने पिंपलगांव जाकर सूर्याजी शिंत्रे को गिरफ्तार कर लिया और उनके खिलाफ मामला दर्ज किया।
इसी बीच, मेरे सुझाव पर, कागल फौजदारों ने इस बात की गहन जांच की कि सूर्याजी शिंत्रे स्वतंत्रता सेनानी कैसे बने। इस जांच से जो जानकारी सामने आई वह बेहद चौंकाने वाली थी।
सूर्यजी शिन्त्रे उसी जेल में सजा काट रहे थे जहाँ स्वतंत्रता संग्राम के दौरान दे.बी. रत्नपन्ना कुम्भार कालबा जेल में सजा काट रहे थे। सूर्यजी शिन्त्रे हर रात रत्नपन्ना के पैर छूते थे और समय-समय पर उनकी मदद भी करते थे। इसलिए, 15 अगस्त 1947 के बाद, रत्नपन्ना ने सूर्यजी शिन्त्रे को लिखित प्रमाण पत्र दिया कि सूर्यजी शिन्त्रे स्वतंत्रता सेनानी के रूप में ताम्रपत्र और मानदेय पाने के योग्य हैं। दे.बी. रत्नपन्ना का प्रशंसा पत्र मिलने के बाद, महाराष्ट्र सरकार ने बिना किसी और जाँच के सूर्यजी शिन्त्रे को स्वतंत्रता सेनानी घोषित कर दिया। उन्हें विधिपूर्वक ताम्रपत्र दिया गया और मानदेय भी शुरू किया गया। लेकिन सैन्य अधिकारी इस जानकारी से संतुष्ट नहीं हुए और उन्होंने इस बात की गहन जाँच शुरू की कि सूर्यजी शिन्त्रे ने स्वतंत्रता आंदोलन में कब, कहाँ और किस प्रकार भाग लिया था, तभी उन्हें एक और चौंकाने वाली जानकारी मिली। सूर्यजी शिन्त्रे को गडहिंगलाज पुलिस स्टेशन की सीमा के भीतर की गई एक डकैती के लिए सात साल के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई थी। दे.बी. रत्नपन्ना ने उन्हें सिर्फ इसलिए स्वतंत्रता सेनानी बना दिया क्योंकि वे उनके साथ जेल में थे। आज भी कई स्वतंत्रता सेनानी हैं जिन्हें ऐसे शक्तिशाली राजनीतिक नेताओं से प्रशंसा मिलती थी और जिन्हें स्वतंत्रता सेनानी होने के नाते सरकारी मानदेय, ताम्रपत्र और यात्रा सुविधाएं मिलती हैं। 1947 में स्वतंत्रता संग्राम में भाग लेने वाले लोग कम से कम अठारह से बीस वर्ष के रहे होंगे। उनमें से कितने वर्ष 2000 में जीवित होंगे?

लेकिन हमारे लोकतंत्र में स्वतंत्रता सेनानियों की संख्या दिन-प्रतिदिन बढ़ रही है। खैर, जो भी हो।

मैंने पुलिस रिपोर्ट के साथ गृह विभाग को एक विस्तृत पत्र भेजा। सूर्याजी शिन्त्रे स्वतंत्रता सेनानी नहीं बल्कि लुटेरा और अपराधी है। यह बताया गया कि अन्ना ने उसे यह प्रशस्ति पत्र इसलिए दिया क्योंकि वह जेल में था। इसके बाद उसके खिलाफ सरकारी कार्रवाई की गई। हालांकि, स्वतंत्रता सेनानी के रूप में उसे मिलने वाला मानदेय रोक दिया गया और उसकी ताम्रपत्र पट्टिका वापस ले ली गई।

उन्हें भारतीय दंड संहिता की धारा 334 के तहत छह महीने के कठोर कारावास की सजा सुनाई गई, क्योंकि उन्होंने एक सरकारी कर्मचारी को उसके कर्तव्य पालन के दौरान चोट पहुंचाई और उसके काम में बाधा डाली।

लालू प्रसाद द्वारा स्वतंत्रता सेनानियों के बढ़ते उत्पीड़न के बारे में खबरें पढ़कर शिंत्रे की मेरी पुरानी यादें ताजा हो गईं।

०-०-०

20. इंदु संगवाकर

जून 1986 में, मैंने 30 वर्षों की सरकारी सेवा से "सेवानिवृत्त" हुआ। पुलिस विभाग में जिन वरिष्ठ अधिकारियों से मैं मिला, उन सभी ने एक लेखक और चित्रकार के रूप में मेरी सराहना की। श्री मधुसूदन कासबेकर, आर.डी. त्यागी, उदयसिंह राजवाडे, उल्हास जोशी, राम गावंडे, रामराव घाटगे, इन आईपीएस अधिकारियों ने मुझे कभी "अधीनस्थ" नहीं माना। मेरी सेवानिवृत्ति के बाद भी, श्री अजीत परसानी, रामराव पवार, अरविंद इनामदार (पूर्व पुलिस महानिदेशक) ने मेरे साथ मैत्रीपूर्ण संबंध बनाए रखे। इसलिए, पुलिस विभाग से सेवानिवृत्ति के 19-20 साल बाद भी, मुझे उस विभाग

के साथ अपने संबंध तोड़ने का कभी मन नहीं हुआ। ये सभी वरिष्ठ अधिकारी थे; लेकिन उनके अधीन उप-निरीक्षकों, निरीक्षकों और सब-इंस्पेक्टरों के साथ मेरी "मित्रता" अभी भी कायम है। खैर, यह सब कहने का उद्देश्य यह है कि यदि मैंने सेवानिवृत्ति के बाद फिर से वकालत शुरू की होती, तो इन सभी अधिकारियों की सद्भावना के कारण यह बहुत सफल होती। लेकिन 31 जून, 1986 के बाद से मैं वकील के तौर पर अदालत नहीं गया हूँ। वकालत न करने का मेरा पक्का इरादा है। हालाँकि बहुत से लोग यह जानते हैं, फिर भी कुछ पुराने परिचित मुझसे सलाह लेने आते हैं, मैं उन्हें समय-समय पर सलाह देता हूँ; लेकिन मैं कोई शुल्क नहीं लेता। कागलकर, जो मुझसे समय-समय पर सलाह लेने आते थे, उस दिन आए थे।

"क्या हाल है दिनकरराव, तुम बहुत दिनों बाद आए हो!" मैंने पूछा।

"बिना काम के मैं आपके पास क्यों आऊं?" आप दिनकरराव से कोई भी सवाल पूछ लें, वह उसका जवाब एक और सवाल से ही देंगे!

मैंने मरीना से चाय बनाने को कहा। दिनकरराव चाय के बड़े शौकीन हैं! वे दिन के किसी भी समय चाय के लिए कभी मना नहीं करते। चाहे मई के महीने में बाहर चिलचिलाती गर्मी हो, मूसलाधार बारिश हो या कड़ाके की ठंड, दिनकरराव एक कप चाय खत्म नहीं कर पाते। उन्हें दो मग भरने पड़ते हैं।

"जी हां, बताओ, दिनकरराव, तुमने क्या काम किया है?"

"यह काम थोड़ा जटिल है! मैं आपके पास इसलिए आया हूँ क्योंकि मैं इस समस्या का समाधान नहीं कर पा रहा हूँ!"

"मुझे बताओ, क्या यह सच है?"

"इंदु, हमारे रिश्ते में तुम्हारी कोई जगह नहीं थी क्या?"

मैंने मुस्कुराते हुए कहा,

"दिनकरराव, तुम्हारी डाइविंग तो वाकई कमाल की है! मुझे इनमें से किसके साथ पहचान बनानी चाहिए?"

"क्या आप पांडव संगवकर की बेटी हैं? उनका नाम इंदु है।" मैंने दिनकरराव की बात समझाने के लिए तेल का एक बर्तन जलाने की कोशिश करते हुए कहा।

"देखो, दिनकरराव, ज़रा ज़रूरी बात करो!" दिनकरराव बोलने लगे। "पांडबा संगवकर की इकलौती बेटी, इंदु। शादी के बाद उसका नाम इंदु दत्ताराम वंदुरकर हो

गया!"
"कितनी दूर?"
“शादी के दस साल में भी उनका बच्चा नहीं हुआ? ये कैसे हो सकता है? अगर ये दस जगहों पर नहीं होता, तो इस साल भारत एक शक्ति नहीं बन पाता!”
"तुम्हारा इससे क्या मतलब है?"
"रुको, मैं अभी-अभी इंडी के पास आया हूँ, सच खुद उसके मुँह से सुनो।"
दिनकरराव इंदु को, जो बाहर एक पेड़ के नीचे बैठी थी, मेरे घर ले आए। इंदु छब्बीस या सत्ताईस वर्ष की थी, गोरी रंगत वाली, हल्की भूरी आँखों वाली, उसके गाल के बाईं ओर एक तिल था, और यद्यपि वह लंबे समय से निःसंतान थी, उसका चेहरा थोड़ा उदास था, फिर भी वह सुंदर दिखती थी। अपने सिर पर दुपट्टा का किनारा हाथ में पकड़े हुए, इंदु मेरे चरणों में गिर पड़ी और मेरे बगल में बैठ गई।
"अरे, बैठो मत; यहाँ उस कुर्सी पर बैठो।"
“नागो नागो वकील साहब, मुझे आपके सामने आने से डर लग रहा था।” इंदु ने कुर्सी पर बैठने से इनकार कर दिया। उसकी भाषा शुद्ध थी। यह दिनकरराव की देहाती भाषा नहीं थी। “तुम्हें कितनी शिक्षा मिली है!”
"मेरी शादी तब हुई जब मैं दसवीं कक्षा में थी।"
"पति दत्तराम क्या करते हैं?"
"मैं एक फोटोग्राफर हूँ, मैं गाँवों में जाकर लोगों की तस्वीरें लेता हूँ, मेरी महीने की अच्छी-खासी कमाई चार से पाँच हज़ार रुपये है। मुझे इस बात का दुख नहीं है कि मैं इतना कमाता हूँ, वकील हूँ; लेकिन मुझे यद्रव की एक जोगतिनी से प्यार हो गया है।"
इंदु की कहानी से यह मामला कुछ दिलचस्प लगा, इसलिए मैं अपनी कुर्सी पर थोड़ा आगे खिसक गया और सुनने लगा।
कुछ देर में अंदर से चाय आ गई। दिनकरराव ने प्याला खत्म कर दिया। शिष्टाचारवश उन्होंने सोचा था कि इंदु को तश्तरी से चाय पिलाएंगे, लेकिन उन्होंने ऐसा नहीं किया। मैंने इंदु के लिए दोबारा चाय बनाने का सुझाव दिया। तब इंदु ने हाथ जोड़कर मुझसे कहा,
"वकील साहब, मुझे चाय नहीं चाहिए। मैं घर पर सुबह सिर्फ एक बार चाय पीती हूँ।"
"ठीक है, आगे बढ़ो,"

"उस बच्चे की माँ कहती है कि वंदूरकर की घटना के बाद से जोगानिला कई दिनों से गायब है!" मैंने थोड़ा गंभीर होते हुए कहा।
"अगर इंदु उस जोगतिनी से बच्चा चाहती है, तुमसे नहीं, तो ठीक है, और बाद में तुम उसी बच्चे को गोद ले लेना!"
इंदु ने माथे पर हाथ मारते हुए व्यंग्यपूर्वक कहा, "अरे वकील साहब, इस दत्ता को इस जन्म में कभी बच्चा नहीं होगा, किसी ने उसकी शादी किसी और से करवा दी है और यह बदमाश कह रहा है कि वह मुझसे गर्भवती है!"
"ऐसा हो सकता है, इंदु।"
“एक मिनट रुको!” इंदु ने प्लास्टिक बैग से निकाली हुई फाइल मुझे देते हुए कहा और आगे बोली, “मैं और दत्ता मिराज गए थे यह पता लगाने के लिए कि मुझे संतान क्यों नहीं हो रही है, वहाँ स्त्री रोग विशेषज्ञ ने मेरी जाँच की। उन्होंने रिपोर्ट दी कि मुझमें कोई समस्या नहीं है। मिराज में दत्ता के वीर्य की भी जाँच की गई। पता चला कि उनके वीर्य में शुक्राणु नहीं थे। मैंने कहा, चलो मुंबई चलते हैं और दत्ता के वीर्य की जाँच किसी अच्छे पैथोलॉजिस्ट से करवाते हैं। मेरे चाचा मंत्रालय में हैं। मैंने उनसे एक जाने-माने पैथोलॉजिस्ट, 'वी. एन. रॉय' से अपॉइंटमेंट लिया और मुंबई चली गई। मुझे डॉ. रॉय की देश-विदेश में पैथोलॉजी की डिग्रियाँ पढ़ने में दो मिनट लगे। रिपोर्ट में विस्तार से बताया गया था कि डॉ. रॉय ने कौन-कौन से परीक्षण किए थे और रिपोर्ट के अंत में लिखा था – “दत्ताराम वंदुरकर के वीर्य में कोई हार्मोन नहीं पाया गया। श्री वंदुरकर से संतान होने की कोई संभावना नहीं है।”
मैं इंदु के साहस की प्रशंसा करता था। एक गाँव में जन्मी इंदु ने अपनी संतान न होने की समस्या का पूरी तरह से समाधान कर लिया था।
"जी हां, अब मुझे बताइए, वकील साहब, क्या जोगतिनी को इस दत्ता से बच्चा होगा?"
मैंने फाइल बंद की और इंदु को सौंपते हुए कहा, "अब तुम क्या काम करती हो?"
"दत्तात्रेय को चंदूर आए एक साल हो गया है! मेरे पास चार भैंसें और अस्सी-दस बकरियां हैं। मेरे पिता कहते हैं, 'आओ और मुझे बताओ;' लेकिन जब तक मेरे हाथ-पैर मजबूत हैं, मैं अपने पिता के दरवाजे पर हिस्सेदारी के लिए नहीं गिरूंगा, वकील साहब।"

मैंने दिनकरवाल से कहा, "मैं इस इंदु की प्रशंसा करता हूँ! अगर उसका पति उसे छोड़ भी दे, तो भी वह अपने पिता के घर नहीं जाएगी, वह खुद कड़ी मेहनत करके अपना जीवन यापन करती है, उसे एक बच्चे का आशीर्वाद प्राप्त है!"
दिनकरराव ने मुझसे कहा, "हम उसे किसी और से शादी करने के लिए कह रहे हैं, लेकिन वह हमारी बात सुनेगी कहां?"
"देखिए, वकील साहब, एक शादी ने इतना दर्द दिया, भविष्य में मुझे इससे बेहतर शादी कैसे मिलेगी?" मैंने इंदु को थोड़ा और गौर से देखा। उसका सुडौल, आकर्षक शरीर, उसकी आँखों की चमक और उसके चेहरे की मासूमियत किसी भी नौजवान को मोहित करने के लिए काफी थी।
इंदु एक बार फिर खड़ी हो गई, मुझसे विदा ली और दिनकर के साथ चली गई। मुझे अब भी इंदु के भविष्य की चिंता सता रही थी।
अगले दिन, दिनकर अचानक सब्जियों की टोकरी लेकर आया। मैंने कहा, "यह किस तरह की टोकरी है?"
"इंदु को बेटा हुआ है, क्या दत्तायाबी उसके साथ रहने आ गई है?"
"अरे दिनकरराव, ये कैसे मुमकिन है? दत्ताराम वंदुरकर इस जन्म में संतान उत्पन्न नहीं कर पाएंगे। क्या किसी अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रसिद्ध रोग विशेषज्ञ ने ऐसी रिपोर्ट दी है?"
"ठीक है, जो भी हो, पहले मुझे कुछ और करने के लिए कहो, ठीक है?"
इंदु को ज़रूर कोई "बॉयफ्रेंड" मिल गया होगा, और बदनामी से बचने के लिए दत्त्या ने इंदु के कुंकवा का नाममात्र का मालिक बनने का फैसला कर लिया होगा!
इस दुनिया में आगे क्या होगा, इसका अनुमान लगाना असंभव है।
०-०-०

21. बोचरी लक्ष्मी

किसी को नहीं पता था कि बोचारी लक्ष्मी कब से पुरुष का वेश धारण कर रही थी! उसका घर जयंती नाले के किनारे था। उसके माता-पिता, भाई-बहन या रिश्तेदार नहीं थे। वह अपना खाना खुद बनाती थी। सुबह छह बजे वह सब्जियों और रोटी से भरा थैला अपने भुने हुए बैग में बांधकर शाहू मिल में काम करने जाती थी। पुरुष का वेश धारण करने वाली लक्ष्मी, पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलाकर काम करती थी। वह पुरुषों के बराबर ही काम करती थी। उस समय आर्थिक तंगी बहुत थी। फिर भी, "लक्ष्मी" को प्रतिदिन दस रुपये मिलते थे। दुनिया में कोई काम न करने वाली लक्ष्मी

को महीने में दो से तीन सौ रुपये मिलते थे। लक्ष्मी के दांत नहीं थे, इसलिए उसे "बोचारी लक्ष्मी" कहा जाता था। वह चरवाहे की तरह सफेद लंबी आस्तीन वाली कमीज, धोती और टोपी पहनती थी।

उसे बीड़ी पीने की लत थी। उसकी कमीज़ की ऊपरी जेब में पिस्तौल के आकार का बीड़ी का बंडल और बीड़ी की एक डिब्बी थी। वह एक बीड़ी दो बार पीती थी। आधी जली हुई बीड़ी को वह अपने बाएं कान से चिपका लेती थी। वह दिन में डेढ़ बंडल बीड़ी पी जाती थी।

शायद अत्यधिक धूम्रपान के कारण, लक्ष्मी की आवाज़ कुछ कर्कश और पुरुषों जैसी हो गई थी। वह हमेशा पुरुषों के साथ ही बाहर जाती थी। नाम से तो वह स्त्री थी। छुट्टी के दिनों में वह तालमी कट्टा आती और पुरुषों से बातें करती। वह वहाँ बिना किसी झिझक के बीड़ी भी ले जाती थी।

चाहे यह उसके पुरुष जैसे पहनावे की वजह से हो या नहीं, उसके होंठ थोड़े फटे हुए थे। उसकी ठुड्डी पर दस-बारह बाल भी उग आए थे। लक्ष्मी इसे एक आभूषण मानती थी। वह किसी के मार्ग का अनुसरण नहीं करती थी। वह किसी के जूते-चप्पल भी नहीं देखती थी। जब भी गली में किसी की शादी होती, उसे ज़रूर आमंत्रित किया जाता था। जब भी गली में किसी की मृत्यु होती, लक्ष्मी को पता चलते ही वह वहाँ पहुँच जाती थी। घर की शोकग्रस्त महिलाओं को सांत्वना देने का उसका तरीका बिलकुल अलग था।

वह अपनी कर्कश आवाज में उन महिलाओं से कहती थीं जो मृतक की प्रशंसा में गीत गाते हुए जोर-जोर से रो रही थीं, "क्या बात कर रही हो, महिलाओं? चाहे आप कितना भी गाओ, क्या वह वापस आ जाएगी? वह कभी उससे नाराज नहीं हुई, अब उसका गला क्यों काटना चाहती हो, बूढ़ी औरतें! क्या तुम्हें लगता है कि तुम भी एक-एक करके उसी रास्ते पर जाओगी?" लक्ष्मी आमतौर पर किसी के भी अंतिम संस्कार में जरूर जाती थीं।

मैंने एक बार शाम को लक्ष्मी को मोहिता की शराब की दुकान पर जाते देखा था। उस समय, अगर लोगों को शराब पीनी होती थी, तो वे छुपकर पीते थे। मैंने कभी किसी महिला को शराब पीते न देखा था। उस शाम, लक्ष्मी ने मुझे शराब की दुकान से बाहर आते देखा।

“कशाला रैन एलिस हिकोरी! क्या मैं तुम्हारी माँ को बताऊँ?”
शराब की दुकान शाम को खुलती थी। उस दुकान के सामने हमारा बटनों से खेलने का मैदान था। उस दिन बटनों से खेलते हुए मेरा एक पीतल का बटन दुकान के पास खो गया। दिन भर में जीते हुए बटनों को गिनते समय मैंने पीतल के बटनों को नहीं गिना था, इसलिए मैं उसे ढूंढने दुकान पर गया। तभी लक्ष्मी ने मुझे देख लिया और मुझे डांट दिया।
जैसे लक्ष्मी कभी किसी के अंतिम संस्कार में जाना नहीं भूलती थीं, वैसे ही वे किसी की शादी में भी जाना नहीं भूलती थीं। वे दूल्हा-दुल्हन के बटुए में पाँच-दस रुपये रख देती थीं और उन्हें दे देती थीं। गाँव में शादी में जाने के लिए वे गाड़ी से जाती थीं। गाड़ी में ड्राइवर के बगल वाली सीट लक्ष्मी की होती थी। शादी में जाते समय लक्ष्मी अपनी रोज़ाना वाली टोपी नहीं पहनती थीं, बल्कि एक पगड़ी, कारखाने में बनी कमीज़ और धोती पहनती थीं, और गाड़ी से कोल्हापुरी चप्पलें ले आती थीं, ताकि अजनबी उन्हें औरत न समझ सकें। एक बार लक्ष्मी निप्पानी में गली में रहने वाले एक गोटेकर के बेटे की शादी में गई थीं। वहाँ महिलाओं और पुरुषों के लिए अलग-अलग उतरने का इंतज़ाम था। जब दुल्हन के घर की औरतें कपड़े बदल रही थीं, तभी लक्ष्मी अचानक उस कमरे में दाखिल हुईं और कपड़े बदल रही औरतें लक्ष्मी को मर्दों के कपड़ों में देखकर चिल्लाने लगीं। उनमें से किसी को भी यह अंदाज़ा नहीं था कि मर्दों के कपड़े पहने हुए लक्ष्मीबाई हैं। लक्ष्मी ने चीखती हुई महिलाओं से कहा, "तुम वेश्याओं, क्यों चिल्ला रही हो? मैं क्या हूँ, अपने पिता?" तभी, दूल्हे के पक्ष की महिलाओं ने शोर देखकर दुल्हन के पक्ष की महिलाओं को लक्ष्मी की असली पहचान बता दी। तभी उनकी जान खतरे में पड़ गई। यही लक्ष्मी एक बार शादी के लिए दफ्तर गई थी। उस समय, महिलाओं और पुरुषों के लिए अलग-अलग शौचालय की व्यवस्था थी। जब लक्ष्मी महिलाओं के शौचालय में गई, तो महिलाएं भी उससे डर गईं। लक्ष्मी हमेशा महिलाओं के शौचालय में ही जाती थी, लेकिन उसके मर्दाना पहनावे और आवाज के कारण, अनजान महिलाएं उसे गलत समझ लेती थीं।
हालांकि, संसार से विमुख "बोचर्या लक्ष्मी" की सलाह बहुत मूल्यवान साबित हुई। जब भी लक्ष्मी आस-पास होतीं, वे बाहर खड़े पुरुषों की गोद में बैठ जातीं, बीड़ी का एक टुकड़ा खातीं और चर्चाओं में शामिल हो जातीं। उन्हें जिस पक्ष की ओर से बोलने

के लिए आमंत्रित किया जाता, वे उसका पक्ष रखतीं। किसी बच्चे का पिता दहेज (उस समय दहेज पर कोई प्रतिबंध नहीं था), मनपान और किसी को कितना पैसा देना चाहिए जैसे मुद्दों पर अटक जाता। तब सभी लोग लक्ष्मी को आगे बुलाकर अपना पक्ष रखने को कहते। लक्ष्मी बीड़ी का एक टुकड़ा खातीं और बच्चे के पिता से कहतीं, "सिर्फ इसलिए कि तुम बच्चे के पिता हो, तुम बच्चे को क्यों छू रहे हो? क्या तुमने हमारी भाभी को नहीं देखा? तुम केला कैसे खा सकते हो?"

अरे! किसने बिना दहेज के उसे जागीरदार बना दिया! तुम हमारी हो, हमारी प्यारी रावला, इसलिए हम तुम्हारे द्वार पर आए हैं। किसी को तो दहेज देकर हमारी भाभी को 'अक्कताई' (लड़की के पिता को दिया जाने वाला दहेज) बना देना चाहिए था।

लक्ष्मी की दयालुता से ऐसे विवाह भी संपन्न हो जाते थे जो अन्यथा संभव नहीं हो पाते। जब भी उन्हें पता चलता कि सड़क पर कोई बीमार है, लक्ष्मी उनसे मिलने जातीं और बीमार व्यक्ति को सांत्वना देतीं।

लक्ष्मी ने एक समय में दुग्ध उत्पादन के लिए सात-आठ भैंसें पाली थीं। इसलिए लक्ष्मी को जानवरों की देखभाल करने, दूध कम होने पर किस प्रकार का भोजन देना है और यदि जानवरों में लार टपकने जैसी बीमारी हो जाए तो उन्हें कौन सी दवा देनी है, इसका काफी अनुभव था।

लक्ष्मी का कोई करीबी वारिस नहीं था, लेकिन उसके पास एक घर और कुछ धन था, इसलिए कुछ स्वार्थी और "संधिसाधु" लोग उसके घर और धन पर नजर रखे हुए थे। जब बेचारी लक्ष्मी साठ वर्ष की हुई, तो मिल में उसकी नौकरी समाप्त हो गई।

बाद में वह बहुत बीमार पड़ गईं और उन्हें सरकारी अस्पताल में भर्ती कराया गया। डेढ़ महीने बाद उनका निधन हो गया।

गली में कई लोग खुद को लक्ष्मी का वारिस बताने लगे क्योंकि वे उसके करीबी रिश्तेदार थे। गली में एक माली और वकील रहते थे। उन्होंने सबको बताया, “लक्ष्मी ने वसीयत बना ली है और अपना घर और कोल्हापुर बैंक में जमा अपनी सारी रकम कोल्हापुर के महिला आश्रम को दान कर दी है।” जो लोग लक्ष्मी को अपना वारिस बता रहे थे, उनके मुंह बंद हो गए। महिला आश्रम को 1.5 लाख रुपये मिलते ही एक हॉल का नाम उनके नाम पर रख दिया गया। कई साल बाद मुझे पता चला कि लक्ष्मी बचपन में बहुत सुंदर थीं। उनकी शादी भी चौदह साल की उम्र में हो गई थी, लेकिन

ससुराल वालों की परेशानियों के कारण उन्होंने अपने पति को छोड़ दिया था। उन्होंने फैसला कर लिया था कि वे अपना बाकी जीवन एक स्त्री के रूप में नहीं जिएंगी। तब से उन्होंने स्त्री का वेश हमेशा के लिए त्याग दिया और पुरुष का वेश धारण कर लिया। मुझे लक्ष्मी आदर्श लगती हैं, क्योंकि वे लोगों की शादियां करवाती हैं, बीमारों को दिलासा देती हैं और अपनी सारी संपत्ति समाज में बेसहारा महिलाओं को दान कर देती हैं।

०-०-०

22. मुराद्य परधी

जनवरी 1967 के बरसात के मौसम में, संक्रांति एक दिन पहले थी। किंक्रांति अगले दिन! महाराष्ट्र में, जब भी कोई बड़ा त्योहार एक दिन पहले होता है, तो अगले दिन कोई न कोई 'सनसनीखेज' कार्यक्रम होता है। होली के अगले दिन धुलवाड़, संक्रांति के अगले दिन किंक्रांति!

दूसरे दिन का जश्न मनाने के लिए शराब और मांस अनिवार्य हैं!

लेकिन 1967 में महाराष्ट्र में शराबबंदी का नाटक चल रहा था। शराब का उत्पादन, परिवहन, बिक्री और सेवन कानून द्वारा प्रतिबंधित था, लेकिन यह प्रतिबंध केवल नाममात्र का था। दूरदराज के गांवों और नदियों के किनारे निर्जन क्षेत्रों में शराब बनाने की भट्ठियां स्थापित की गईं। तैयार शराब को रबर के बैरलों में भरकर शहर लाया जाता था और विभिन्न स्थानों पर बेचा जाता था।

पुलिस विभाग को इस निषेध कानून में खामी नज़र आई थी; लेकिन हर कानून में कोई न कोई खामी होती है। शराबबंदी में भी यही खामी थी। समाज के प्रतिष्ठित लोगों को ‘‘स्वास्थ्य’’ परमिट दिए जाते थे। चिकित्सा कारणों से जारी परमिट के आधार पर, लाइसेंसधारक तीन-चार यूनिट अंग्रेजी शराब (भारतीय शराब) खरीद सकता था।

सरकारी वकील होने के बावजूद, मेरे दोस्तों का परिवार जीवन के हर क्षेत्र से जुड़ा हुआ था। मेरे पिता सेना में मेजर थे, लेखक थे और कवि अक्सर मेरे घर पर रहते थे। फिर बारशी के एक डॉक्टर ने मुझे उपहार में चार यूनिट का परमिट दिलाया। मैं ज़्यादा शराब नहीं पीता, लेकिन मैंने अनुभव किया है कि जब कभी-कभार मिलने वाले इन दोस्तों के बीच "सुरा" (हलचल) मचती है, तो सभी का आपस में अच्छा तालमेल हो जाता है।

इन प्रतिष्ठित लोगों में बरशी के ज़्यादा दोस्त नहीं थे। वे सभी मोटर मैकेनिक, वेल्डर, खराद मशीन पर काम करने वाले और दिन भर खराद मशीनों पर काम करने वाले लोग थे। दिन भर खराद मशीनों पर काम करने वाले ये लोग मुझे बहुत प्रिय थे। क्योंकि जो लोग सुबह से शाम तक पसीना बहाकर अपना जीवन यापन करते हैं, वे मुझे उन लोगों से ज़्यादा करीब लगते हैं जो पल भर में लाखों का कारोबार कर लेते

हैं। मुझे उनके जर्जर घर में कंबल पर बैठकर बैंगन और रोटी खाना किसी पांच सितारा होटल में कॉन्टिनेंटल व्यंजन खाने से कहीं ज़्यादा अच्छा लगता है।
मेरी योजना थी कि त्योहार वाले दिन थोड़ी बहुत शिकार करूं और शाम को अपने परमिट के तहत एक बोतल बीयर खोलूं।
उसी दिन लगभग नौ बजे, फोरमैन गुन्नी, मोटर मैकेनिक, टिन बनाने वाला गुन्नी, स्वामी और ड्राइवर कल्लप्पा गावले गली में मेरे घर आए।
गनी मैकेनिक उनका नेता है। उसने मुझे बताया,
‘‘साब आज किंक्रात है!’’
"हाँ मुझे पता है!"
‘‘हम लोग उपळाई जाना चाहते है!’’
"क्यों? शराब पीने के लिए?"
‘‘हां साब, आप मुराद्या पारधी को पहचानते है ना?’’
"मुरद्या? मैंने आज तक उसके खिलाफ शराब तस्करी के एक दर्जन मामले चलाए हैं। उसे कौन नहीं जानता? वह जाति पंच को अपने खिलाफ भड़काकर बच निकलता है!"
‘‘वो बात अलग है साब! लेकिन आज मुराद्याने हम लोगोंको शराब पिने उसके वस्तीपर बुलाया है!’’
"तो जाओ, ठीक है? उसे मेरी अनुमति की क्या जरूरत है?"
‘‘नही साब, हम लोंग उधर तो पिएंगेच, और वापस आते समय एक दो ‘‘नग’’ लाएंगे!’’
(नग-लिकर की बोतल)
"तो फिर इसके लिए आपको मेरी अनुमति की आवश्यकता क्यों है?"
कल्लप्पा ने मुझसे कहा, "लेकिन पिताजी, आज पुलिस ने नाकाबंदी कर रखी है। बारिश में कोई हमें बोतलें लाने नहीं देगा। इसलिए हमारी आपसे एक निवेदन है। अगर आप हमारी गाड़ी में होंगे, तो पुलिस हमें रोककर तलाशी नहीं लेगी। बल्कि, आपको देखकर वे हमें 'सलाम' करेंगे!"
मैं जोर से हँस पड़ा और बोला, "क्या शानदार विचार है! सरकारी अभियोक्ता को गवाह के तौर पर साथ में शराब की बोतलें लाना? हम्म? यह किसका विचार था?"

गन्नी फोरमन म्हणाले, “साब, मुराद्याने आज केळी और मुसंबीकी शराब बनवाई है! हमेशा ऐकी शराब नहीं मिलती!”
मुझे लगा था कि ये लोग बड़ी उम्मीदों के साथ मेरे पास आए हैं। आज, त्योहार के दिन, उन्हें खास मौसंबी और केले की शराब पीने को मिल रही है, इसलिए मुझे जाना ही पड़ा! ये लोग शराब पिएंगे। मैं अपनी 22 कैलिबर की बंदूक से चार-दो छेद या रेत के टीलों पर निशाना लगाऊंगा। साथ ही, मुझे इन लोगों के संगीत कार्यक्रमों में शामिल हुए बिना एक अलग माहौल में दिन बिताने का मौका भी मिलेगा।
मैंने अपने कपड़े बदले। मैंने शिकारी का वेश धारण किया। मैंने अपने कंधे पर 22 कैलिबर की बंदूक टांग ली। मैंने अपने बैग में एक बीयर की बोतल और एक ओपनर रखा और निकल पड़ा। मेरे पिछले सरकारी वकीलों ने मुराद्या परध्या के खिलाफ आठ-दस शराब के मामले चलाए थे। जब से मुझे पता चला कि मैंने उसका जिम्मा संभाला है, कुछ लोग किसी न किसी कारण से मेरे करीब आना चाहते थे। उसने कल्लप्पा से एक-दो बार यह भी कहा, "सैबाना को हमारी बस्ती में ले आओ। आंगन चित्तूर से भरा है। वहां खरगोश भी हैं।"
कल्लप्पा ने उसे कभी न कभी मेरे शिकार के शौक के बारे में जरूर बताया होगा। जब वह दरबार में पेशी के लिए आते थे, तो गंदी कमीज और पगड़ी पहने होते थे; लेकिन आज मैंने उनमें एक अलग ही भाव देखा। उन्होंने लाल टी-शर्ट, खाकी पैंट पहनी हुई थी और हाथ में घड़ी थी। वे सबका स्वागत करने के लिए उत्सुक थे।
जैसे ही उन्होंने मुझे देखा, उन्होंने विनम्रतापूर्वक हाथ जोड़कर मुझसे कहा, "सायेब, तुम आ गए, मुझे बहुत खुशी हुई। तुम्हारे पैर मेरी गरीब की झोपड़ी पर पड़े हैं।" उनकी बातें किसी ग्रामीण फिल्म के नायक की तरह थीं।
"इसके लिए अपने दोस्तों को धन्यवाद दें। दरअसल, सरकारी अभियोजक के लिए अपराधियों के घर जाना सही नहीं है; लेकिन इन लोगों के लिए मुझे मजबूरी में आना पड़ा।"
“चलिए, अब अच्छा खाना खा लेते हैं; मैंने चिकन काट लिया है, पता नहीं आज मैं किंकराट में हूँ।”
"नहीं पिताजी, मैं देखूंगी कि क्या मुझे कोई मिल सकता है जिसके साथ मैं सो सकूं। आप सो सकते हैं, लेकिन याद रखें कि मुझे 8:30 बजे घर पहुंचना है।"

चलते-चलते मुझे मुराद्या के घर में झाँकने का मन हुआ। क्योंकि मैंने जूते पहने हुए थे, इसलिए मैंने दरवाजे से अंदर देखा और आश्चर्यचकित रह गया।
मुराद्या की रसोई में सब कुछ एकदम चमक रहा था। स्टेनलेस स्टील के कटोरे, प्लेटें, कांटे, चम्मच, कप और बिस्तर पर बॉम्बे डेरिंग की चादर! तभी, मुड़कर मैंने जूट के फोरमैन से कहा, "यह किसी वेश्या का घर तो नहीं लगता!"
"तुम्हें कैसा लगेगा? मुराद्या की पत्नी ने दसवीं कक्षा पास कर ली है!"
"आप क्या कह रहे हैं?"
"अरे महोदय, आपके पास तो उपन्यास लिखने के लिए एक बढ़िया विषय है!"
कल्लप्पा ने कहा, “पिताजी, यह मुराद्या परंड्याला सिद्धप्पा हुंडेकारी सावकरा के खेत में दस साल तक पहरेदार के रूप में काम करता था। उसकी पत्नी हुंडेकारी सावकरा की इकलौती बेटी है! उसे मुराद्या से प्यार हो गया। दोनों भाग गए और शादी कर ली। सावकरा बहुत क्रोधित हुआ। लेकिन दंपति औरंगाबाद में ही बस गए। अब उनके दो बच्चे हैं।”
"वे कहां हैं?"
उन्होंने उन दोनों को औरंगाबाद पढ़ने के लिए भेज दिया।
जब हम बातें कर रहे थे, तभी मुराद्या की पत्नी रत्ना खेत से सब्जियां लेकर लौटती हुई दिखाई दीं। वह अंदर गईं, हाथ-पैर धोए, बाल संवारे, बाहर आईं और मुझसे बेझिझक बोलीं,
"सर, आपका आना बहुत अच्छा लगा। मैं आपसे काफी समय से मिलना और बात करना चाहता था।"
"मुझसे? तुम क्या कहने वाले थे?"
"कल्लप्पा दादा ने मेरे बारे में तुम्हें सब कुछ बता दिया है, है ना?"
"हां, आपकी प्रेम विवाह, भागकर शादी करना, आदि।"
"तो महोदय, यह बूढ़ा आदमी हमारे इलाके में मेरे पिता के यहाँ आठ साल तक काम करता रहा। उस समय वह बहुत नेक था। उसे तंबाकू, पान, बीड़ी या कढ़ी की लत नहीं थी, लेकिन उसकी शादी हुई, बच्चे हुए और सब कुछ बिगड़ गया! उसने शराब पीना शुरू कर दिया। वह इस धंधे में खूब पैसा कमाता है, लेकिन मुझे बचपन से ही परिवार-केंद्रित संस्कृति में पाला-पोसा गया है। मुझे लगता है कि लोगों को शराब की

लत लगाकर पैसा कमाना पाप है। मैंने कई बार हाथ जोड़कर उससे कहा, 'यह बुरा धंधा छोड़ दो। हमारी ज़रूरतों के लिए ज़मीन काफ़ी है, मैं भी तुम्हारे साथ खेत में काम करूँगी। कल तक बच्चे बड़े हो जाएँगे।' बताइए, क्या लोग तुम्हारे बच्चों को इसलिए नीची नज़र से देखेंगे क्योंकि तुम्हारा पिता अपराधी था और शराब का धंधा करता था? अगर वह अब यह धंधा नहीं छोड़ता, तो मैं उसे तलाक दे दूँगी।"
मुझे बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि उस बस्ती में ऐसा कुछ होगा। मुझे समझ नहीं आ रहा था कि रत्ना से क्या कहूँ। उस दिन मैंने न सिर्फ शिकार नहीं किया, बल्कि रत्ना के सामने अपनी बीयर पीने का भी मन नहीं कर रहा था। मुझे आज भी वो सूखा "किंक्रांट" याद है।

०-०-०

23. पद्मबाई

महाराष्ट्र में पद्मा चव्हाण को "खूबसूरती का एटम बम" कहा जाता है। वह हमारी और उनकी कई सालों की करीबी दोस्त हैं। पद्माबाई, जो हमेशा मुंबई में रहती थीं, काम के सिलसिले में कोल्हापुर आती थीं। हर महीने, वह मरीना को फोन करती थीं। "क्या मैं आज शाम आपके घर खाने पर आऊं?" माई कहतीं, "इसके लिए आपको किसी से इजाज़त क्यों चाहिए?"

पद्माबाई खाना खाने आती थीं, लेकिन आते ही ज़ोर से हंसने लगती थीं। वे मेरा मज़ाक उड़ाते हुए कहती थीं, "बाबा, आप बिल्कुल गलत हैं। कितने सालों से मुझे देख रहे हो; वही पैंटी, वही कमीज़, अब बदल लो!"

मैं पहले "बेबी" कहती थी। हम उन्हें उनके उपनाम "बेबी" से बुलाते थे। अब मैं इतनी बड़ी नहीं हो गई हूँ कि लोग मुझे घूरें!

"ऐसा मत कहो। आजकल मुंबई में तुम्हारे उपन्यास खूब पढ़े जा रहे हैं! यह मत सोचो कि तुम्हारी लोकप्रियता कम है! कोई नई तस्वीरें आई हैं क्या?"

मैं सिनेमाघर नहीं जाता। मेरी कहानियाँ और उपन्यास पसंद करने वाले ही आते हैं।

"बाबा, मुझे बताइए कि आपकी 'ज्योतिबा की प्रतिज्ञा' सुनी गई है या नहीं?"

"ये सब तुम्हारी वजह से है!"

"आह, हा हा हा! ओह, आपने वह उपन्यास मुझे ध्यान में रखकर ही लिखा था, है ना?"

पद्मबा को उपन्यास पढ़ना बहुत पसंद था। उनके संग्रह में मेरे लिखे उपन्यासों की केवल एक प्रति थी। वे समय-समय पर मेरे साथ उपन्यासों पर चर्चा भी करती थीं।

उस दिन मैंने कहा, "यह बिलकुल सच है। आपके अलावा उस 'भूमिका' को निभाने के लिए कोई और योग्य नहीं था! आपके अलावा यह काम और कौन कर सकता था, जब डीएसपी सरजा, जो एक लुटेरे को पकड़ने के मिशन पर आए थे, उनकी बेटी को उसी लुटेरे से प्यार हो गया?"

मेरे उपन्यास "पद्मजा" पर आधारित मराठी फिल्म "ज्योतिबाचा नवाज़" बहुत लोकप्रिय हुई थी। पद्माबाई ने "पद्मजा" की भूमिका बखूबी निभाई थी, जो अपने प्रेमी से मिलने के लिए पहाड़ों की यात्रा पर निकलती है।

हमारा रिश्ता सिर्फ पेशेवर नहीं था। हम सुख-दुख में एक-दूसरे का सहारा बनते थे। मेरी बहन पद्माबाई उमेश की शादी के लिए मुंबई से आई थीं। दत्त मंगल खरार में भारी भीड़ जमा थी। महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री भी आए थे। विभिन्न क्षेत्रों से मेरे मित्र उस समारोह में उपस्थित थे। स्थानीय राजनीतिक नेता भी मुख्यमंत्री के समर्थन में इकट्ठा हुए थे।

जब पद्माबाई ने अहेरा की चांदी की थाली हाथ में लिए, सिर पर घूंघट डाले नौ परतों वाली साड़ी पहने, विवाह मंडप में प्रवेश किया, तो चारों ओर कानाफूसी मच गई। सबकी निगाहें पद्माबाई की शाही सुंदरता पर टिकी थीं।

पद्माबाई को अपनी अपार लोकप्रियता के कारण दस गुना अधिक मानसिक पीड़ा सहनी पड़ी। जिस व्यक्ति ने एक अन्य व्यक्ति को शरण दी थी, उसने पद्माबाई के खिलाफ सत्ताईस हजार रुपये की धोखाधड़ी का आपराधिक मामला दर्ज कराया। वह व्यक्ति समय-समय पर पद्माबाई के फोन, बिजली और अन्य बिलों का भुगतान करने के लिए पैसे लेता था। कृतज्ञता के प्रतीक के रूप में वह बिलों पर अपना नाम लिख देता था। जब पद्माबाई को उसके धोखे का पता चला, तो उन्होंने उसे घर से निकाल दिया। वह कृतघ्न बदमाश तेजाब का बल्ब लेकर उनके फ्लैट के आसपास घूमने लगा। पद्माबाई ने फिल्मों के साथ-साथ मराठी नाटकों में भी काम किया। मराठी दर्शक जयवंत दलवी के नाटक में उनके द्वारा निभाई गई "कल्याणी" की भूमिका को नहीं भूले हैं। इसलिए जब सांताक्रूज पुलिस स्टेशन के पुलिसकर्मियों को पता चला कि वह व्यक्ति पद्माबाई को अपमानित करने की कोशिश कर रहा है, तो उन्होंने उसे पकड़ लिया, गाड़ी में बिठाकर थाने ले आए और उसकी जमकर पिटाई की।

गुस्से में आकर उन्होंने पद्माबाई के खिलाफ झूठा आपराधिक मामला दर्ज करवा दिया। मुझे फोन आया, "बाबा, आप जैसे चाहें जाइए। अगर आप खाना खाने बैठे हैं, तो मुंबई आकर हाथ धो लीजिए।" मैं मुंबई गया। चूंकि अदालती मुकदमे मेरा पेशा हैं, इसलिए मैंने पद्माबाई का मामला संभालने के लिए मुंबई के एक जाने-माने वकील को नियुक्त किया और मन की शांति के साथ कोल्हापुर लौट आया।

तीन महीने बाद फिर फोन आया। "पिताजी, तुरंत निकल जाइए। वह मृत वकील मेरा केस नहीं देख रहा है; बल्कि उसने मुझमें और अधिक 'रुचि' विकसित कर ली है! मैं आपको सब कुछ व्यक्तिगत रूप से बताऊँगी। तुरंत निकल जाइए।"

मैं गया। बेबी ने जो सच बताया वह भयावह था। वह वकील उसे अजीब-अजीब समय पर अपने दफ्तर बुलाता था और उसे जलती हुई सिगरेट के टुकड़े देता था! वह मानसिक विकार से ग्रसित एक क्रूर व्यक्ति था।
यह सुनकर मैंने कहा, "बेबी, तुम कुछ गलत कर रही हो!"
क्या आपको नहीं लगता कि मैं जो कह रही हूँ वह सच है? बेबी कुछ गुस्से में खड़ी हो गई। उसने मेरी तरफ पीठ कर ली और अपना ब्लाउज़ उतार दिया। उसकी पीठ पर जलने के निशान थे। उसने ब्लाउज़ वापस पहन लिया और बटन लगाकर बोली, "मैं अब और नहीं जीऊँगी!"
"आप मुझसे क्या करवाना चाहते हैं?"
मुझे पूरी रात नींद नहीं आई। अगली सुबह मैं पद्माबाई को वकील के कार्यालय ले गया।
पद्माबाई और मुझे साथ देखकर वह चौंक गए। मैंने यूं ही कहा, “महोदय, हमने आपको इस मामले की पैरवी करने के लिए नियुक्त किया था, लेकिन आपने उनके साथ क्रूरतापूर्ण व्यवहार किया है! हमें मामले के कागजात वापस चाहिए।”
उस बदमाश ने लापरवाही से सिगरेट का धुआँ उड़ाते हुए मुझसे कहा, "अगर मैं बैंक को नकदी के कागजात नहीं देता, तो तुम क्या करोगे?"
"हार नहीं मान रहे? मैं तुम्हारे मुवक्किल को पूरे राज्य में मुख्य न्यायाधीश के पास ले जाऊंगा और उन्हें चोटें दिखाऊंगा! मैं यह सुनिश्चित करूंगा कि तुम्हारा लाइसेंस रद्द हो जाए!"
उन्होंने विनम्रतापूर्वक पद्मबाई के दस्तावेज़ लौटा दिए, और वहीं से मैं दादर आ गया। भाई प्रधान नाम के एक आपराधिक वकील मुझे जानते थे। मैंने उन्हें पूरी कहानी बताई। वे पद्मबाई का केस संभालने के लिए तैयार हो गए।
मुकदमा चलता रहा। फैसला आ गया। फैसले वाले दिन पद्माबाई ने मुझे मुंबई वापस बुलाया। रात को हम खाने की मेज पर बैठे! बेबी बहुत भावुक हो गई। उसने मुझसे कहा, “बाबा, अगर मुझे कल सजा मिली तो मैं आठवीं मंजिल से कूदकर आत्महत्या कर लूंगी!”
"वो समय कभी नहीं आएगा। बेटा, मैंने पच्चीस साल तक सरकारी वकील के रूप में काम किया है, इस मामले में तुम्हें दोषी ठहराए जाने का कोई चांस नहीं है। भाई

प्रधान ने मुझे परसों ही अभियोजन पक्ष के गवाहों से हुई जिरह की प्रतियां दिखाई थीं। मैं शर्त लगाता हूँ कि तुम बरी हो जाओगी! तुम्हें निश्चित रूप से रिहा कर दिया जाएगा।"

मेरा अनुमान सही निकला। वादी द्वारा दायर शिकायत पूरी तरह झूठी थी। पद्माबाई बरी हो गईं। फैसले के समय अदालत में अखबार के पत्रकारों और फोटोग्राफरों की भारी भीड़ थी। क्योंकि आज "परमाणु बम" के भाग्य का फैसला अदालत में होगा, यह खबर बड़े-बड़े अक्षरों में छपी थी। फैसला सुनने के बाद भी पद्माबाई के चेहरे पर कोई भाव नहीं बदला। हम पत्रकारों और फोटोग्राफरों की भीड़ के बीच से होते हुए आगे बढ़े। पद्माबाई फैसले के बारे में कुछ नहीं कह रही थीं। मुझे उनका व्यवहार कुछ रहस्यमय लगा।

वह खुद फिएट चला रही थी। मैंने मुंबई में सिर्फ दो युवतियों को देखा है जो सरैता की तरह गाड़ी चलाती हैं। उनमें से एक पद्माबाई हैं और दूसरी प्रिया तेंदुलकर!

उस शाम पद्माबाई ने कोंकणी शैली में पापड़ों की करी बनाई। उसमें झींगे तले गए थे। उनकी पाक कला का स्वाद चखने वाले ही इसे समझ पाएंगे।

मेरे दिमाग का तनाव भी कम हो गया था। मैं बाथरूम गई और ठंडे पानी से नहाया। मलमल की बनियान और पजामा पहने मैं हॉल में बैठकर कागज़ों को छाँटने लगी। रसोई से तले हुए झींगों की स्वादिष्ट खुशबू आ रही थी। मेरी भूख भी शांत हो गई थी। मैंने कहा, "बेबी, अब मेरी साँसें रुक रही हैं।"

"तुम क्या कर रहे हो? तुमने नहा लिया है, मैं भी नहाना चाहता हूँ!" उस मरे हुए आदमी के नाम पर! चलो शांति से साथ खाना खाते हैं!"

उस समय बेबी फ्लैट में अकेली थी। पति-पत्नी के बीच मतभेदों के कारण तलाक का मुकदमा चल रहा था।

नन्ही अंगो नहाने के लिए बाथरूम गई। पच्चीस मिनट बाद, वह अपनी पसंदीदा गुलाबी जॉर्जेट साड़ी और मैचिंग ब्लाउज़ पहनकर बाहर आई। उसके हाथ में एक छोटी ट्रे थी, जिसमें जॉनी वॉकर ब्लैक लेबल की एक बोतल, दो गिलास और सोडा था। उसने ये सब मेरे सामने रखी चायदानी पर रख दिया और मेरे पैर पकड़कर खूब रोने लगी। मैं भी भावुक हो गई। मेरी आँखों से भी आँसू बहने लगे।

"बाबा, मैं इस संकट से केवल आपकी वजह से ही बाहर निकल पाया। आपकी दया कई जिंदगियों के लिए पर्याप्त नहीं होगी।"
"ऐसा मत सोचो, बेटा। ऐसी स्थिति में तुम्हारी मदद करना मेरा कर्तव्य था!"
मैंने उनके आँसू पोंछे जो मेरे पैरों पर गिरे थे; फिर मैंने स्कॉच की बोतल खोली, उसमें दो पेग डाले, सोडा मिलाया और अपना गिलास उठाते हुए बम्बी से कहा, "रानी के लिए चीयर्स, और पद्मा चव्हाण की सम्माननीय शपथ!"
मुझे पद्मबाई की कितनी यादें साझा करनी चाहिए? उनके निधन से पंद्रह दिन पहले, मैं अपने मित्र विलासराव मोहिते के साथ गया था क्योंकि वह ठाणे की अदालत में काम कर रहे थे।
पद्माबाई को सरकारी कोटे के माध्यम से मुलुंड की पार्श्वनाथ हाउसिंग सोसाइटी में एक फ्लैट मिला।
मुझे अचानक देखकर वह बहुत खुश हुई। जब कोल्हापुर की बात उठी तो उसने मुझसे कहा, "बाबा, मैंने अब फोटोग्राफी छोड़ देने का फैसला कर लिया है!"
‘‘का होऽऽ?’’
"मैं अपनी दिवंगत चाची, चाची और दादी का काम करने के लिए पैदा नहीं हुई थी, फिर भी मैंने इतने साल काम किया। मैंने चार पैसे कमाए; अब मैं रिटायर हो जाऊंगी। इस फ्लैट का खरीदार आधा करोड़ रुपये का है! मैं इस फ्लैट को पांच साल तक बेच नहीं पाई। पंद्रह दिन में पांच साल पूरे हो जाएंगे! मैं इसे बेच दूंगी, मैंने कोल्हापुर के नागाला पार्क में एक फ्लैट बुक कर लिया है! आप रिटायर हो जाइए। मैं भी रिटायर हो जाऊंगी! अब हर रविवार सुबह हम अपने टेंट और टिफिन में चपातियां भरेंगे, झील के किनारे ठंडी बीयर पिएंगे, बातें करेंगे, मैं खुश हूं! अच्छा, अब क्या पिएंगे, बाबा? चाय, कॉफी ?!"
मैंने विलासराव की ओर देखा। उन्होंने कहा, "कुछ भी चलेगा!"
"रुको, मैं तुम्हें श्रीनगर से विशेष रूप से मंगवाया हुआ केसर का सिरप देता हूँ।"
मैंने कहा, "इसकी कोई जरूरत नहीं है।"
"नहीं, नहीं, एक घूंट पीने के बाद आपको समझ आ जाएगा! मैंने अपने जीवन में पहली बार केसर का सिरप चखा है।"

पद्माबाई को अलविदा कहने के बाद, विलास और मैं लिफ्ट से नीचे आ गए। कार में बैठने से पहले, मैंने पाँचवीं मंजिल पर पद्माबाई के फ्लैट की छत की ओर देखा। पद्माबाई छत पर खड़ी थीं और मुझे हाथ हिलाकर अलविदा कह रही थीं।

वह हमारी आखिरी मुलाकात थी! एक महीने बाद, ऑल इंडिया रेडियो के दोपहर 1:30 बजे के समाचार प्रसारण में पहली खबर प्रसिद्ध मराठी फिल्म और थिएटर अभिनेत्री श्रीमती पद्मा चव्हाण की आकस्मिक मृत्यु की थी।

वह अपनी बेटी की शादी के जन्मदिन समारोह में शामिल होने के बाद घर लौट रही थीं। अंबिके नाम का एक ड्राइवर गाड़ी चला रहा था और तेज़ रफ़्तार से आती हुई एक टेम्पो ने तेज़ बत्तियाँ जलाईं। दरअसल, टेम्पो से टक्कर होने से पहले ही सदमे के कारण उनकी हृदय गति रुक गई। उनकी मौके पर ही मृत्यु हो गई। कवि जगदीश खेबुडकर मुंबई में उनके अंतिम संस्कार में उपस्थित थे। जब वे मुझसे मिले, तो उन्होंने मुझे बताया, "पोस्टमार्टम में बाबा पद्मबाई के शरीर पर एक खरोंच तक नहीं मिली।"

इस दुर्घटना में सौंदर्य प्रतियोगिता की विजेता का निधन हो गया, लेकिन उनके चेहरे पर कोई चोट नहीं आई। उनके जीवन के शेष भाग को जीने के सपने अधूरे ही रह गए।

०-०-०

24. अप्पा मोहिते

बारशी में जिन अनेक लोगों से मेरी मित्रता हुई है, उनमें से एक अविस्मरणीय व्यक्ति अप्पा मोहिते हैं। मेरी एक विशेषता यह है कि जिनसे मेरी मित्रता होती है, उनमें कोई न कोई असाधारण गुण अवश्य होता है। उनके स्वभाव का यही गुण मुझे आकर्षित करता है।

एक बार मैं सुबह-सुबह कल्लप्पा की किराने की दुकान में बैठा था। कल्लप्पा की पत्नी विठाबाई दुकान के गलियारे में बैठी थीं। ग्राहकों को चाय की पत्तियां, चीनी, हल्दी, मिर्च, सरसों जैसी घरेलू वस्तुएं देते हुए विठाबाई मुझसे बातें कर रही थीं। मैंने पूछा,
"बहन, चार से आठ आने के सामान बेचने के बाद तुम्हारे पास प्रतिदिन कितने पैसे बचते हैं?"
"पिताजी, मुझे क्या करना चाहिए? देखते हैं कि इस दुकान के साथ घर सुचारू रूप से चलता है या नहीं।"
घर में दाल खत्म हो गई है, दुकान से ले आओ! मीठी चाय खत्म हो गई है, दुकान से ले आओ! आखिर जिंदगी में क्या चाहिए, पिताजी?
"क्या अन्ना की कारों को कुछ मिल रहा है?"
"किस तरह की गाड़ियाँ, जो भी मिलता है, उसे उन गाड़ियों में रखना पड़ता है! और एक दिन, जब सौ-दो सौ हो जाते हैं, तो सौ के बाद आप पापा जैसी महकने लगते हैं! ये तो इस पापा का दोस्त है!" मेरी भाभी ने अपने दाहिने हाथ के अंगूठे को मुँह पर लाकर मुझे दिखाया!
तो क्या आप अपनी सारी कमाई शराब पर खर्च कर देते हैं?
मैंने पूछा, "ये अप्पा मोहिते कौन हैं?"
"हमारे गुरु चक्की में काम करते हैं, और वे भिक्षु के मित्र हैं!"
कल्लप्पा दुकान में थे। उनकी पत्नी अपने पति के सामने मुझे उनकी शिकायत के बारे में बता रही थीं।
वह ध्यान से सुन रहा था। जब मुझे रुकने की अनुमति नहीं मिली, तो मैंने कल्लप्पा से कहा,
"अन्ना, तुम्हारी भाभी क्या कहती हैं? सचमुच?"
मैंने हज़रदा से उस निकम्मे आदमी से बात करना बंद करने की विनती की। लेकिन कोई असर नहीं हुआ! उसने मुझसे कहा, "इस गाँव में मेरा अप्पा जैसा कोई करीबी दोस्त नहीं है!" हर घर में पति-पत्नी शिकायत करते रहते हैं, इसलिए समझदार आदमी को किसी का पक्ष नहीं लेना चाहिए, तो मैंने मुस्कुराते हुए कहा, "कल्लप्पन्ना, एक बार मुझे अपना दोस्त मोहिते दिखा दो!"

कल्लप्पा ने बीजापुर से आने के बाद कई तरह की नौकरियां की थीं। वे मराठे मिल में मजदूर थे। बाद में, वे वायरमैन, फिर टैक्सी ड्राइवर, इलेक्ट्रीशियन और किराना दुकानदार बने। इन सभी नौकरियों के दौरान उन्होंने दुनिया को बहुत करीब से देखा था।

"सच में अन्ना, मुझे अपने प्यारे दोस्त अप्पा मोहिते से मिलवाओ!" मैंने फिर कहा। जब हम यह चर्चा कर रहे थे, तभी लगभग 35 या 36 साल का एक सज्जन, गोल चेहरे वाला, चॉकलेट रंग की टोपी और धोती पहने, दुकान के सामने आया और मेरी मौजूदगी को अनसुना करते हुए कल्लप्पा से बोला, "अरे, जल्दी करो, मुझे आज कागजी काम नहीं करना है! मुझे सोलापुर जाना है!"

उन्हें देखकर कल्लप्पा ने मुस्कुराते हुए मुझसे कहा, "अब्बा, आप अप्पा मोहिता से मिलना चाहते थे, है ना? देखिए, वह ऐसे आए जैसे उन्हें बुलाया गया हो।"

मैंने कहा, "जिस व्यक्ति को हम याद करते हैं, वह अचानक हमारे सामने प्रकट हो जाता है। तब हम सोचते हैं कि वह दीर्घायु है। इन मोहितों का जीवनकाल सौ वर्ष होता है!"

अप्पा मोहिते मुझे नहीं जानते थे, लेकिन मेरे द्वारा उनके बारे में दिए गए बयान को सुनने के बाद, अप्पा मोहिते प्रश्नवाचक भाव से मेरी ओर देखते रहे।

कल्लप्पा ने उन्हें पहचान लिया और अप्पा से पूछा, "क्या आप जानते हैं कि ये कौन हैं?"

अप्पा ने सिर हिलाकर मना किया और कहा, "नहीं!"

"अरे, ये तो बाबा कदम हैं। सरकारी वकील, जिन्होंने यहाँ अपना रूप बदला है!"

अप्पा मोहिते ने अपने गाल पर थप्पड़ मारते हुए कहा, "अरे जीजाजी! मैं आपको बताना नहीं चाहता था!" इतना कहकर अप्पा मोहिते दुकान के काउंटर के पास आए और मेरे दोनों पैर पकड़कर बोले, "अन्ना, बताओ अब क्या करूं?"

"क्या हम पानी का एक बर्तन ले आएं?"

मैंने कहा, "पेढ़ा-पुड़ा क्यों? अप्पा, यहीं बैठिए, पेढ़ा के बारे में बाद में देखेंगे! बताइए, कल्लप्पा के साथ आपकी दोस्ती इतने सालों तक कैसे टिकी रही?"

"तुम कैसे दोस्त हो, बेवकूफ! क्या सुन रहे हो? चार पैसे मिलते ही परद्या की झुग्गियों में चले जाते हो! मैंने मना कर दिया, लेकिन तारिबी से मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता!"

"तुम मुर्गी क्यों नहीं बन जाते?" उसकी भाभी ने उससे थोड़ा गुस्से से कहा।
"मैं क्या करूँ, वैनी? दुनिया में बहुत से अच्छे लोग हैं, लेकिन मुझे कल्पप्पा जैसा दोस्त कभी नहीं मिलेगा।"
अप्पा मोहिते मिल में काम करने वाले मजदूरों को पैसे उधार देते थे। वे खुद भी उसी मिल में काम करते थे। बाद में, उन्होंने धीरे-धीरे छोटे पैमाने पर उधार देना शुरू कर दिया। कोई लिखित अनुबंध नहीं होता था, सब कुछ मौखिक रूप से होता था! मजदूरों की तनख्वाह वाले दिन, अप्पा पैसे वसूलने के लिए गेट पर चौकीदार बिठा लेते थे। वे उधार दिए गए पैसे को ब्याज सहित वसूलने में माहिर थे! लेकिन कोई भी उन्हें लूटना नहीं चाहता था! अगर किसी मजदूर के घर में कोई समस्या होती, जैसे पत्नी या बच्चे बीमार होते, तो अप्पा उन्हें 5-50 रुपये दे देते और मदद के तौर पर वह पैसा वापस नहीं लेते!
पिछले 15-20 वर्षों में अप्पा मोहिते आठ से दस लाख रुपये की संपत्ति के मालिक बन गए हैं। अब उन्होंने कुरुडवाड़ी रोड पर छह एकड़ जमीन खरीदने और उस पर घर बनाने का फैसला किया है।
उस दिन वह कल्लप्पा को बुलाने आया था क्योंकि वह सोलापुर में रजिस्ट्रार के कार्यालय में भूमि खरीद विलेख पर हस्ताक्षर करने जाना चाहता था।
अप्पा मोहिता के व्यक्तित्व की विरोधाभासी प्रकृति ने मुझे उनसे मित्रता करने के लिए प्रेरित किया।
उन्होंने सबको गर्व से बताया कि बरशी का सरकारी वकील उनका दोस्त है। उसके बाद एक बार अप्पा मोहिते मुझसे कोर्ट में मिले। "क्या, अप्पा, आप आज कोर्ट में हैं? क्या आपने किसी के खिलाफ पैसे न देने का केस दायर किया है या क्या?"
"हे भगवान! क्या आपकी अदालत में किसी को न्याय मिलता है? आपको पांच सौ रुपये देने होंगे और वकील रखने होंगे! भगवान ने आपको क्या बताया है?"
‘‘तो फिर आज अदालत में क्या होता है?’’
मैं तुमसे मिलने आया हूँ। जंगल का विद्यालय हड्र्या में आ गया है!
"ओह हाँ, क्या आपने ज़मीन नहीं खरीदी थी?"
हे भगवान! आपकी वजह से ज़मीन की जुताई अच्छे से हो गई है!

"ओह, मुझे कितना बड़ा सौभाग्य मिला है! आपने तो हमारी मुलाकात से पहले ही वह सौदा तय कर लिया था! क्या आपको याद है जब आप जमीन का दस्तावेज बनवाने के लिए कल्लप्पा को बुलाने सोलापुर आए थे? वही हमारी पहली मुलाकात थी।"
"वाह वाह!"
"तो इसमें मेरी क्या भूमिका है, पुनाई?"
"चाय पीते हैं!"
मैं अदालत के दफ्तर तक पैदल गया और सुझाव दिया कि मैं कैंटीन में दोह्या के लिए चाय भेज दूं।
जब हम चाय पी रहे थे, तभी अचानक कल्लप्पा वहाँ आया और मुझसे बोला, "पिताजी, मैंने आज एक नई जीप खरीदी है। क्या आप एडशी घाट जाकर उसका ट्रायल देखना चाहेंगे? मैं कुछ ड्रिंक्स पीकर वापस आ जाऊँगा!"
"नाग" का मतलब खरगोश होता है! एडशी घाट में रात के समय जीप की रोशनी में कई खरगोश दिखाई देते थे। मैं और कल्लप्पा कई बार रात में शिकार पर गए थे।
"देखो, अन्ना, मैं आ रहा हूँ!" मोहिते अप्पा ने हाथ उठाकर कहा, "अब से मैं तुम्हारे लिए शिकारी नहीं बनूंगा!"
"तो बताओ, तुम्हें क्या हुआ है? फिर तुम आज रात क्यों जाना चाहते हो?"
जब अप्पा मोहिते ने कहा कि वह मेरे साथ आएंगे, तो मैंने कहा, "हां।"
अदालत की कार्यवाही समाप्त होने के बाद, मैं घर आ गया। मैंने मरीना से कहा, "आज ससला को घाट जाना है, कल्लप्पा और उसका सबसे अच्छा दोस्त मोहिते अप्पा मेरे साथ आ रहे हैं। तुम मुझे टिफिन में क्या दोगी?"
"अब जब तुम मुझे सही समय पर बताओगे तो मैं क्या करूँगा? सुकी मुझे अंडे और चपातियाँ देती है!"
"ठीक है! कल्लप्पा भी अपने साथ कुछ ले जाएगा।"
बारशी-उस्मानाबाद सड़क पर एक छोटा सा घाट है, जो 4-5 मील लंबा है। वन कार्यालय पास में होने के कारण वहां कोई शिकारी नहीं घूमता था। हालांकि, मैं एक "विशेषाधिकार प्राप्त" शिकारी था, क्योंकि उस घाट में चंदन के पेड़ थे। कुछ अपराधी चंदन के पेड़ काटकर चुरा लेते थे। अगर चंदन चोर "वीरप्पन" को वन रक्षक सबूतों के साथ पकड़ लेता, तो वन विभाग उसके खिलाफ मामला दर्ज कर देता। सरकारी

अभियोक्ता होने के नाते, मैं बारशी अदालत में ऐसे वन मामलों की पैरवी करता था। इसलिए, मैं वन विभाग में केवल एक ही व्यक्ति को जानता था। वे जानते थे कि अभियोक्ताओं को शिकार का शौक है, लेकिन वे बहुत ही संयम से शिकार करते थे।
उस दिन मैं कल्लप्पा और मोहिते अप्पा के साथ घाट पर भोजन लेकर घूम रहा था, लेकिन मुझे एक भी खरगोश नहीं दिखा। कल्लप्पा ने कहा, "चलो मंदिर के मलराना चलते हैं। वहाँ ज़रूर कुछ खरगोश दिखेंगे।" जब हम कुछ देखेंगे, तो हमारा मतलब था कि सर्चलाइट की रोशनी में खरगोश की आँखें चमकेंगी।
मैंने कहा, "अप्पा शिकार देखना चाहते हैं, चलो वहाँ चलते हैं!"
कल्लप्पा ने जीप को सड़क से हटाकर बाईं ओर जंगल में मोड़ दिया और मुझे आश्चर्य हुआ कि उजाले में दो मोटे खरगोश आमने-सामने बैठे बातें करते हुए दिखाई दिए। मैंने अपनी दोहरी बैरल वाली बंदूक से उन पर नंबर चार का कारतूस दागा। एक ही गोली में दोनों खरगोश गिर पड़े।
शिकार पूरा होने के बाद, जानवर का पेट खोला जाता है। समय बीतने पर भी, शिकार किए गए जानवर का सिर नहीं बिगड़ता। मैंने कल्लप्पा को यह कला सिखाई थी। मैंने अपनी कमर से चाकू निकालकर कल्लप्पा को दे दिया। कल्लप्पा ने कार की रोशनी में दोनों खरगोशों को साफ किया। फिर हमने हाथ धोए और एक किलोमीटर दूर जाकर खाना खाने बैठ गए। कल्लप्पा खाने के साथ साबुत प्याज लाया था। मुझे उन्हें काटने के लिए चाकू चाहिए था, लेकिन मेरा चाकू वहीं खो गया था जहाँ कल्लप्पा ने खरगोशों को साफ किया था। रात होने लगी थी, इसलिए हम वापस लौट आए। मेरा चाकू खो जाने से अप्पा मोहिते बेचैन होने लगे।
"तुम जाकर एक चाकू ढूंढ लो, मैं पेट्रोल भरवा लेता हूँ।"
"छोड़ दो, पापा, इस तरह के चाकू से हमले बहुत हो चुके हैं!"
"नहीं, नहीं, मैं तुम्हारा चाकू ढूंढ लूंगा!"
तीसरे दिन, अप्पा के आग्रह पर, हम शाम को जीप लेकर जंगल गए, लेकिन हमें वह जगह कैसे मिलती जहाँ चाकू था? अप्पा जंगल में उतर गए और बोले, "अब्बा, यह चाकू नहीं था, बल्कि कार का टायर था। टायर तो कार का टायर ही होता है।" फिर हम उसी रास्ते पर आगे बढ़े। अप्पा चिल्लाए, "अन्ना, कार रोको।" कार रुकने से पहले ही, अप्पा कूदकर बाहर निकले और उत्साह से मुझे वह चाकू दिखाया जो टायर

के निशान से खो गया था। "अगर यह कार का टायर था, तो चाकू क्यों नहीं हो सकता!"
उसके बाद मैं कल्लप्पा के साथ अप्पा के खेत में हुरदा खाने गया। अप्पा आठ-दस तरह की चटनी लाए थे। तिल की चटनी, भुने नारियल की चटनी, लहसुन की चटनी!
अप्पा खुद आग में भुने हुए ज्वार के दानों को मेरे हाथों पर मलते और मुझे गरमा गरम हुरदा खिलाते थे। उसके स्वाद के बारे में क्या कहूँ? हुरदा मुँह में घुल जाता था, और बीच-बीच में चटनी भी मिलती थी!
जब "हुर्दा पार्टी" चल रही थी, मैंने कहा, "अप्पा, यह मेरी आखिरी हुर्दा पार्टी है! मैं एक महीने में बदल जाऊंगी!"
अप्पा मोहिता की आँखों में आँसू भर आए। उन्होंने कहा, "अब्बा, आप यहाँ इतना स्नेह दिखाने क्यों आए हैं?"
"ओह, मुझे जाना होगा। क्या आपके पास सरकारी नौकरी है?"
"लेकिन आप, महाराज, स्कूल मत ले जाइए!" "मैं आपको सौ किलो स्कूल दूंगा, चाहे इसके लिए मुझे अपनी जान ही क्यों न देनी पड़े!"
बरशी को अलविदा कहने के आठ दिन के भीतर ही मुझे कल्लप्पा का पत्र मिला। मोहिते अप्पा की कार दुर्घटना में मृत्यु हो गई। "हे भगवान! जब हम मिले थे, तब मैंने आपसे कहा था कि आप सौ साल जिएंगे, ये कैसे हो गया!" मैंने अपनी आँखें पोंछते हुए मन ही मन कहा।
०-०-०

25. सुली की प्रतिक्रिया

भारत में दस में से एक तयशुदा शादी सफल होती है। पति-पत्नी एक-दूसरे को पूरी तरह समझते हैं। आमतौर पर उनके बीच कोई मतभेद नहीं होता, और अगर होते भी हैं तो मामूली होते हैं। वे अपने आप सुलझ जाते हैं। इन दस में से दूसरी शादी असफल हो जाती है, लेकिन पति-पत्नी जीवन की गाड़ी को आगे बढ़ाते रहते हैं। चाहे सामाजिक, आर्थिक समस्याएँ हों या कोई और कारण, वे बैलगाड़ी में जुते बैल की तरह जीवन के पथ पर चलते रहते हैं। हालांकि, इन दस में से आठ तयशुदा शादियाँ असफल हो जाती हैं। सबसे पहले, मौखिक झड़पें होती हैं। कभी-कभी मामले हद से बढ़ जाते हैं। इनमें से कुछ वैवाहिक विवाद अदालत तक भी पहुँच जाते हैं। अंत में, ये

मतभेद तलाक में परिणत होते हैं। अगर ऐसा नहीं होता, तो कुछ लड़कियाँ अपने पति या ससुराल वालों के अत्याचार से तंग आकर आत्महत्या कर लेती हैं।
यह हमारे समाज में वर्षों से होता आ रहा है। यह आज भी हो रहा है और भविष्य में भी होता रहेगा। लेकिन ऐसा क्यों होता है? क्या इसका कोई समाधान है? सामाजिक नेताओं ने अभी तक इस संबंध में कोई अंतिम समाधान नहीं सुझाया है, और न ही उन्हें लगता है कि निकट भविष्य में कोई ऐसा समाधान सुझाएगा।
मैं कोई महान विचारक या विद्वान दार्शनिक नहीं हूँ, बल्कि एक मध्यमवर्गीय समाज का नागरिक हूँ! अपनी सीमित बुद्धि के अनुसार, मैंने वैवाहिक समस्याओं का गहन अध्ययन किया है। एक सरकारी वकील होने के नाते, मैंने इस बात पर बहुत विचार किया है कि ऐसा क्यों होता है और कुछ निष्कर्षों पर पहुँचा हूँ। जब कोई लड़की यौवन अवस्था में पहुँचती है, तो उसके माता-पिता उसकी शादी को लेकर चिंतित हो जाते हैं। अब, यदि हम लड़कियों के यौवन अवस्था में पहुँचने की दर को देखें, तो वे लगभग ग्यारह से साढ़े ग्यारह से बारह वर्ष की आयु में इस उम्र तक पहुँच जाती हैं। प्रकृति के नियमों के अनुसार उनमें शारीरिक और मानसिक परिवर्तन होने लगते हैं। लेकिन इन परिवर्तनों के दौरान उनकी बुद्धि का विकास नहीं होता है। यह विकास चौदह से पंद्रह वर्ष की आयु से शुरू होता है। इस आयु में, लड़कियों में खेलने और शरारत करने का शौक विकसित होता है। युवा लड़के खुलकर व्यवहार करने में झिझकते हैं। कुछ लड़कियाँ स्वभाव से साहसी होती हैं। वे इस उम्र में प्रेम-संबंधों में पड़ जाती हैं। चूंकि वे व्यावहारिक दुनिया से कभी परिचित नहीं होती हैं, इसलिए वे प्रेम-संबंधों में उलझ जाती हैं।
प्रकृति ने महिलाओं पर अनेक प्रतिबंध लगा रखे हैं। जिस प्रकार एक पुरुष एक से अधिक संतान होने पर स्वतंत्र हो जाता है, वैसा लड़कियों के साथ नहीं है। यदि कोई महिला अपने प्रेमी के दुस्साहस में आ जाती है, तो गर्भधारण की संभावना बनी रहती है। ऐसे में यदि प्रेमी उसे स्वीकार नहीं करता, तो उस बेचारी महिला के लिए अपने परिवार और समाज का सामना करना असंभव हो जाता है। ऐसी लड़कियाँ आत्महत्या का रास्ता भी अपना लेती हैं। तो इसका समाधान क्या है? समाधान है! घर पर, माता-पिता और बहनों को किशोरावस्था में प्रवेश कर रही लड़की को अपने विश्वास में लेना चाहिए और उसे दुनिया में सही व्यवहार करने के उदाहरण सिखाने

चाहिए। परिवार की वरिष्ठ महिलाओं की सलाह से कई लड़कियाँ समय के साथ सुधर जाती हैं।
परसों, मैंने अपनी कार एक निश्चित स्थान पर पार्क करने के बाद अपने दोस्त का इंतजार कर रहा था।
उन्हें दस मिनट में वहाँ पहुँच जाना था। इसी बीच, मेरा ध्यान सड़क के किनारे खड़ी तीन युवतियों पर गया। उनमें से दो की निगाहें स्थिर थीं। लेकिन एक की निगाहें बहुत अस्थिर थीं। वह सड़क के उस पार स्कूटर रोके हुए लड़कों को देख रही थी और बीच-बीच में अपनी सहेलियों से बातें कर रही थी। सहेलियों से बात करते हुए वह सड़क के उस पार देखते हुए खुद ही मुस्कुरा रही थी। वह ताली बजाने के लिए हाथ बढ़ा रही थी। उसकी चंचल निगाहों से मोहित होकर पूरा समूह ज़ोर से हंस रहा था। लेकिन यह "चंचल" लड़की मूर्ख लग रही थी। मेरे दोस्त को आने में थोड़ा समय लगा, लेकिन मुझे पता ही नहीं चला कि मैंने नेत्र पल्लवी के इन युवकों और युवतियों के मुक्त प्रदर्शन को देखने में कितना समय बर्बाद कर दिया। आखिरकार, लड़कियाँ अपने स्कूटरों पर सवार होकर चली गईं। जाने से पहले, उन्होंने भूतों की तरह अपने चेहरे और सिर पर नकाब बाँध लिए। उनकी आँखें इतनी चौड़ी खुली हुई थीं। आजकल, बाइक चलाते समय लड़कियों के लिए चेहरा ढकना फैशन बन गया है! किसी ने मुझसे पूछा, "पापा, आजकल ये लड़कियाँ अपना चेहरा और सिर क्यों ढकती हैं?"
मैं थोड़ा हँसा और बोला, "भले ही वे प्रदूषण से बचाव के लिए अपने मुंह ढक रहे हों, लेकिन उनकी मंशा बिल्कुल अलग है!"
"कौन सा?" मेरे दोस्त ने मुझसे पूछा।
"वे चाहते हैं कि हम दूसरों को अपनी मर्ज़ी से देखें। लेकिन वे नहीं चाहते कि हम खुद को पहचानें! इसके अलावा और क्या मकसद हो सकता है? इतने सालों तक छोटी बच्ची लूना लैम्बरेटा चलाती रही। तब वे अपने बाल कहाँ बनवाते थे? क्या उन्हें अब जाकर प्रदूषण का असर महसूस होने लगा है?"
हर किसी को अपनी मर्जी से व्यवहार करने की आजादी है। हम कौन होते हैं उनकी आलोचना करने वाले?

इसी बीच, महाराष्ट्र में एकतरफा प्यार के कारण कई लड़कियों की हत्या कर दी गई। उस समय मुझे सलाह दी गई कि मैं इस बात की जांच करूं कि ऐसी हत्याएं क्यों होती हैं, इनके लिए कौन जिम्मेदार है, आदि और पुलिस विभाग की पत्रिका "दक्षता" में इस पर एक विस्तृत लेख लिखूं। मैंने सबसे पहले पुणे की सात-आठ लड़कियों का साक्षात्कार लिया। पद्मा उनमें से एक थी! हालांकि उसका प्रेम संबंध टूट गया था, लेकिन वह जीवित थी। मैं उससे मिला। पहले तो उसने मुझे कुछ भी बताने से इनकार कर दिया। फिर मैंने कहा,
"पद्मा, मुझे पता है कि तुम्हारे बॉयफ्रेंड ने तुम्हें धोखा दिया है, लेकिन अगर तुम मुझे अपने अनुभव बताओगी, तो मैं इस बारे में एक लेख लिखूंगी।"
आप जैसी भावुक लड़कियों को कम से कम मेरा लेख थोड़ी मदद तो करेगा! देखिए, मैं चाहता हूँ कि आप अपने अनुभव मुझे समाज के हित में साझा करें। मैं आपका साक्षात्कार इसलिए ले रहा हूँ ताकि उन्हें आपकी तरह पछतावा न हो!
आखिरकार, पद्मा ने मेरी बात मानकर बोलना शुरू किया। कॉलेज में मेरी कक्षा में तुषार नाम का एक छात्र था। वह अपने माता-पिता की इकलौती संतान था। उसके पिता एक बड़े माली थे। उनका ससवाड इलाके में नींबू का बाग था। बाग के बीचोंबीच एक आलीशान बंगला था। इसके अलावा, वह दिखने में भी बहुत आकर्षक था। हमारी कक्षा में सुलोचना नाम की एक बहुत सुंदर लड़की थी। वह उस लड़की के साथ छेड़छाड़ करता था। सुली मेरी दोस्त थी। उसके पिता राजस्व विभाग में हेड क्लर्क थे। सुली तुषार को बिल्कुल पसंद नहीं करती थी। सुली ने मुझे कई बार बताया था कि तुषार उसकी जरूरतों का ख्याल रखता है। तब मैंने कहा,
"तुषार सुंदर है। वह अमीर भी है। तुम उसे जवाब क्यों नहीं देती?"
इस पर सुल्ली ने कहा, "देखो पद्मा, मेरे पिता ने मुझे कॉलेज में पढ़ने के लिए भेजा है। अगर तुम ऐसा कहोगी, तो हमारे परिवार में लड़कियों को उच्च शिक्षा देने की कोई परंपरा नहीं थी। मेरे पिता को मेरा घमंड पसंद नहीं आएगा। मैं तुरंत कॉलेज बंद करवा दूंगी।"
"लेकिन पढ़ाई पूरी करने के बाद तुम क्या करोगे? शादी करोगे, है ना?"
"हां, लेकिन यह मेरे माता-पिता की पसंद है, मेरी नहीं!"
मैंने कहा, "तुम्हारे चुनाव का कोई मूल्य नहीं है?"

"देखो पद्मा, मैंने अभी इसके बारे में सोचा नहीं है, लेकिन चाहे कुछ भी हो जाए, मैं तुषार को कोई 'जवाब' नहीं दे सकता।"
“तो फिर तुमने क्या किया?” मैंने पद्मा से पूछा। आठ दिन बाद, जब मैं घर जा रही थी, तुषार मारुति कार में पीछे से आया। मैं रुक गई। उसने कहा, “पद्मा, मैं तुमसे थोड़ी देर बात करना चाहता हूँ।”
"तो फिर बात मत करो," मैंने कहा।
"यहाँ सड़क पर बात करने का कोई फायदा नहीं है। चलो हडपसर चलते हैं!"
"वहाँ क्यों?"
"मेरा कमरा उधर है। चलिए शांति से बात करते हैं। कृपया आइए!"
उसने उदास चेहरे से कहा।
मैं कार में उनके बगल में बैठ गया। वे एक कुशल चालक थे। पुणे में चल रहे अनगिनत रिक्शा, कारों और बसों के बीच वे बड़ी कुशलता से गाड़ी चला रहे थे। उनके लाल-भूरे बाल उनके माथे पर बिखरे हुए थे। मैं उनसे बहुत प्रभावित हुआ।
हडपसर पहुँचने के बाद हम दोनों उसके फ्लैट पर गए। उसके कमरे में सारी सुविधाएँ थीं। एसी, गैस, चाय-कॉफी बनाने की सुविधा, किसी चीज की कमी नहीं थी।
"अरे, आपको क्या पसंद है, चाय या कॉफी?"
कुछ भी चलेगा!
उसने छोटे फ्रिज से दूध का जग निकाला। उसने दूध में कॉफी डाली। उसने कप में चीनी डाली। उसने कप मुझे देते हुए कहा,
मैं आज आपको फोन करना चाहता था क्योंकि...
मुझे सुली से पूछना चाहिए कि वह आपको जवाब दे!
उसने चौड़ी आँखों से मुस्कुराते हुए कहा, "तुम तो बेहद प्रतिभाशाली हो! पद्मा, तुम्हें ठीक-ठीक कैसे पता चल गया कि मेरे मन में क्या चल रहा है?"
इसमें मुश्किल क्या है! सुली मेरी दोस्त है। तुम्हें क्या लगता है कि वो मेरी बात सुनेगी!
"ओह, यह सच है। लेकिन मैं चाहता हूं कि तुम कभी सुली के साथ मेरे फार्महाउस आओ।"
मैं देखने की कोशिश करूंगा।

अगले दिन मैंने सुल्ली को सब कुछ बताने का फैसला किया। लेकिन मेरे मन में तुषार के लिए आकर्षण पैदा हो गया। उसके बाद तुषार मुझसे कभी-कभार मिलने लगा। मुझे भी उसकी संगति की चाह होने लगी। लेकिन मुझमें उसे खुलकर बताने की हिम्मत नहीं थी। इसलिए मैंने एक लाइन का नोट लिखा।

Ulepar, gh thdn bdl - jhssa

और मैंने उसे वह नोट दे दिया। पता नहीं उसने नोट पढ़कर क्या सोचा होगा, लेकिन अगले दिन वह कार में मेरे पीछे आया और बोला, "चलो, मेरे फार्म हाउस चलते हैं!"

इस जगह की भव्यता के बारे में मैं क्या कहूँ? हॉल में ऊँचा कालीन बिछा है, सोफे हैं, बढ़िया बर्तन हैं, और उनके रसोइए ने वहाँ चिकन पकाया है!

उन्होंने मुझसे कहा, “पद्मा, लड़कियाँ सिर्फ़ खूबसूरती से नहीं बनतीं, उनमें कुछ गुण भी होने चाहिए। मुझे तुम पसंद आई, लेकिन तुम्हारी हिम्मत मुझे तुमसे ज़्यादा पसंद आई। मैं तुमसे कोई वादा नहीं करूँगा। पर एक समस्या है!”

"कौन सा?"

"मेरी शादी बचपन में ही तय हो गई थी। मैं तुमसे शादी नहीं कर पाऊंगी।"

"तुम सुली के पीछे क्यों पड़े थे?"

‘‘जस्ट फॉर द सेक ऑफ फन्.’’

हालांकि उन्होंने मुझे यह बात स्पष्ट रूप से बताई थी, फिर भी मैं उनके आकर्षण का विरोध नहीं कर सकी।

मैंने उसे गले लगाया और कहा, "कोई बात नहीं, मैं तुमसे मजे के लिए प्यार करती हूं।"

उसके बाद तुषार मुझसे अक्सर मिलने लगा। और फिर अप्रत्याशित घटना घटी। मैं गर्भवती हो गई। मैं तुषार से नहीं मिल पा रही थी। वह मुझसे एक बार मिला और बोला, "मैंने तुम्हें मलेरिया की गोलियां दी थीं। तुमने उन्हें क्यों नहीं लिया?"

गलती मेरी थी। मैंने गर्भपात करवा लिया। मैं चार दिन कॉलेज नहीं गई। सुली मुझसे मिलने आई। बिना कुछ बताए ही उसने कहा, "मुझे सब पता है! तुषार एक बदमाश है। उसने तुम्हारे जैसे चार-पाँच मामले किए हैं। अब समझ में आया कि मैं उसे जवाब क्यों नहीं दे रही थी?"

मेरे पास सुली को देने के लिए कोई जवाब नहीं था।

o-o-o

26. रावसाहेब महाडकर

हमारी गली में लगभग हर वर्ग के लोग रहते थे। वहाँ चक्की मजदूर, किसान, तेल कर्मचारी और बढ़ई थे। वहाँ दर्जी, धोबी, डॉक्टर, वकील और यहाँ तक कि नगरपालिका अधिकारी भी थे।

नगरपालिका शब्द सुनते ही रावसाहेब महाडकर की याद आ जाती है! वे नगरपालिका से सेवानिवृत्त हो चुके थे। छियासठ वर्ष के रावसाहेब महाडकर सड़क पर किसी से ज्यादा बात नहीं करते थे। जब बुजुर्ग महिलाएं रावसाहेब को सामने से

आते देखतीं, तो वे अपने सिर से स्कार्फ हटाकर एक तरफ हट जातीं। अगर पुरुष बीड़ी पी रहे होते, तो रावसाहेब के आने की खबर सुनकर वे अपने हाथ में पकड़ी बीड़ी या सिगरेट फेंक देते। सड़क पर चिन्नी-दंडू गोट्या खेल रहे लड़के भी थोड़ी देर के लिए खेलना बंद कर देते। रावसाहेब को मिलने वाला यह सम्मानजनक व्यवहार व्यर्थ नहीं था। वे पहले नगरपालिका में मुख्य अधिकारी रह चुके थे।

गोल चेहरे, थोड़ी बड़ी आँखों, होठों पर भूरी-सफेद मूंछों और पूरी तरह गंजे सिर वाले रावसाहेब चॉकलेट रंग के ऊनी कोट में बाहर निकले, जिसका कॉलर ऊपर की ओर झुका हुआ था, और सिर पर पगड़ी बाँधी हुई थी। उनके एक हाथ में सदाबहार छाता और दूसरे हाथ में एक छोटा सा थैला था। यही रावसाहेब का पहनावा था। किसी को कोई फर्क नहीं पड़ा।

युवावस्था में रावसाहेब महादकर सुबह पांच बजे उठकर तेम्बलाई स्थित मंदिर की सैर पर जाते थे। सफेद टी-शर्ट, सफेद शॉर्ट्स और टेनिस शूज़ पहने रावसाहेब आधे घंटे में तेम्बलाई पहाड़ी पर चढ़ जाते थे। वे सूर्योदय होने पर ही लौटते थे।

पहुँचने के बाद, वह स्नान करते और नाश्ता करते। लगभग दस बजे, वह नगरपालिका स्थित अपने कार्यालय जाते। उनके पहुँचने से पहले ही उनके सभी कर्मचारी कार्यालय में उपस्थित होते। वह काम में किसी भी प्रकार की देरी बर्दाश्त नहीं करते थे।

मुख्य अधिकारी होने के नाते उनका काफी प्रभाव था। कभी-कभी वे अपनी कार से शहर में घूमते थे। इसलिए नगर पालिका में सभी लोग उनसे दूरी बनाए रखते थे।

रावसाहेब साल में एक बार अपने पैतृक गांव महाद जाया करते थे। उस समय वे अपने सभी रिश्तेदारों से मिलते थे। उन्होंने अपने पूर्वजों के स्वामित्व वाले गांव के थोड़े से धान के खेतों को अपने भाइयों में बांट दिया।

रावसाहेब महादकर एक आदर्श गृहस्थ का उत्कृष्ट उदाहरण थे। नगरपालिका से सेवानिवृत्त होने के बाद भी, जब भी सफाईकर्मी सड़कों की सफाई करने आते थे, वे रावसाहेब के घर के सामने की सड़क को बड़े ध्यान से साफ करते थे।

गली में रहने वाली पैंतीस-चालीस वर्ष की सुनहरे बालों और काली आँखों वाली विधवा रावसाहेब की मित्र थी। वह नदी के किनारे रहती थी, लेकिन उसका दैनिक जीवन रावसाहेब महादकर के घर में ही बीतता था। रावसाहेब का महल विशाल था,

लेकिन वे हमेशा महल के पश्चिमी भाग में स्थित अपने छोटे से कमरे में ही रहते थे। उनका सुबह का भोजन महल से ही आता था। हालांकि, काली आँखों वाली द्वारका उनके लिए शाम का भोजन चूल्हे पर पकाती थी।

रावसाहेब के शाम के खाने का मेनू तय था। मटन की ग्रेवी और चावल। रावसाहेब शाम 4:30 से 5:00 बजे के आसपास मटन मंडी जाते थे। सभी कसाई उन्हें जानते थे। अगर उनके पास अच्छी गुणवत्ता का मटन नहीं होता था, तो वे रावसाहेब से अपनी दुकान पर आने और खुद किसी दूसरी दुकान से अच्छा मटन लाने का अनुरोध करते थे। सेवानिवृत्ति के बाद भी रावसाहेब समाज में बहुत सम्मानित थे। इसका कारण उनकी निस्वार्थता थी। उनके पास काम करते हुए खूब पैसा कमाने का अवसर था, लेकिन उन्होंने कभी भी गलत तरीके से पैसा कमाकर अपने हाथ गंदे नहीं किए।

दस बोरी मटन खरीदने के बाद, रावसाहेब पापों के मंदिर में जाते थे। एक विदेशी शराब की दुकान पर! उनका पसंदीदा ब्रांड तय था। कोल्हापुरी रम! वे हर दिन एक क्वार्ट रम पीते थे। द्वारका ने उन्हें जो हरा धनिया लाने को कहा था, वे उसे लाना कभी नहीं भूलते थे।

द्वारका को बाज़ार सौंपने के बाद, रावसाहेब अपने हाथ-पैर धोकर आरामकुर्सी पर बैठ जाते। आरामकुर्सी के बगल में एक छोटी लकड़ी की चौकी रखी होती। उनके हाथ में चायदानी पर रम और सोडा से भरा एक गिलास रखा होता। द्वारका, जो बाज़ार का सामान लादकर पकाने के लिए चूल्हे पर छोड़ आती, बीच-बीच में आकर बैठ जाती और रावसाहेब के पैर मलती! ये सब बातें मानो आदेशानुसार होती थीं। गिलास में रम खत्म होने पर, रावसाहेब द्वारका से खुलकर बातें करते और फिर एक और पेग डालते। उस समय उनके परिवार का कोई भी सदस्य उनके कमरे में नहीं आता। केवल द्वारका ही वहाँ होती।

रावसाहेब, जो दिन भर बेचैन दिख रहे थे, रम की एक घूंट लेते हुए और द्वारका से अपने पैर मलते हुए उससे बातें करते थे।

"द्वारका, तुम्हारा पांड्य क्या कहता है?" पांडु द्वारका का इकलौता पुत्र था। अपनी माता की ही तरह, सुनहरे रंग और काली आँखों वाला पांडु नगरपालिका में कार्यरत था। रावसाहेब ने स्वयं सेवानिवृत्त होने से पहले उसे निरीक्षक नियुक्त किया था।

जब पांडु छोटे थे, तब उन्हें अपनी माँ के बारे में लोगों की बातें समझ नहीं आती थीं, लेकिन जब उनकी शादी की उम्र हुई, तो कोई भी उन्हें बेटी देने को तैयार नहीं था। उनकी दो-तीन बार तयशुदा शादियाँ भी टूट गईं। जब पांडु को एहसास हुआ कि कोई उनकी शादी में दखल दे रहा है, तो उन्होंने अपनी माँ के प्रति थोड़ा रूखा व्यवहार करना शुरू कर दिया।

एक बार खाना खाते समय उसने द्वारका से कहा, "माँ, रावसाहेब के यहाँ जाना बंद करो। लोग जो चाहें कहते हैं, मेरा मजाक उड़ाते हैं, कोई मेरा दोस्त नहीं है।"

द्वारका ने उससे कहा।

"पांड्या, इस जीवन में तुम्हारा आभार व्यक्त करना पर्याप्त नहीं होगा! जब तुम्हारे 'पिता' का निधन हुआ, तब तुम चार वर्ष के थे, जंगल में न तो खेत था और न ही गाँव में घर। मैं चार या दो घरों के लिए कपड़े धोकर और खाना बनाकर तुम्हारा पालन-पोषण करती थी। इसी तरह तुम दो लोगों के लिए भोजन जुटा पाते थे। जब रावसाहेब मुझसे मिले, तब वे गृहस्थ बन गए और गाँव के पास चार एकड़ जंगल बनाया गया। जब तुम बड़े हुए, तब उन्होंने तुम्हें पढ़ाया और काम दिया। मैं रावसाहेब की बहुत आभारी हूँ!"

"अरे, रावसाब हम पर इतना एहसान क्यों कर रहे हैं?"

“पांड्या, अब तुम्हें गर्व होगा। ये हंगामा बंद करो! मैं निवासियों का नाम दोबारा नहीं लेना चाहता!” वो बार-बार मुझसे यही कहता रहता है।

मैं चुप क्यों रहूँ? मुझे बच्चा कौन देगा?

"तुम यहाँ घुटने पर मशीन बाँधकर क्यों बैठे हो? अगर राव साहब न होते तो मैं किस तरह का तोंद पहनता?"

द्वारका में रावसाहेब की खूब तारीफें होती थीं और पांडु कभी-कभी अपनी मां से फुसफुसाकर कहता था कि द्वारका रावसाहेब की रखैल है। पूरी गली पांडु की फुसफुसाहट सुन लेती थी। इसलिए पांडु सिर झुकाकर साइकिल से काम पर जाता था।

पांडु अट्ठाईस से उनतालीस वर्ष की आयु तक बढ़ा। फिर उसे घर छोड़कर कहीं जाने का मन हुआ। जब उसके पिता का देहांत हुआ, तब वह मात्र चार वर्ष का था। रावसाहेब ने उसे आश्रय दिया, शिक्षा दी और फिर उसे पुणे में एक पर्यवेक्षक का प्रशिक्षण लेने के लिए भेज दिया। वहाँ से लौटने पर उसे नगरपालिका में नौकरी भी

मिल गई। पांडु समझ गया था कि यह सब रावसाहेब की कृपा से ही संभव हुआ है। फिर भी, उसे इस बात की चिंता सता रही थी कि उसे अच्छे परिवार की लड़की से विवाह नहीं हो पाएगा।
"द्वारका, अब पांड्या शादी की उम्र का हो गया है। नौकरी भी स्थायी है, लेकिन चूंकि हम रिश्तेदार हैं, इसलिए बहू तुम्हारे घर नहीं आ रही है। मैं सब समझती हूं। अब इस समस्या का एक ही हल है।"
"किस प्रकार?"
"तुम्हें यहां आना बंद कर देना चाहिए!"
"इसमें गलत क्या है? क्या यह सच है कि पूरी दुनिया को पता चल जाएगा?"
"यह सच है कि यह एक मजाक है, लेकिन बेचारे पांडु की शादी में देरी हो रही है, है ना?"
"अगर मैं तुमसे शादी करना बंद कर दूं, तो क्या तुम शादी कर लोगी?"
"क्यों नहीं?"
"रावसाब, मैं तुम्हें सच बताऊंगी। मेरी आत्मा में जीवन है, तो मैं तुम्हें क्यों नहीं छोड़ूंगी? और इस किराए के पांड्या के बारे में सच्चाई कहां है?"
जब द्वारके बालिग हुए, तो उनके माता-पिता ने उनका विवाह अप्पा से तय कर दिया। अप्पा रोजी-रोटी कमाने के लिए नेरला से कोल्हापुर आए थे। वे एक गली में किराए के कमरे में रहते थे। छह महीने बाद, किसी ने अप्पा से कहा, “इस शहर और गाँव में कोई भी आपको स्थायी नौकरी नहीं देगा। आपको महादकर साहब से मिलना चाहिए!”
उस समय रावसाहेब महादकर अपने चरम पर थे। उनके पास कार थी। उनमें सत्ता का भरपूर वैभव था। उनकी पत्नी से एक पुत्र और एक पुत्री थी। इसके बाद, महादकरिन बारिन को कोई बीमारी हो गई और उनका शरीर अत्यधिक बढ़ गया। वे जिस कुर्सी पर बैठे होते थे, उससे उठ नहीं पाते थे। उठने के बाद वे बैठ भी नहीं पाते थे।
घर में एक बड़ा बेटा था। उसकी शादी हो गई। उसकी बहू घर लौट आई।
महादकरिन के घर में खाना बनाने के लिए एक नौकरानी थी। बर्तन धोने के लिए भी एक नौकरानी थी। रावसाहेब महादकर ने अप्पा को नगरपालिका में सफाईकर्मी की

नौकरी दिलवाई। द्वारका कभी-कभी महादकर के घर आती थी। जवानी में वह बेहद खूबसूरत थी। वह साहब के कमरे में चाय-कॉफी लेकर आती थी। वह उनका बिस्तर लगाती, कपड़े ओवन में रखती, द्वारका उनके सारे काम बड़ी कुशलता से करती थी। रावसाहेब की पत्नी तपेदिक से दुर्बल हो गईं और उसी समय उनकी मुलाकात बेहद आकर्षक द्वारका से हुई। प्रकृति के नियमानुसार, दोनों एक-दूसरे के प्रति आकर्षित हुए। द्वारका अप्पा के लिए बिल्कुल भी उपयुक्त नहीं थी। द्वारका के माता-पिता ने उनके रिश्ते के कारण द्वारका को उनके गले में बांध दिया।
रावसाहेब महाडकर को रविवार को छुट्टी मिलती थी। उस दिन वे अपनी कार से पन्हाला जाते थे। द्वारका उनके साथ होती थी। महाडकर की बारह बहनों को द्वारका के प्रेम प्रसंग के बारे में पता था, फिर भी उन्होंने इसका ज़रा भी विरोध नहीं किया! इस तरह द्वारका के दिन बीतते गए और फिर पांडु का जन्म हुआ। उसके मंगलसूत्र के एकमात्र स्वामी अप्पा थे। उनकी भी व्यसन के कारण मृत्यु हो गई। रावसाहेब की कृपा से ही द्वारका ने पांडु का बचपन से पालन-पोषण किया, उसे शिक्षा दी और एक छोटा सा घर बनवाया! इसीलिए वह रावसाहेब को उनके बुढ़ापे में छोड़कर जाना नहीं चाहती थी!
"तो फिर तुम्हारा क्या मतलब है, पांडा?" रावसाहेब ने पूछा।
वे कहते हैं, 'मुझे यहाँ आने मत दो!'
"मैं तुम्हें एक बात बताता हूँ, द्वारके, उसे एक बार और हमेशा के लिए सच बता दो!"
"क्या? क्या तुम मुझे बता रहे हो कि तुम्हारे पिता रावसाब हैं? क्या वो मेरे सिर पर पत्थर फेंकेंगे या नहीं?"
"ऐसा नहीं होगा, मेरी बात सुनो! अप्पा उसका असली पिता नहीं था। देखो वो क्या करता है जब तुम उसे बताओगे कि मैं उसका पिता हूँ!"
उस रात द्वारका ने हिम्मत दिखाई! पांडु ने खाना खाया और सोफे पर बैठकर पान खाया।
“मैं तुम्हें कैसे बताऊँ, पांडा? अरे, तुम्हारे असली पिता सही कह रहे हैं! वो गांजा खाने वाला पिता तुम्हारा असली पिता नहीं है। उसकी मौत गांजे से सीने में चोट लगने से हुई थी! उसमें मर्दानगी नाम की कोई चीज ही नहीं थी!”

द्वारका ने साहसपूर्वक पांडु को सत्य बताया, और उस क्षण से पांडु का व्यक्तित्व बदल गया।
रावसाहेब के प्रति उनका नजरिया बदल गया।
इसके कुछ समय बाद ही पांडु का विवाह भी तय हो गया। रावसाहेब ने पहल करते हुए एक दूर के रिश्तेदार से उनका विवाह करवा दिया। अब पांडु के तीन बच्चे हैं, लेकिन रावसाहेब और द्वारका दोनों ही अपने पोते-पोतियों को देखने के लिए जीवित नहीं हैं।
०-०-०

27. सिदराम

बारशी में बसने के बाद, मेरा अथारपगढ़ जाति के लोगों से अच्छा परिचय हुआ। जिन लोगों से मेरी थोड़ी बहुत समानता थी, वे मेरे मित्र बन गए। आज भी, मैं उनमें से कुछ जीवित लोगों से मिलता हूँ। जो लोग इस दुनिया से चले गए हैं, उनकी यादें समय-समय पर मेरे मन में आती हैं। मुझे उनकी संगति के सुखद पल याद आते हैं।
मुझे अपने अनेक शौकों की वजह से इतने अलग-अलग लोगों की संगति और दोस्ती मिली। लेखन, चित्रकला, शिकार और यात्रा मेरे पसंदीदा शौक हैं। सोलापुर जिले में पहले दो शौकों की वजह से ज़्यादा लोग मुझसे नहीं मिले; लेकिन शिकार के शौक की वजह से मुझे वहाँ दर्जनों दोस्त मिले। कुछ से तो मेरी गहरी दोस्ती भी हो गई। शिकार का शौक थोड़ा खर्चीला और खर्चीला है। उस समय मेरे पास स्कूटर या कार नहीं थी। इसलिए मुझे पहले वाहन मालिकों से दोस्ती करनी पड़ी। इसमें कल्लप्पा कोर्टगुंड ने मेरी बहुत मदद की। उनके पास एक जीप थी और दूसरी 36 मॉडल की शेवरले थी! 1964 और 1965 में पेट्रोल भी इतना महंगा नहीं था। हालाँकि कार कल्लप्पा की थी, फिर भी मुझे खुद ही पेट्रोल भरवाना पड़ता था। हर महीने दो सौ रुपये पेट्रोल पर खर्च करना ज़्यादा मुश्किल नहीं लगता था।
बारशी के उत्तर में स्थित कोरगांव, करेगांव और 'चुंबा' के सरपंच नाना मुंडे से लेकर गांव के बाहर रहने वाले सिदराम वदार तक, मेरी दोस्ती हो गई। इसका सिर्फ एक ही कारण था: शिकार का मेरा शौक!
सिद्रम मुंडे वदार जाति के हैं, हट्टे-कट्टे, गुलाबी कमीज और नीले रंग की धोती पहने, और कमर पर तंबाकू और पत्तों से भरी थैली लटकाए रहते हैं! जब सिद्रम उनसे मिलते, तो अपनी थैली निकालते और कुछ कहने से पहले ही सोलापुरी बाजरे में पका हुआ सुपारी काटकर उनके हाथ पर रख देते! मुझे सुपारी खाने की आदत नहीं थी। लेकिन सिद्रम ने जो सुपारी मुझे दी, उसे मना करने के बजाय मैंने उसे मुंह में डालने का नाटक किया।
"वाह, क्या वकील हैं आप! आप तो बहुत दूर से आए हैं!"
"हां, ढाई महीने हो गए हैं। तालाब पर मौसम कैसा है? क्या तालाब में पानी है? क्या बत्तखें आ गई हैं?"
"माइंडला!"

हर सर्दी में, हज़ारों प्रवासी बत्तखें चुम्बचा क्षेत्र में अंग्रेजों द्वारा बनाए गए तालाब पर आती हैं। इनमें बहमानी, रेड पोचार्ड, पिंटेल, पेंटेड रेड बीवर जैसी कई प्रजातियों की बत्तखें शामिल थीं। जब इन बत्तखों को किसी चीज़ से परेशानी होती, तो वे अचानक हवा में उछल पड़तीं। ऐसा लगता था मानो आसमान में बादल तैर रहे हों। ये प्रवासी बत्तखें कश्मीर क्षेत्र से तो आती ही हैं, साथ ही साइबेरिया, कज़ाकिस्तान, रूस, ऑस्ट्रिया, फ्रांस और इंग्लैंड से भी प्रवास करती हैं। आपके पास उनके प्रवास का क्या प्रमाण है? दरअसल, प्रमाण बहुत पुख्ता हैं!

दुनिया में जहाँ भी जल निकाय हैं, वहाँ के लोग बत्तखों का शिकार करते हैं, मैं आपको इसलिए बता रहा हूँ क्योंकि शायद आपको यह जानकारी न हो। दुनिया में बत्तखों की लगभग चार सौ से पाँच सौ प्रजातियाँ हैं और वे तीन सौ मील प्रति घंटे की रफ्तार से उड़ती हैं। तो उनका शिकार कैसे किया जाता है? एक कुशल शिकारी कभी छिपकर नहीं बैठता और बैठकर बत्तखों का शिकार नहीं करता। वह उन्हें छड़ी या पटाखों से मारकर तालाब से बाहर निकालता है और बारह बोर की तोप से हवा में ही उन्हें मार गिराता है। तीन सौ मील प्रति घंटे की रफ्तार से उड़ने वाली बत्तखों का शिकार करना बच्चों का काम नहीं है, केवल कुशल शिकारी ही शिकार करते हैं। मेरे प्रिय लेखक, अर्नेस्ट हेमिंग्वे, को भी ऐसा ही शौक था। हमारे महाराष्ट्र में प्रसिद्ध हुए कई लेखकों में से आर.वी. दिघे भी एक थे। उनमें भी शिकार का शौक था। दूसरे थे व्यांकदादा। मैं वेंकटेश माडगुलकर को व्यांकदादा कहता था। उनके घनिष्ठ मित्र जयवंतराव तिलक को भी शिकार का शौक था। हमने कई शिकार कार्यक्रम आयोजित किए।

तो ये चुम्ब गाँव की झील है, जो बत्तख के शिकार के लिए मशहूर है। मैं मज़ाक में कहा करता था, जिसने भी इस गाँव का नाम ‘‘चुम्ब’’ रखा, उसने नाम से पहले एक ‘‘न’’ क्यों नहीं जोड़ा?

जब बारिश का मौसम ज़ोरदार होता था, तो झील का पानी दो-तीन मील तक फैल जाता था। छोटी-छोटी नदियाँ और धाराएँ बहने लगती थीं। अगर हमें किसी धारा या धारा को पार करना होता था, तो हम सिदराम की पीठ पर बैठ जाते थे। वह हमें दूसरी तरफ ले जाता था। जवानी में उसके जैसा बलवान व्यक्ति कैसा रहा होगा? मेरे चाचा मेजर शेल्के ने भी कई बार पीठ पर बैठकर नदियों को पार किया था। लोग मज़ाक में उन्हें 'लौह पुरुष' कहते थे।

वह गांवों में कुएं खोदने का ठेका लेता था। कुएं खोदने से उसकी बांहों की मांसपेशियां इतनी मजबूत हो गई थीं कि वह आसानी से लगभग डेढ़ सौ पाउंड वजन वाले लोगों को उठा सकता था।
पुराने समय में, येदा के पहाड़ों में जंगली सूअर घूमते थे। इस सिद्रम ने अपने भाले से सैकड़ों जंगली सूअरों को मार डाला था। मैंने एक बार सिद्रम से कहा, "सिद्रम, तुम एक बार में कितना मटन खा सकते हो?"
"क्या मैं आसानी से दो या ढाई किलो वजन कम कर पाऊँगी?"
एक बार शिकार खत्म करने के बाद, मैंने झील में तैराकी की और किनारे पर हरियाली में बैठ गया।
"सिद्रम, क्या तुम्हें कोई लत नहीं है?"
"अरे, आप इस तरह बात कर रहे हैं, वकील साहब? मैं तो आधा पौंड रम की बोतल आसानी से पचा सकता हूँ!"
"आधे-चौथाई बोतल रम?" मैंने पछताते हुए कहा।
"इसमें गलत क्या है, उस आदमी के पैर देखो जिसे गांजा खाने वाले ने काट लिया है!"
हो गया। खुले विचारों वाले सिदराम, जो खूब शराब और गांजा पीते थे, ने मुझसे कहा, "वकील साहब, यहाँ गांजा उगाए हुए बहुत समय हो गया है! क्या सरकार को शराब की तरह गांजे पर भी प्रतिबंध लगा देना चाहिए?"
छह साल पलक झपकते ही बीत गए। मेरा तबादला आदेश किसी भी क्षण आ सकता था। इसलिए मैंने बारशी क्षेत्र में अपने सभी शिकारी मित्रों से मिलने का फैसला किया।
चर्या के यशवंत जगदाले, अगलगाँव के दमरे गुरुजी, मान्या के जागु, येदशी के शरदराव सस्ते, भोटप्या के जलिंदर, डेमरेवतड़ी के शिंदे गुरुजी, पांगरी के पापा शेख... कितने नाम गिनाऊँ? हम उन सभी से मिले। अंत में, हमने सिद्राम से मिलने का फैसला किया। यह मुलाकात झील पर हुई।
उस दिन मैंने एक चिंकारा मारा। विश्राम गृह के पीछे पत्थर के चूल्हे पर चिंकारा का मांस पक रहा था। मैंने झील में खूब आनंद से तैराकी की। सूरज डूब गया। पश्चिम दिशा में क्षितिज पर लाल-सुनहरे रंगों की 'रंगपंचमी' दिखाई दी। पहाड़ियों और पहाड़ों से ठंडी हवा चलने लगी।

मैं सिद्रम को अलविदा कहने के लिए बेताब था। मैंने कल्लप्पा से कहा कि वह मेरे बैग से मेरी "कर्नल" व्हिस्की का एक चौथाई हिस्सा और रम की एक बोतल लाए जो मैं सिद्रम के लिए लाया था। मैंने अपने गीले कपड़े बदले और अपने गिलास में "कर्नल" व्हिस्की का एक पेग डाला। मैंने सिद्रम के गिलास में रम का एक "पटियाला पेग" डाला। आप कह सकते हैं कि यह शराबबंदी का दौर था। आपको भी शराब रखने वालों पर अदालत में मुकदमा चलाना पड़ता था। तो फिर आपके यहाँ शराब का इतना "सूखा मौसम" कैसे हो सकता है?
यह सच है कि मैं सरकारी वकील था और शराबबंदी से जुड़े मामलों को संभालता था; लेकिन साथ ही मैं एक आम नागरिक भी था। मैंने स्वास्थ्य कारणों से सरकार से "स्वास्थ्य परमिट" प्राप्त किया था। इसके आधार पर मैं सरकार द्वारा अनुमोदित दुकान से रम की चार बोतलें, जिन की एक बोतल, ब्रांडी की एक बोतल और व्हिस्की की एक बोतल खरीद सकता था। हर कानून में कोई न कोई खामी होती है।
सिदराम को पानी मिलाई हुई शराब पसंद नहीं थी। वो "स्टेट" वाली शराब पीते थे। उस दिन उन्होंने रम का गिलास उठाया और मुझसे कहा "राम राम"। उनका यही राम राम का मतलब था "चीयर्स!"
लगातार दो पटियाला पेग पीने के बाद, सिदराम की जुबान खुल गई और वह अचानक भावुक हो गया और बोलने लगा।
"वकील साहब, आप मुझे चूमने आते थे, शिकार खेलते थे, मुझे टार्टर मछली खिलाते थे, अब आप बदल रहे हैं, तो आयुक्ष में मुझसे कहाँ मिलेंगे?"
"तुम ऐसा क्यों कह रही हो, सिद्रा? अरे, जब तक मुझमें जान है, मैं आती रहूंगी, है ना?"
"नहीं, नहीं, वकील साहब, ऐसा नहीं होता! फकीर का क्या हुआ?"
"वो फकीर कौन है? उसका क्या हुआ?"
सिदराम ने अपनी नम आँखों को हथेली से पोंछा और कहा, "वह फकीर मेरा दोस्त है। घर के सभी किसान एक ही जाति के हैं। वही इकलौता है जो मांस और मांस उत्पाद खाता है! वह दूध लाने के लिए साइकिल से बरशी जाया करता था। जब हमारी पार्टी तय होती थी, तो वह 'हप' लेकर आता था। उस दिन हमारी पार्टी तय हुई। मैंने एक मुर्गा काटा। मैंने चूल्हे पर खाना पकाया। जब सूरज डूब गया, तो मैं फकीर को

ढूंढने लगा; अंधेरा हो रहा था और मुझे चूल्हे के पीछे से साइकिल से बंधे खाली घड़ों की आवाज सुनाई दी। मैंने चूल्हे को पुकारा, "इतनी देर क्यों कर रहे हो!" फकीर ने कहा, "पहुँचने पर बताऊंगा!"
वकील सदमे में था। फिर उसे साइकिल से उतरना पड़ा। फकीर भी साइकिल से उतरा और उसका दाहिना पैर सांप के शरीर पर पड़ गया। उसी क्षण फकीर चिल्लाया, "सिदरा, तुम पर हमला हुआ है, सांप ने तुम्हारी एड़ी तोड़ दी है।"
वकील साहब, मैंने गली में लालटेन जलाकर गांव की ओर दौड़ लगाई। अगर वो गुस्सा हो गया तो क्या? फकीर गुस्से से आग बबूला हो रहा था। उसने अपना सिर मेरी गोद में रख दिया। वकील साहब, वो जो शराब की बोतल लाया था, थैले में ही फट गई! गली में मुर्गा पक रहा था! तो वकील साहब, जिंदगी का क्या मतलब है? आप अभी ठीक हैं, खाते-पीते हैं, बस! कल क्या होगा?''
सिदराम द्वारा बताई गई दिल दहला देने वाली सच्चाई सुनकर, मुझे उस दिन खाने की इच्छा ही नहीं हुई।
अगले दिन चुंब के पूर्व सरपंच नाना मुंडे का बेटा आया और बोला, "वकीलसाहेब सिदराम चले गए। आखिरकार, मैं तुम्हारी स्मृति मिटा दूंगा!"
०-०-०

28. कल्लप्पा कोटगुंड

बारशी में अपने छह वर्षों के दौरान, मैं अनगिनत लोगों से मिला। उनमें से केवल कुछ ही लोगों से मेरी दोस्ती हुई, लगभग पाँच या पच्चीस लोगों से। ये लोग मेरे पेशे से संबंधित नहीं थे। मेरे पेशे की बात करें तो, मैं सरकारी वकील और पुलिस अभियोजक हूँ। मैं हमेशा उन वकीलों के साथ रहता हूँ जो नियमित रूप से अदालत में आते हैं, लेकिन अगर कोई सरकारी वकील किसी वकील के बहुत करीब आने लगे, तो लोगों को शक होने लगता है। मैं थोड़ा अधिक खुले तौर पर व्यवहार करता हूँ, मैं अन्य पेशों

के लोगों के साथ भी रहता हूँ, जिनमें मोटर मैकेनिक, खराद मशीनों पर काम करने वाले कुशल कारीगर शामिल हैं। इनमें से प्रत्येक के बारे में एक लंबा विवरण लिखा जा सकता है।

बरशी में मेरी पहली मुलाकात कल्लप्पा कोटगुंड से हुई, जो बाद में मेरे दोस्त बन गए। कल्लप्पा की तेलगिरानी चौक में एक छोटी सी किराने की दुकान थी। यह बरशी के "रेड ज़ोन" इलाके के पास थी! मैंने बरशी में वेश्याओं की गिनती तो नहीं की, लेकिन दूसरे गांवों की तुलना में उनकी संख्या बहुत ज़्यादा थी। कल्लप्पा की किराने की दुकान वेश्याओं की बस्ती की शुरुआत में थी। उस दुकान में वह अपनी तरफ से बिजली की बैटरियां चार्ज करते थे। उनके पास दो पुरानी गाड़ियां थीं। एक 1935 मॉडल की शेवरले थी और दूसरी जीप। कल्लप्पा इन गाड़ियों को किराए पर देते थे। उन्हें गाड़ियों के इंजनों की अच्छी जानकारी थी।

मेरी पहली मुलाकात कल्लप्पा से अदालत में एक आरोपी के रूप में हुई थी!

उसके साथ कुछ ऐसा हुआ - उसकी विधवा बहन ने वेश्याओं की बस्ती में छह-सात कमरों वाला एक पुराना मकान खरीदा। उसने उसे वेश्याओं को किराए पर दे दिया। लेकिन ये वेश्याएं कभी भी नियमित रूप से किराया नहीं देती थीं। एक बार कल्लप्पा और उसका भतीजा भगवान किराया वसूलने उस मकान में गए। वेश्याओं के बूढ़े चाचा का उनसे झगड़ा हो गया। पहले तो कहा-सुनी हुई, फिर बात बढ़ गई। भगवान स्वभाव से थोड़ा गुस्सैल था। उसने बूढ़े को पत्थर की दहलीज से धक्का दे दिया। बूढ़ा अपने हाथ के बल गिरा और उसकी कलाई टूट गई। (फ्रैक्चर)

वेश्यालय वाले इलाके में झगड़े आम बात थे। इसीलिए आस-पास रहने वाले लोग इस पर ज्यादा ध्यान नहीं देते थे। लेकिन अपने चाचा का हाथ टूटा देखकर वेश्या चिल्लाने लगी और लोग इकट्ठा हो गए। वेश्या अपने घायल चाचा को लेकर पुलिस स्टेशन गई। वहां उसने शिकायत दर्ज कराई, "कल्लप्पा और भगवान लाठियां लेकर आए थे। उन्होंने मेरे बूढ़े चाचा को लाठियों से मारा, जिससे उनका हाथ टूट गया।"

पुलिस ने उस बुजुर्ग को सरकारी अस्पताल भेजा। वहां से रिपोर्ट आई: "किसी कठोर और कुंद वस्तु, जैसे कि लाठी, से जोरदार प्रहार के परिणामस्वरूप घाव हो गया है!"

कल्लाप्पा और भगवान के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 324 के तहत मामला दर्ज किया गया था। मामले की जांच पूरी होने के बाद, पूछताछ के लिए

मामला अदालत में लाया गया।
मैं सरकारी अभियोजक हूँ, गणपुले आरोपी का वकील है! गणपुले आपराधिक अदालत में एक जाना-माना नाम था।
मामला शुरू होने से पहले ही, वेश्या बारशी छोड़कर चली गई और उसके आसपास की वेश्याओं ने उसके हमेशा के लिए मानकेश्वर जाने से पहले आपस में मामला सुलझाने की कोशिश की। उन्होंने बूढ़े आदमी को अस्पताल के खर्च के लिए कुछ पैसे दिए। चूंकि मामला बातचीत से सुलझ सकता था, इसलिए मैंने सरकार की ओर से हस्तक्षेप नहीं किया। मामला अपने आप सुलझ गया।
उसके बाद, मैं कभी-कभार कल्लप्पा से मिलने जाने लगा। वह और उनकी पत्नी मूल रूप से बीजापुर के रहने वाले थे। कई वर्षों से उनकी कोई संतान नहीं थी, इसलिए उन्होंने दोबारा शादी करने का फैसला किया। उनकी साली भी इसके लिए राज़ी हो गईं। कल्लप्पा अपनी बेटी से मिलने बीजापुर गए और अपनी साली की छोटी बहन से शादी करके वापस आ गए। हालांकि, उनकी साली को अपनी सबसे अच्छी बहन का उनकी "पत्नी" बनना पसंद नहीं आया। उनका कल्लप्पा के साथ लंबा रिश्ता रहा, लेकिन वह जल्द ही खत्म हो गया। एक साल के भीतर ही उनकी नई पत्नी ने एक बेटी को जन्म दिया। उस बेटी के बाद, उनके तीन बेटियां और एक बेटा हुआ। मैंने कल्लप्पा से पूछा, "क्या आपने सारे 'पेंडिंग काम' पूरे करने का फैसला कर लिया है?" उस समय मुझे शिकार का शौक था। हर शनिवार और रविवार को मैं एक झील के किनारे बने सिंचाई बंगले में रहता था। दिन में मैं थोड़ा शिकार करता, जी भर कर झील में तैरता। रात में मैं अपने शिकारियों के साथ बातें करता। यहां कोई प्रदूषण नहीं है, इतनी खूबसूरत जगह पर घास पर लेटने और आकाश को देखने का आनंद, झील के किनारे हरी-भरी हरियाली पर लेटने और आकाश में चमकते अनगिनत ग्रहों और तारों को देखने का आनंद, जब तक आप इसका अनुभव नहीं कर लेते, तब तक आप इसे जान नहीं सकते।
वहाँ, कल्लप्पा ने तीन पत्थरों से एक अस्थायी चूल्हा बनाया था। उस पर से शिकार पकाने की खुशबू आती रहती थी। जब कल्लप्पा वर्दी लेकर आता और बताता कि खाना तैयार है, तो मैं उससे कहता, “बैठो अन्ना, मुझे अपने पेशे से जुड़ी कुछ अविस्मरणीय घटनाएँ सुनाओ!” उस दिन, कल्लप्पा ने मुझे बताना शुरू किया।

उस समय मैं अपनी शेवरले कार किराए पर देता था। चुनाव के समय धंधा खूब चलता था। कभी-कभी मुझे किसी मरीज को इलाज के लिए सोलापुर ले जाने के लिए कार मिल जाती थी। कभी-कभी शादी के लिए कार ले जाता था। एक बार दो-तीन लोग आए और बोले, "चांदनी गांव से एक शव को बरशी लाना है।" मैंने इससे पहले कभी अपनी कार को शव वाहन के रूप में किराए पर नहीं दिया था। लेकिन आने वाले लोग बहुत शोर मचाने लगे, इसलिए मैं मान गया। लेकिन मानने से पहले मैंने उन पर एक शर्त रखी। शव को कार में रखने के बाद, रास्ते में चलती कार में कोई शोर नहीं करेगा। जब उन्होंने यह शर्त मान ली, तो मैं शेवरले कार लेकर चांदनी गया। मेरे साथ चार महिलाएं और दो पुरुष आ रहे थे। फिर सवाल उठा कि शव को कहां रखा जाए? मैंने उनसे कहा, "क्या शव को कार के ट्रंक में रखना ठीक रहेगा?" उन्होंने कहा, "हां।" फिर उन लोगों ने शव को उठाया और ले आए, वह थोड़ा अकड़ा हुआ था। वे उसे ट्रंक में नहीं डाल पाए, फिर बड़ी मुश्किल से उन्होंने शव की जांघों को पीछे रखा। उन्होंने डिग्गी बंद कर दी। मेरे निर्देशानुसार, कार से उतरने वाली महिलाओं को रोने की अनुमति नहीं थी। आधी रात के करीब, कार बरशी पहुँची। नगर पालिका चौकी पर तैनात दत्तोबा सैनिक ने उसे रोक दिया। उसने कहा, "डिग्गी खोलो। चूंकि सीमा शुल्क से बचने वाले सामान बड़ी मात्रा में आयात किए जा रहे हैं, मुझे ऊपर से आदेश मिला है कि हर कार की डिग्गी खोलकर देखो!" मैंने कहा, "डिग्गी में ऐसा कोई सामान नहीं है।"

"तो क्या हुआ?"

"एक शव! सदानंद पाटिल चांदनी की बहन के घर गए थे। वहीं उनकी अचानक मृत्यु हो गई। उनका शव कार से निकाला गया।"

दत्तोबा को यकीन नहीं हो रहा था। उसने कहा, "भले ही यह एक लाश हो, जब तक मैं इसे अपनी आँखों से नहीं देख लेता, तब तक मुझे यकीन नहीं होगा।"

मुझे गाड़ी का ट्रंक खोलना पड़ा। दत्तोबा आगे आया और बैटरी चालू करके लाश को देखने लगा। तभी, अकड़ी हुई लाश का एक पैर स्प्रिंग की तरह उछला और उसने दत्तोबा के पेट पर लात मार दी। उस भयानक घटना से भयभीत होकर दत्तोबा भागा और भगवंत मंदिर के ठीक पीछे स्थित अपने घर पहुँच गया।

हमने शव के पैरों को फिर से मोड़ा, धड़ को फिर से बंद किया और उसे उसके घर ले आए। उसके साथ आई महिलाएं घर पहुंचते ही जोर-जोर से जश्न मनाने लगीं। दरवाजे के सामने पहले से ही भीड़ जमा हो चुकी थी।
गेलाऽऽऽ गं बाई माजा, राजा गंऽऽ!
उस समय किराया सौ रुपये तय था, लेकिन यह सब देखकर मैंने किराया नहीं मांगा। तब से मैं बहरा हो गया हूँ। मैंने शव को लाने या पहुंचाने का किराया कभी नहीं लिया।
एक महीने बाद, नाका क्लर्क मुझसे मिला। मैंने उससे पूछा, "क्या, दत्तोबा, तुम वो लात भूल गए जो पटाला ने तुम्हें मारी थी?"
डैटोबा ने उसके गाल पर थप्पड़ मारते हुए कहा, "उस दिन के बाद से, जब भी रात में कोई गाड़ी आती है, तो मैं किसी से भी डिग्गी खोलने के लिए नहीं कहता!" उसे चिढ़ाने के लिए मैंने कहा, "भूत एक पल के लिए ज़िंदा हो जाता है और मुझे अपमानित करने वाले को लात मारता है!"
बाद में मेरा तबादला कोल्हापुर हो गया। जैसे ही मुझे अपने तबादले की खबर मिली, बारशी इलाके में मेरे दोस्त और परिवार वाले बहुत परेशान हो गए। खाने के निमंत्रण आने लगे, लेकिन हर किसी के यहाँ जाना नामुमकिन था। मैंने कहा, "मैं एक या डेढ़ महीने की छुट्टी लेकर वापस आऊँगा, तब हम एक डिनर पार्टी का आयोजन करेंगे।"
बारशी से जाने का दिन आ गया। मैंने लातूर से मिराज जाने वाली ट्रेन में रिजर्वेशन कराया। बारशी लाइट में एक बड़ा फर्स्ट क्लास कोच था और उसके बगल में एक और कोच था। उस कोच पर लातूर से आने वाली एक पर्ची लगी हुई थी।
श्री बाबा कदम और उनके परिवार के लिए आरक्षित।
विदाई देने के लिए एकत्रित हुए डेढ़ सौ लोग फूलों की मालाएं लेकर आए थे।
कल्लप्पा दिन भर परेशान रहा। दोपहर में वह घर आया और बोला, "पिताजी, आप पिछले पांच-छह सालों से मुझे जान से मारने की कोशिश कर रहे थे और अचानक हमें छोड़कर क्यों चले गए?"
"नौकरी तो है ही, सरकारी कर्मचारियों को कभी न कभी तो जाना ही पड़ेगा!"
इस पर कल्लप्पा ने कहा, "अपनी नौकरी छोड़ दो और बारशी अदालत में वकालत करो। तुम्हें अपनी तनख्वाह से तीन गुना ज़्यादा कमाई होगी!"

मैंने मुस्कुराते हुए कहा, “अब हिम्मत नहीं होती। लेकिन मैं समय-समय पर बारशी आता रहूंगा!” ट्रेन करीब छह बजे पहुंची। कल्लप्पा ने ट्रेन के डिब्बे पर फूलों की माला टांगी। कल्लप्पा कहीं से एक बैंड लेकर आया था। जब ट्रेन आठ बजे रवाना होने वाली थी, तो उसमें से विदाई की धुनें सुनाई देने लगीं। लोग हैरान थे, अब तक इतने सारे पुलिस अधिकारी बारशी आए और गए, लेकिन गांव के हर वर्ग के लोगों ने किसी को भी विदाई नहीं दी थी। बारशी स्टेशन से ट्रेन के रवाना होते ही कल्लप्पा फूट-फूटकर रोने लगा।

बाद में, जब बारशी से मेरे परिचित आते, तो मैं उनसे कल्लप्पा के हालचाल पूछता, और वे कहते, "तुम्हारे तबादले के बाद से कल्लप्पा बहुत ज़्यादा शराब पीने लगा है। अब उसकी तबीयत ठीक नहीं है। जब तुम वहाँ थे, तब वह थोड़ा उपद्रवी था।"

फिर जनवरी 2002 में मैं बारशी गया। सब लोग मुझसे मिलने आए, लेकिन मेरी मुलाकात कल्लप्पा से नहीं हुई। जब मैंने पूछताछ की तो पता चला, "कल्लप्पा बिस्तर से उठ नहीं सकते। अत्यधिक शराब पीने के कारण उन्हें 'सिरोसिस' हो गया है।"

पांच-छह साल तक मेरे साथ शिकार शिविरों में रहने वाले, हंसमुख, विनोदी और मुझसे बेहद प्यार करने वाले कल्लाप्पा को मृत्यु के उस गंभीर दौर में देखने का साहस मुझमें नहीं था। कुछ ही समय बाद कल्लाप्पा का देहांत हो गया।

मैं अब भी कभी-कभार बारशी जाता हूँ। मैं कल्लप्पा को फिर कभी नहीं देख पाऊँगा, जो तेलगिरनी चौक की उस छोटी सी किराने की दुकान से मुझे देखते ही खुशी से उछलकर गले लगा लेता था।

०-०-०

29. सगुण और नरबा

पीले रंग का कोशा पटका, लंबी आस्तीन वाली खाकी कमीज, टखनों तक पहुँचने वाली धोती और पैरों में घिसी हुई चपटी चप्पलें, यही नारुमामा उर्फ नरबा का पहनावा है!

हालांकि नरबा बहुत पढ़े-लिखे नहीं थे, फिर भी वे बहुत व्यावहारिक और विनम्र स्वभाव के थे। वे स्वयं कभी अदालत में नहीं जाते थे; लेकिन लोगों को कानूनी सलाह देने में वे माहिर थे। उन्होंने माली वकीलों के साथ रहकर कानून का यह ज्ञान प्राप्त किया था। माली वकीलों ने घोर गरीबी में रहकर पढ़ाई की थी और एम.ए., एल.एल.बी. की उपाधि प्राप्त की थी। उन्होंने कोल्हापुर राज्य में कुछ समय तक

मुंसफ के रूप में भी काम किया था। उन माली वकीलों को नरबा पर पूरा भरोसा था। नरबा उनके घर के कामकाज पर विशेष ध्यान देते थे।
नरबा के सभी हाव-भाव स्त्री जैसे थे। जब नरबा ने कहा, "ओह, मेरे प्रिय, मैं क्या कहूँ?", तो नरबा को कुछ अद्भुत समझ आया। उनके हाव-भाव हमेशा स्त्री की ओर ही होते थे। उनकी पत्नी और चार बच्चे भी थे; लेकिन किसी भी बच्चे के चेहरे के भाव नरबा जैसे नहीं थे। उन्होंने शायद यह उम्मीद नहीं की होगी कि उनके बच्चे उन्हें "पिता" कहकर पुकारेंगे। उस समय मैं मुश्किल से ग्यारह या बारह वर्ष का था। मुझमें अभी इतनी समझ नहीं थी कि मैं पुरुष-स्त्री संबंधों की जटिलताओं को समझ सकूँ। फिर भी, मुझे लगता था कि पुरुषों को पुरुषों की तरह और महिलाओं को महिलाओं की तरह व्यवहार और बोलना चाहिए।
नरबा आमतौर पर सगुना मौसी के घर में रहती थी! सगुना भी 65 वर्ष की थीं; लेकिन वह बहुत ही कूटनीतिक महिला थीं! वह किसी से ज्यादा बात करना पसंद नहीं करती थीं; लेकिन वह दूसरे के मन की बात को सटीक रूप से समझ लेती थीं!
गली के लड़के-लड़कियों की शादी तय करते समय सगुना हमेशा नरबा के साथ मौजूद रहती थी।
जगह देखने जाने से पहले, लड़के-लड़कियों के माता-पिता सगुना और नरबा से सलाह लेते थे। अशिक्षित सगुना बहुत चतुर और रणनीतिज्ञ थीं। उनके पाँच-छह बेटियाँ और दो बेटे थे। पति की मृत्यु के बाद, परिवार की ज़िम्मेदारी उन पर आ गई। इतने सारे बच्चों का पालन-पोषण करने और घर के खर्चों को पूरा करने के लिए आय का कोई साधन न होने के कारण, सगुना ने खेती करने का फैसला किया। उनके पास एक छोटा सा खेत था जहाँ अब उदमनगर है। सगुना ने उस ज़मीन से सटी आठ एकड़ ज़मीन मालिक से कुल के तौर पर ली थी। वह हर सुबह पाँच बजे उठकर खेत जाती थीं। बचपन में खेती का ज़्यादा अनुभव न होने के बावजूद, सगुना ने अपनी पहल पर खेती शुरू की। उस समय कुल और मालिक के बीच ज़्यादा ईर्ष्या या दावे नहीं थे। अगर कोई संभावना होती भी, तो माली परिवार का ही एक वकील होता था। नरबा की मध्यस्थता के कारण, सगुना को मुफ्त कानूनी सलाह मिल जाती थी। नरबा, सगुना की चाची की बहुत भरोसेमंद निजी सहायक थीं।

वे दोनों हमेशा खेती-बाड़ी और घरेलू मामलों पर चर्चा और सलाह-मशविरा करते थे।
"नरबा जो कह रहा है, सुनो! जिस ज़मीन पर मैं काम कर रहा हूँ, उसका मालिक अब मरने वाला है! वह तो देर-सवेर मर ही जाएगा, इसलिए मैं इसे कागज़ पर लिख लेता हूँ! मैं यह ज़मीन तुम्हें आठ हज़ार में बेच रहा हूँ! आज का माली वकील के पास शिकायत करने क्यों जा रहा है, क्या यह कागज़ लिखा जा रहा है?"
नरबा उठ खड़ा हुआ, खाली चाय की तश्तरी में गिरी बीड़ी को बुझाते हुए उसने दोनों हथेलियाँ ज़मीन पर रख दीं। उठते हुए उसने कहा, "अरे, अलविदा! बुढ़ापे ने बेचारी औरत पर अपना असर डाल दिया है! रसोइया काम पर चली गई है!"
इस पर, कई वर्षों से नरबा को अच्छी तरह से जानने वाली राजनयिक सगुना ने मजाक में कहा, "काम करते-करते थक ही कब गए? अचानक ही तो पिता बन गए!"
सगुणा के कथन पर नरबा क्रोधित नहीं हुआ। सगुणा नरबा के मर्दाना स्वभाव को जानती थी। नरबा उससे कभी भी विनम्रता से बात नहीं करता था। सगुणा निश्चित रूप से उसके व्यवहार की आलोचना करती।
सगुणा के बताए अनुसार, नरबा माली के वकील के पास गया, जो वहाँ बैठकर शेविंग कर रहा था। उसके दोनों गालों पर साबुन का झाग लगा हुआ था, उसके दाहिने हाथ में रेजर और बाएं हाथ में दर्पण था।
चूंकि नरबा लगातार आता-जाता रहता था, इसलिए वकील ने उसके आने की अनदेखी करते हुए अपनी जीभ होठों के नीचे रखकर दाढ़ी बनाना शुरू कर दिया।
"तुम वकील सायब को इस तरह क्यों मार रहे हो?" नरबा ने कहा।
दाढ़ी बनाते हुए रुककर माली ने कहा, "आपका क्या मतलब है?" "सुगंदा (नरबा सगुना जिसे सुगंधा कहते हैं) ने कहा कि जो ज़मीन उसने मालिक से परिवार के तौर पर ली है, वह ज़मीन बूढ़ी और बीमार है, या फिर उसे उससे एक कागज़ लेना चाहिए!" नरबा की बातें सुनकर वकील ने दाढ़ी बनाते हुए कहा, "अरे, लेकिन किस तरह का कागज़? उसने कहा कि चूंकि मैं सगुंदा से शादी करने को तैयार हूं, इसलिए मैं उससे एक कागज़ लूंगा और उस पर मुहर लगाकर उसे कुछ संघकर के बीज दूंगा।"
लेकिन क्या मालिक मौके पर ही ऐसा सौदा करने को तैयार है? क्या उसका परिवार शांति से रह रहा है?

क्या उसके आस-पास कोई नहीं है?
"आस-पास कोई नहीं है? तो फिर अखबार की क्या ज़रूरत है! एक नया कानून आया है, जिनके पास कई सालों से खेती के लिए ज़मीन है, वे उस ज़मीन के मालिक बनने वाले हैं। आज या कल।"
"जैसा आप कहते हैं, यह सच है! मैं सगुंडा को बता दूंगा!"
"इस साल ज्वार की कितनी पैदावार हुई?" वकील ने पूछा।
“माप तीन या चार टुकड़े थे! फसल अभी तक कहाँ है? कटाई और थ्रेसिंग के बाद, सगुना बकरियों को काटकर ‘धवारा’ करता था! चलो, वरना ये तो रसभरी जैसी चीज़ है!”
माली वकील का परिवार मलकारिया था। उनके घर में मांस और मछली खाना मना था; लेकिन माली वकील मुंबई में पढ़ाई के दौरान "सामिश" आहार के अनुयायी बन गए थे। उन्होंने कहा, "सगुना को बता देना कि दोहारा रात के खाने पर आ रहा है; लेकिन हमारे घर में किसी को पता नहीं चलना चाहिए!"
"हमें इसकी चिंता क्यों करनी चाहिए? यह कान उस कान के सामने कुछ भी नहीं है।"
दाढ़ी संवारने के बाद वकील नहाने चला गया। नरबा, सगुना के पास आया। सगुना ने पूछा, "आपके वकील ने क्या कहा?"
"इसे कागज पर मत लिखो, वकील साहब; अब आप पूरी संपत्ति के मालिक होंगे!"
उसके कथन से अविचलित होकर सगुना ने कहा, “नरबा भैर कुणाल बोलू नाग बरन का! वकील आता है और दुकानदार को ले जाता है। वे कहते हैं कि वे कभी-कभी शराब पीते हैं, तो यह भी एक कारण है।” सगुना ने अंगूठा दिखाते हुए कहा।
"आपको कैसे मालूम?"
सगुना ने एक अजीब सी मुस्कान के साथ कहा, "वह 'वकील' भले ही दुनिया को नाप रहा हो, लेकिन मैं उसकी ओर ऐसे मुड़ती हूँ मानो वह रेंग रहा हो!"
सगुन के खेत की फसल कट चुकी थी और अनाज की थ्रेसिंग भी हो चुकी थी। थ्रेसिंग फ्लोर पर सफेद अनाज का ढेर लग गया। उस साल सगुन ने दो बकरियां काटीं। खाद्य विभाग नरबक में था। उनके मार्गदर्शन में मटन पक रहा था।
रात करीब 9:30 या 10 बजे, वकील अपने दो दोस्तों को लेकर आया। कैफे में उनके खाने के लिए अलग से व्यवस्था की गई थी।

नरबा ने कंबल बिछाया। वकील और उसके दोस्त बैठ गए। नरबा ने अलमारी में रखी कोल्हापुरी रम की एक बोतल निकाली। वकील को बोतल देते हुए उसने कहा,
"'सावकास, मैं तुम्हारे लिए यहाँ से खाना लाऊंगा!'"
वकील ने हैरानी से नरबा की ओर देखा और कहा, "अरे, यह क्या है? आपको कैसे पता चला कि मैं इसे ले रहा हूँ? मैंने इसे कभी आपके सामने नहीं लिया है?"
"मुझे यह कहां से मिला? मैंने बस इतना कहा, 'यह बोतल आपकी है,' और उसने मुझे यह रुपया दिया और अपने बटुए से निकाल कर दे दिया।"
वकील ने प्याले में रम डाली और कहा, "वाह भाई! अगर तुम पढ़ाई करके वकील बन जाते, तो हमारे पेट पर पैर रख देते। अरे, ये लो, नरबा?" वकील ने रम का प्याला नरबा को देते हुए कहा, "शर्माओ मत, ले लो।"
दोहार्या लोगों का भोजन उनके संगीत की तरह ही होता है!
अगले ही साल, पूरी ज़मीन सगुन की संपत्ति बन गई। इसलिए जब वहां उद्यमनगर का निर्माण हुआ, तो सगुन ने उस ज़मीन को ध्वस्त करके लाखों रुपये कमाए।
जिन लोगों ने सगुण और नरबा की जोड़ी को करीब से देखा, वे उन्हें कभी नहीं भूलेंगे!
०-०-०

30. कप्तान संपतराव कालेकर

साढ़े पांच से छह फीट लंबे, सांवले रंग के, भव्य माथे वाले, घुंघराले बालों वाले और थोड़ी नुकीली नाक वाले कैप्टन संपतराव कालेकर हमारे गांव में एक अविस्मरणीय व्यक्तित्व थे।

यह कोल्हापुर से बारह-पंद्रह मील पश्चिम में स्थित कालेगांव के कर्बा कालेकर का सबसे बड़ा बेटा है। बचपन में वह रोज़ाना अभ्यास के लिए गांव के प्रशिक्षण मैदान में जाया करता था। धीरे-धीरे उसने छोटे-बड़े कुश्ती मुकाबले करने शुरू कर दिए। उस समय कोल्हापुर में कुश्ती बहुत लोकप्रिय थी। कुश्ती में प्रतिभा रखने वालों को राज्य

में कई नौकरियां मिल जाती थीं। युवा पहलवानों को पुलिस विभाग में नौकरी की गारंटी दी जाती थी। बारह-तेरह साल का संपत मोतीबाग कुश्ती प्रशिक्षण मैदान में कुश्ती करने के लिए कोल्हापुर आया था। उस समय अधिकांश पहलवान निरक्षर थे। वे सोचते थे कि अगर वे बुनियादी तौर पर पढ़ना-लिखना सीख लें, तो बस इतना ही काफी है। कुश्ती की तकनीकों में माहिर पहलवान आसानी से प्रसिद्ध हो जाते थे। ऐसे कुशल पहलवानों को राज्य सरकार से मासिक भत्ता भी मिलता था। छोटे-छोटे चपटे तांबे के बाल्टी लिए, कमर पर लुंगी, शरीर पर मलमल की कमीज और गले में काले धागे से बंधा ताबीज पहने ये युवा पहलवान हाथियों की तरह झूमते हुए गंगावेशी से दूध लाने जाते थे। उस समय, सड़कों पर लोग मजबूत छाती, मजबूत भुजाओं और मजबूत कलाई वाले उस युवा पहलवान को सम्मान की दृष्टि से देखते थे। उनमें से कई लोग उन्हें नाम से जानते थे।

संपत आठ से दस साल तक कोल्हापुर में रहे। उन्होंने देखा कि उनके अधिकांश पहलवान मित्र अशिक्षित थे। उन्हें शिक्षा में जरा भी रुचि नहीं थी। अगर उन्हें शिक्षा मिल जाती, तो वह व्यर्थ नहीं जाती। संपत ने रात्रि विद्यालय जाना शुरू किया। जल्द ही उन्होंने मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण कर ली, जो उस समय कुछ कठिन थी। उन्होंने समय-समय पर छोटे-मोटे काम भी किए। उस समय राजाराम महाविद्यालय में खिलाड़ियों को तुरंत प्रवेश मिल जाता था। महाविद्यालय प्रबंधन और प्रधानाचार्य को भी इस बात पर गर्व था कि उनके महाविद्यालय में उत्कृष्ट हॉकी खिलाड़ी, क्रिकेट खिलाड़ी, पहलवान और एथलीट हैं। नियमित व्यायाम से संपत को जो शारीरिक शक्ति प्राप्त हुई थी और शिक्षा से जो आत्मविश्वास मिला था, उसी के बल पर उन्हें राजाराम महाविद्यालय में दूसरे वर्ष में ही सेना में भर्ती होने का अवसर मिला। संपत को राजाराम राइफल्स में द्वितीय लेफ्टिनेंट के पद पर पदोन्नति मिली। जब गांव में जन्मे और कुश्ती के शौकीन संपत पहली बार पूरी सैन्य वर्दी में गांव गए, तो ग्रामीणों ने उनका भव्य जुलूस निकालकर स्वागत किया। केर्बा कालेकर ने स्वयं को सौभाग्यशाली महसूस किया। अगर आस-पास के गांवों के धनी जमींदार दूल्हों की नजर संपत पर न होती तो यह आश्चर्य की बात होती! आस-पास के गांवों के जमींदार दूल्हे केर्बा कालेकर के छोटे से घर आने लगे। केर्बा ने उनसे कहा, "देखिए, संपत की पसंद का सवाल है। आप उसे अपनी बेटी दिखाइए। मैं तय करूंगा कि उसकी शादी

होने देनी है या नहीं। अगर उसे लड़की पसंद आई तो बात पक्की। वह अपने आप में एक आदमी है, उसे खुद शादी का फैसला क्यों न करने दिया जाए?"
संपत ने सोचा, एक ज़माना था जब मैं कोल्हापुर में गुज़ारा करने के लिए छोटे-मोटे काम करता था। अब वो दिन आ गए हैं। दुनिया की हर चीज़ पैसे के आगे फीकी पड़ जाती है! काश मेरे पास एक ऐसा ससुर होता जो मुझे मज़बूत सहारा देता!
उस समय दस रुपये आज के हज़ार रुपये के बराबर थे। संपत ने तय किया कि कम से कम पच्चीस हज़ार रुपये दहेज में एक लड़की का घर होना चाहिए। साल्वन के तुकाराम शेलार-पाटिल एक धनी व्यक्ति थे! उनका विवाह चार महीने तक चला। उस समय टोलेजांग वाडा गाँव में धनी व्यक्ति को "सरकार" कहा जाता था। तुकाराम शेलार सरकार के केवल दो बच्चे थे, बड़ी अक्कताई और छोटा सीताराम। दोनों ही बच्चे गोरे रंग के थे, लेकिन कद में बहुत छोटे थे। सीताराम दोनों में बेहतर था। लेकिन अक्कताई की लंबाई केवल साढ़े चार से पाँच फीट थी। इसके अलावा, उसके दो सामने के दांत होंठों से बाहर निकले हुए थे। अक्कताई, जिसने अभी-अभी पढ़ना-लिखना सीखा था, को कई गाँवों से रिश्ते के प्रस्ताव मिले थे। शेलार सरकार अपने दामाद को "हाफ़िसर" बनाना चाहते थे। वे सैन्य अधिकारी के पद को छोड़ने के लिए दृढ़ थे। उन्होंने संपत को तीस हज़ार रुपये दहेज देकर और दोनों को खर्च करके उससे शादी का प्रस्ताव रखा। लड़की संपत को बिल्कुल भी पसंद नहीं आई। लेकिन शेलार-पटला द्वारा दी गई दहेज की रकम देखकर संपत मान गया! राजाराम कॉलेज में कई फैशनेबल लड़कियों को देख चुके संपत को पता था कि वह इस "बटूक बैंगन" लड़की को सिर्फ पैसों के लिए चुन रहा है। अगर घर पर उसकी पत्नी नहीं है, तो बाहर दोस्त बनाने से उसे कौन रोकेगा? संपत ने यही सोचा।
संपत की शादी बड़े धूमधाम से हुई। सलवान में शेलार-पाताल हवेली के सामने एक मंडप बनाया गया। कोल्हापुर से दो गाड़ियों में भरकर सैन्यकर्मी शादी में शामिल होने आए। कोल्हापुर में प्रतिष्ठा का प्रतीक मानी जाने वाली पुलिस बैंड भी पहुंची। बागल चौक के शिकालगारों ने सात-आठ हजार रुपये की शराब परोसी। छह बकरियों की कुर्बानी दी गई। शादी का भोज तैयार किया गया। पूरा गांव खाने के लिए आया। शादी के बाद आसपास के गांवों में एक महीने तक चर्चा चलती रही... "मेरी सगाई कैसे हुई? कहीं किसी जागीरदार के बेटे की सगाई तो नहीं हो गई?"

इसी बीच संपत ने स्नातक की उपाधि प्राप्त कर ली। वह अंतर-महाविद्यालयीय खेल प्रतियोगिताओं के लिए गाँव-गाँव जाया करता था। उसने कई बड़े पुरस्कार जीते थे। लेकिन सेना अधिकारी बनने के बाद उसकी जीवनशैली बदल गई। उसे सैन्य प्रशिक्षण के लिए इंदौर, महू, देहरादून, दिल्ली जैसे स्थानों पर जाना पड़ता था। तीन-चार साल के भीतर ही वह "कैप्टन" बन गया। उसने हमारे गाँव में दो मंजिला मकान खरीदा। उसकी एक बेटी और एक बेटा था। सेना में उसके साथी कभी-कभी पारिवारिक पार्टियों के लिए इकट्ठा होते थे, लेकिन संपत कभी अक्कताई को अपने साथ नहीं ले जाता था, और उसे इसमें कोई बुराई भी नहीं लगती थी। सेना तो बस मौज-मस्ती करने वालों की पार्टी होती है!

एक तरफ मेज पर रम, ब्रांडी, जिन और व्हिस्की की बोतलें रखी थीं, और घुटनों तक लंबे, बंद गले वाले सफेद कोट, कमर पर लाल बेल्ट और सिर पर स्प्रूस की शाखा वाली पगड़ी पहने एक वेटर ट्रे से मेहमानों को पेय परोस रहा था। बीच-बीच में "स्नैक्स" की प्लेटें भी बांटी जाती थीं। एक तरफ "सज्जन" लोग हाथों में गिलास लिए जोर-जोर से हंसते और अपने दोस्तों के साथ "मजाक" करते। दूसरी तरफ सेना अधिकारियों की पत्नियां शीतल पेय में जिन या वोदका पीतीं। सबका पहनावा देखना वाकई दिलचस्प था! उनमें से कुछ तो आगे बढ़कर (उन्नत) पुरुषों की भीड़ में शरमा जातीं। कई महिलाएं बिना आस्तीन के ब्लाउज और साड़ियां पहनकर बिना किसी झिझक के शराब का आनंद लेतीं!

संपथ शराब को हाथ भी नहीं लगाता था। वह अपने साथियों के बगल में बैठकर उनकी फैशनेबल पत्नियों को देखता रहता था। यही उसे खुशी देता था। घर पर वह एक गृहिणी की तरह लापरवाह रहता था, जैसे कोई गांव की औरत जिसके दांत बाहर निकले हों, इसलिए उसे बाहर फैशनेबल महिलाओं को देखना अच्छा लगने लगा। कई अधिकारियों की पत्नियां भी उसे तिरछी निगाहों से देखती थीं। वह उन्हें चेहरे पर मुस्कान के साथ जवाब देता था।

उनका व्यक्तित्व अद्भुत था। राजाराम राइफल्स अचानक बंद हो गई। उसमें कार्यरत अधिकारियों को वन विभाग, पुलिस विभाग आदि में नौकरी दे दी गई, जो उनके पसंदीदा विभाग थे। संपत ने पुलिस विभाग को चुना। वे सीधे पुलिस कांस्टेबल बन गए। कम बोलने वाले और अपनी राय न देने वाले संपत, मजबूत कद-काठी के

व्यक्ति थे, जिन्होंने छह साल पुलिस विभाग में काम किया और सेवानिवृत्त हो गए। पुलिस विभाग में शामिल होने के बाद, वे खुले तौर पर एक बाहरी व्यक्ति की तरह व्यवहार करने लगे। सेवानिवृत्ति के बाद, संपत गैलरी में रेलिंग पर खड़े होकर कॉलेज आने-जाने वाले बच्चों को देखने लगे।

घर पर वह अपनी पत्नी से शिष्टाचार का एक शब्द भी नहीं बोलता था। बेटी अपने पिता की तरह हष्ट-पुष्ट और मजबूत थी। गोरा रंग होने के बावजूद, बेटा थोड़ा सा सांवला था और पढ़ाई में बहुत अच्छा नहीं था। बेटियों को अपने पिता के गुण विरासत में मिले थे। वह तेरह-चौदह साल की उम्र से ही लड़कियों से फ्लर्ट करती आ रही थी। संपथा उससे जल्द से जल्द छुटकारा पाना चाहती थी।

शेलार-पाताल अपनी पोती के लिए एक अच्छी जगह की तलाश करने लगे। तभी उन्हें सलवान का संदेश मिला, “संपत की बेटी सुलोचना घर से भाग गई है।”

बेबी का भाई सूर्याजी भी बदमाशों की संगति में छोटी-मोटी चोरियां करने लगा। एक चोरी के मामले में वह कीमती सामान के साथ पकड़ा गया। उसे दो साल की सजा सुनाई गई। इन दोनों दिल दहला देने वाली घटनाओं का संपत पर कोई असर नहीं हुआ। वह शुरू से ही बदमाश था। बाद में, चंद्री नाम की एक वेश्या रोजाना रंगे चेहरे के साथ उसके घर आने लगी। वह सारा दिन संपत के घर पर ही रहती थी। शाम को, अक्कताई अपने नौकरों के जरिए दूल्हे के लिए चाय और बिस्कुट भेजती थी। परिवार को इस बारे में पता था, लेकिन किसी ने कुछ नहीं कहा। लोगों को उससे कोई परेशानी नहीं थी। कर्बा कालेकर बालिग था। वह एक लड़की की जिंदगी की कीमत जानता था। एक दिन, वह अचानक कोल्हापुर आया। दोपहर का समय था। चंद्री और संपत घर में दरवाजा बंद करके बैठे थे। कर्बा ने दरवाजा खटखटाया। अंदर से संपत की आवाज आई... "कौन है? क्या तुमने उसे दूल्हे को न छोड़ने के लिए कहा था या नहीं? कौन है?"

"तुम्हारे बाप, तुम एक बदमाश हो, गृहस्थ हो, और बेशर्मी से उस बदमाश को घर में ला रहे हो? बाहर आओ, मैं तुम दोनों को कुदाल से पीटूँगा।"

इतने बड़े पुलिस विभाग में सेवानिवृत्त पुलिस अधिकारी होने के बावजूद, उनमें दरवाजा खोलने की हिम्मत तक नहीं थी! करबा की चीखों ने सभी पड़ोसियों को इकट्ठा कर दिया और सभी दरवाजे पर खड़े होकर यह देखने लगे कि आगे क्या

होगा। तभी लक्ष्मीपुरी से एक पुलिस वैन आ गई। संपत ने वरुण के माध्यम से कंट्रोल रूम को फोन किया था। पुलिस अधिकारी के आते ही दरवाजे के सामने भीड़ छंट गई। फिर पुलिस अधिकारी ऊपर गए। तभी उन्होंने देखा... साहब के पिता हाथ में सूती चप्पल लिए दरवाजे के सामने खड़े थे।

फौजदार को देखते ही कर्बा बोला, "क्या आप साइबा को बचाने आए हैं, साहब? अगर आपको कोई शक है तो वापस चले जाइए..." कर्बा फौजदार के सामने दरवाजे पर लगातार दस्तक देता रहा। वह उसे लगातार गालियां देता रहा। "तुम शराबी का हाथ पकड़कर भागे, तुम अपराधी हो, तुमने अपनी पत्नी का बलात्कार किया है और तुम हर रोज एक वेश्या को अपने घर लाते हो, कैप्टन संपतराव कालेकर तुम्हें कायर कहते हैं! आओ फौजदार, क्या तुम इस असली बदमाश को सलाम करने आए हो? अगर तुम्हें कोई शक है तो वापस चले जाइए!" फौजदार के पास जवाब देने के लिए कोई शब्द नहीं थे।

०-०-०

31. रामजय की माँ

पूल लेन में खेल का मौसम कब शुरू होगा, इसका अंदाज़ा लगाना नामुमकिन था। कभी एल्युमिनियम के बटनों से खेलते, कभी गेंदों से, और कभी मुस्कुराते चेहरों से! "हसुक्य" का मतलब है अशोक के पेड़ के बीज! अशोक के फल पककर बैंगनी फली बन जाते हैं और नीचे गिर जाते हैं। जब उनके छिलके हटा दिए जाते हैं, तो उनमें हल्के सुनहरे चमकदार बीज होते हैं। उन बीजों को इकट्ठा करने के लिए लड़कों को टाउन हॉल जाना पड़ता था। वहाँ बड़े-बड़े अशोक के पेड़ थे। हम अपने थैले भर लेते और "हसुक्य" लेने आते! खेलते समय, हर दस कदम पर एक "गल"

बनाया जाता था। यह ‘‘गल’’ ज़मीन में खोदा गया एक छोटा सा गड्ढा होता था, जैसे कोई खाई हो। उस ‘‘गल’’ से एक या डेढ़ फुट की दूरी पर एक रेखा खींची जाती थी। फिर, नापते हुए, हर दस कदम पर एक और रेखा खींची जाती थी। यह ‘‘फज्जा’’ (फोजा) होता था। सबसे पहले, एक ‘‘हसुकी’’ को ‘‘गल’’ की दिशा में फेंका जाता था। जो भी खिलाड़ी खेलेगा, वह हासुकी को गोल के जितना हो सके करीब फेंकने की कोशिश करेगा। जिसकी हासुकी गोल के सबसे करीब पहुंचेगी, उसे पा (पहली बार) खेलने का मौका मिलेगा। यही नियम डू (दूसरी बार), टी (तीसरी बार) और चाउ (चौथी बार) के लिए भी लागू होगा।

उसके बाद, सभी लोग तय किए गए हसुक्य फेंकते थे। कभी दो होते थे, कभी चार। पहला खिलाड़ी उस सेना के सभी हसुक्यों को "गल" की दिशा में फेंकता था। यदि कोई हसुक्य "गल" के पास लगभग डेढ़ फुट की दूरी पर खींची गई रेखा के बाहर गिरता था, तो वह "बल्य" बन जाता था। जो हसुक्य "गल" के अंदर गिरते थे, वे फेंकने वाले के होते थे। लेकिन जो हसुक्य "बल्य" बन जाते थे, उन्हें "वत्य" के साथ रेखा के अंदर फेंकना पड़ता था। ये "वत्य" कभी चपटे पत्थरों के बने होते थे, कभी लोहे के "वॉशर" के। इस तरह गोट्य और बटन जीतने का खेल खेला जाता था। एल्युमीनियम के बटन को "खोपर परम" कहा जाता था। पीतल के बटन की कीमत आठ खोपर पारसा के बटन के बराबर होती थी, और कभी-कभी कोई चांदी का बटन भी ले आता था। इसकी कीमत पचास खोपर पारसा के बटन के बराबर होती थी।

यह एक तरह का जुआ था। लेकिन उस उम्र में (12-13 साल की उम्र में), मुझे पता नहीं था कि यह जुआ है।

खेल दिन में कभी भी शुरू हो जाता था। कभी सुबह 8:30 बजे, कभी दोपहर में, और कभी शाम को। लेकिन सुबह शुरू होने वाला खेल 10-11 बजे तक इतना रंगीन हो जाता था कि घर के लोग हमें स्कूल ले जाने के लिए ढूंढने आ जाते थे। उस समय, "स्कूल" का मतलब "जेल" होता था।

हमारी गली के किसी भी वयस्क को हमारे खेल पसंद नहीं थे। जब कोई खेल में शामिल हो जाता, तो वे खेल रहे व्यक्ति के कान खींचकर उसे घर ले जाते, या कभी-कभी किसी की पीठ पर बैठकर उसे थप्पड़ मारते।

"रामजय" वह लड़का था जो हमारी गली में उस खेल में हमेशा भाग लेता था और सबकी हंसी, बटन और गेंदें जीत लेता था।
पांच फुट लंबा, चपटी नाक और सांवले रंग का रामजय उस खेल में वाकई माहिर था। खेल चाहे कितना भी लंबा चले, वह कुशलता से चालें, बटन और गेंदें स्कोर कर लेता था। रामजय जिस भी खेल में होता, वह सबकी चालें, बटन और गेंदें जीत लेता था। रामजय के पिता छत्रपति शाहू मिल में दिहाड़ी मजदूर थे। वे सुबह उठकर एक बक्सा लेकर मिल जाते और शाम को ही लौटते थे। रामजय की एक बहन और एक भाई था। रामजय की माँ को उनके खाने-पीने और स्कूल भेजने का ख्याल रखना पड़ता था। उसकी माँ, जो चिड़चिड़ी, थोड़ी गोरी, चपटी नाक वाली और माथे पर रुपये के आकार का एक बड़ा सा स्कंक रखती थी, जब रामजय को ढूंढने आती, तो हम सब उसी दिशा में भाग जाते जिस दिशा में वह देखती। हर कोई उस लड़की से डरता था। क्योंकि वह अचानक आती और बिना कुछ बोले, खेल रहे लड़कों के गुप्तांगों को अपने हाथों में पकड़कर मरोड़ देती थी! वह कहा करते थे, "अपनी गेंदों को अपने हाथों में खेलने के लिए दे दो!" क्या तुम स्कूल जाना चाहते हो या किराए पर रहना चाहते हो?
खेल के दौरान, अगर कोई लगातार हार रहा होता, तो वह खेल रोकने के लिए चिल्लाता... "अरे रांदे, भाग जाओ, भाग जाओ, रामजय की माँ यहाँ है, चलो...!" फिर, खेल चाहे कितना भी रोमांचक क्यों न हो, हर कोई उस अजीबोगरीब सजा से डर जाता।
रामजया की माता सरल स्वभाव की थीं, लेकिन बहुत बुद्धिमान और मेहनती थीं। उनका मानना था कि बच्चों को इस उम्र में सीखना चाहिए। उनके पास दो भैंसें थीं। वे गली में एक गाय दुहती थीं। दोपहर में, जब वे गोबर कूट रही होती थीं, तो गोबर के ढेर से रामजया को जोर से पुकारती थीं। उनकी आवाज हम खेलते हुए लड़कों के कानों तक पहुँच जाती थी, जिससे हमारे कान काँप जाते थे। उनकी आवाज से ही हमारी शरारतें बंद हो जाती थीं। अब उस घटना को चालीस से पैंतालीस साल बीत चुके हैं। रामजया का घर, जो पुल के पूर्व की ओर, तलमी के पास हुआ करता था, अब नहीं है। रामजया की माता भी इस दुनिया में नहीं हैं। मैंने रामजया को कभी नहीं

देखा, लेकिन मुझे आज भी उसकी माता याद हैं, जो खेलते हुए शरारती लड़कों पर हुकुम चलाती थीं।

०-०-०

३२. डी. एस. साहेब

शाहू छत्रपति महाराज का दृढ़ मत था कि समाज को शिक्षित किए बिना उसमें स्वास्थ्य, समानता और बंधुत्व का सृजन नहीं हो सकता। अपने राज्य के लोगों को साक्षर और शिक्षित बनाने के लिए महाराज ने कोल्हापुर राज्य में शिक्षा के प्रसार को प्राथमिकता दी। राज्य में सभी जातियों और जनजातियों के बच्चों के लिए छात्रावास भवन बनवाए गए। जैन छात्रावास, सारस्वत छात्रावास, मुस्लिम छात्रावास, पिछड़े वर्गों

के लिए मिस क्लार्क छात्रावास जैसी संस्थाएँ स्थापित की गईं। बहुजन समुदाय के लिए विक्टोरिया मराठा छात्रावास की स्थापना की गई। इसके अलावा, अत्यंत गरीब छात्रों को वस्त्रों से लेकर स्कूल तक सभी सुविधाएँ निःशुल्क प्रदान की गईं।
छत्रपति शाहू महाराज के निधन के बाद, राजाराम महाराज करवीर की गद्दी पर बैठे। राजाराम महाराज ने अपने पिता की शिक्षा नीति का समर्थन किया। उन्होंने कई गरीब और प्रतिभाशाली विद्यार्थियों को महल में शिक्षा के लिए रखा। ये बच्चे महल परिसर में रहते थे और कोल्हापुर शहर के विभिन्न विद्यालयों में पढ़ते थे। महल के बच्चे होने के कारण स्कूलों और कॉलेजों में उनके साथ कोई भेदभाव नहीं किया जाता था। इसके विपरीत, महाराज पर भरोसा करने वाले कुछ लोग समय-समय पर इन बच्चों की शैक्षिक प्रगति की रिपोर्ट महाराज को देते थे। इनमें से कई बच्चे आगे चलकर प्रसिद्ध हुए। महल में रहने वाले ऐसे ही प्रसिद्ध बच्चों में से एक थे ज्ञानदेव संतराम खांडेकर। बी.ए.एल.बी. (ज्ञानदेव संतराम) ने कई वर्षों तक वकालत की और राजनीति में भी सक्रिय भूमिका निभाई। वे लगातार 15 वर्षों तक भारी बहुमत से महाराष्ट्र विधानसभा के लिए चुने गए। जब कोल्हापुर राज्य में प्रजा परिषद का गठन हुआ, तो उसे सीमित स्वायत्तता दी गई और डी.एस. ने उसमें मंत्री का पद भी संभाला। लंबे कद, गोरे रंग, घनी भौहों और असाधारण रूप से चमकीली आँखों वाले डी.एस. को वाक्पटुता का जन्मजात वरदान प्राप्त था। राजनीतिक मुद्दों के गहन अध्येता डी.एस. ने कई बार विधान सभा का प्रतिनिधित्व किया। राज्यों के विलय के बाद, डी.एस. ने सत्ताधारी कांग्रेस पार्टी के विरुद्ध किसान श्रमिक पार्टी का नेतृत्व किया।
कानून की पढ़ाई पूरी करने के बाद मुझे किसी जाने-माने वकील के मार्गदर्शन की ज़रूरत थी। संयोग से मेरे चचेरे भाई की शादी उषा नाम की लड़की से हुई थी। उषा, डी. एस. साहब की छोटी बहन थीं। ज़ाहिर है, मुझे बिना किसी मदद के वकील बनने के लिए उनका मार्गदर्शन मिलने ही वाला था।
मैं नियमित रूप से मंगवार पेठ स्थित बकुल बंगले में उनके घर जाने लगा। उस समय जिले में कोई और वकील नहीं था जो आपराधिक मामलों में उनकी मदद कर सके। उन्हें हत्या, हत्या के प्रयास और गांवों में सत्ता संघर्ष से जुड़े झगड़ों जैसे गंभीर आपराधिक मामले मिलते थे।

इतने महान और प्रसिद्ध वकील होने के बावजूद उन्होंने मेरे साथ बहुत अच्छा व्यवहार किया। उनकी एक खास बात यह थी कि वे मुझे अपने साथ उस मामले के घटनास्थल पर ले जाते थे, जिसकी पैरवी वे कर रहे होते थे। वे सरकारी गवाहों से पूछताछ करते समय उनके बारे में विस्तृत जानकारी इकट्ठा करते थे। जब कोई प्रशिक्षित गवाह पुलिस द्वारा गवाह-कक्ष में लाया जाता था, तो सरकारी पूछताछ के दौरान डी. एस. साहब की नम, तीक्ष्ण निगाहें उस पर टिकी रहती थीं। अगर गवाह फर्जी होता, तो वह डी. एस. साहब की घूरती निगाहों से नज़रें मिलाने की हिम्मत नहीं करता। पूछताछ के तीखे सवालों का सामना करने से पहले ही वह शर्मिंदा हो जाता था।

सरकारी अभियोजक द्वारा झूठे गवाह से पूछताछ पूरी करने और बैठ जाने के बाद, डी. एस. साहब ने अपना काला गाउन पहनकर गवाहों से जिरह करना शुरू कर दिया।

गवाह, जो उनकी तीखी निगाहों के साये में पहले से ही अधमरा हो चुका था, कांपने लगा। उसका मुंह सूख गया। वह बार-बार निगलने लगा। हालांकि वह स्वभाव से बहुत डरपोक था, फिर भी डी. एस. साहब के सवाल का जवाब देने से पहले वह गवाहों के पिंजरे में गिर पड़ता। तब अदालत के सदस्य उठकर अपने कक्ष में चले जाते। अदालत के कर्मचारी उसे पानी पिलाकर होश में लाने की कोशिश करते। चूंकि मैं नया था, इसलिए मुझे इससे डर लगता था। डी. एस. साहब मुझे धीमी आवाज में बताते कि वह एक मनगढ़ंत गवाह है और उसे अपराध की कोई जानकारी नहीं है। वह अभियोजक और पुलिस के दबाव में आकर झूठी गवाही देने के लिए ही यहां आया है।

कुछ प्रयास के बाद गवाह को होश आया और डी.एस. साहब ने उससे दोबारा पूछताछ की।

"देखो, पांडु पाटिल, डरो मत। मुझे ठीक-ठीक बताओ कि क्या हुआ था, झूठ मत बोलो।"

साक्षी ने हाथ जोड़कर कहा,

"सर, मुझे समझ नहीं आया कि मां का क्या मतलब था। उन्होंने मुझे यह नहीं समझाया कि पुलिस ने मुझे क्या सिखाया था।"

बस यही बात थी। यही कारण था कि सरकार का मामला कमजोर पड़ रहा था। जब भी कोई झूठ बोलने पर अड़ा गवाह कटघरे में आता, तो डी.एस. साहब बिना सच्चाई जाने ही उसकी विश्वसनीयता पर सवाल उठा देते। पेशेवर गवाहों का एक वर्ग होता है जो बार-बार अदालत में गवाही देने आते हैं। डी.एस. साहब उनके बारे में विस्तृत जानकारी रखते थे। डी.एस. साहब अदालत के ध्यान में निर्विवाद रूप से यह बात लाते थे कि ऐसे गवाह को सच्चाई का जरा भी अंदाजा नहीं होता।

डी.एस. साहब में असाधारण अवलोकन क्षमता थी। अगर कोई न्यायाधीश आरोपी के पक्ष में झुकाव दिखाने लगता, तो मैं तुरंत डी.एस. साहब से कहता, "महोदय, मामला ज़रूर सुलझ जाएगा।" न्यायाधीश को आरोपी के प्रति सहानुभूति प्रतीत होती थी।

इस पर साहब ने मुझसे कहा, "अदालत की कार्यवाही समाप्त होने के बाद हम इस मुद्दे पर बात करेंगे।"

साहब के पास हरे रंग की बेबी फोर्ड कार थी। वो खुद गाड़ी नहीं चलाते थे। उनका ड्राइवर पाटिल नाम का एक लंबा, काले बालों वाला, बड़ी नाक वाला आदमी था। उस दिन मैं कार में साहब के बगल वाली पिछली सीट पर बैठा था। जब कार स्टार्ट हुई, तो साहब ने मुझसे कहा, "बाबा, आप अभी जवान हैं। इंसानी फितरत समझने में आपको कई साल लगेंगे। आज वो जज आरोपी के प्रति हमदर्दी जताने का नाटक कर रहा था। इसलिए आपने मुझसे कहा था कि मामला ज़रूर सुलझ जाएगा। लेकिन आप नहीं जानते। वो जज बहुत चालाक है। वो कहता कुछ है और करता कुछ और है!"

साहब की भविष्यवाणी सही साबित हुई। न्यायाधीश ने फैसला सुनाया कि सरकार का अपराध सिद्ध हो गया है और आरोपी को आजीवन कारावास की सजा सुनाई, लेकिन डी. एस. साहब ने उच्च न्यायालय में अपील की और आश्चर्यजनक रूप से उन्हें इस मामले में बरी कर दिया गया।

डी. एस. साहब कोल्हापुर में 25-30 वर्षों तक वकालत करते रहे। उनका कोई समकक्ष नहीं था, लेकिन इतने लोकप्रिय और सफल व्यक्ति होने के कारण उनके कई सहकर्मी उनसे ईर्ष्या करते थे। डी. एस. साहब हमेशा यह अफवाह फैलाते थे कि वे सरकारी गवाहों को फितूर करते हैं, लेकिन मैंने साहब को चार-पांच वर्षों तक लगातार करीब से देखा है। उन्होंने कभी भी किसी सरकारी गवाह को फितूर करने की कोशिश नहीं की।

उससे पहले, उन्होंने मुझे एक अनमोल सलाह दी थी। उन्होंने मेरे स्वभाव की बारीकियों, मेरे संवेदनशील, भावुक मन को पहचाना और मुझसे कहा, “तुम रचनात्मक हो। तुम्हें साहित्य से प्रेम है और उसका ज्ञान भी है। तुम इस क्षेत्र में नाम कमाओगे, लेकिन कभी वकील बनने के जाल में मत फँसना!” मैंने उनकी सलाह मानी। साहब अब हमारे बीच नहीं हैं, लेकिन उनकी यादें मुझे आज भी याद हैं, वो घटना जब उन्होंने अदालत में झूठे गवाहों के मामले में बवाल मचा दिया था। उनकी सलाह पर मैंने थोड़ा-बहुत लेखन भी किया। मैंने कभी वकालत नहीं की। शेर की वर्दी और लाल धारीदार सूट पहने घूम रहे डी. एस. साहब अब कभी नज़र नहीं आएंगे, लेकिन जब भी मैं अदालत जाता हूँ, डी. एस. साहब मेरी आँखों के सामने खड़े होते हैं। उनकी याद आते ही मेरा गला भर आता है।

०-०-०

33. यह मैं नहीं हूँ।

लगभग 11:30 बजे। खाना खाने के बाद मैं बाहर जाने ही वाला था कि दरवाज़े की घंटी बजी। मैंने एक हाथ में कार की चाबी पकड़ी और दूसरे हाथ से दरवाज़ा खोला। मेरे सामने लगभग बत्तीस या तैंतीस साल का एक युवक खड़ा था। उसने मुझे बिना टोपी के एक वरिष्ठ पुलिस अधिकारी की तरह अभिवादन किया। उसके बाएं हाथ में एक बड़ा सा कपड़े का थैला था। मैं तुरंत समझ गया कि यह कोई पुलिस कांस्टेबल होगा और मेरे नाम से मिलते-जुलते नाम वाले पुलिस प्रमुख कांस्टेबल बाबा कदम के पास जाने के बजाय गलती से मेरे पास आ गया होगा।

आप किसे चाहते हैं?

‘‘बाबा कदम’’

"वह काम क्या था?"

"मैं विभागीय कार्यों के बोझ तले दबा हुआ हूँ। मैं चाहता हूँ कि आप 'नेक्स्ट प्रेंड' के रूप में इस काम को संभालें।"

"देखिए, बाबा कदम, जो पुलिसकर्मियों के मामलों को एक मित्र के रूप में संभालते हैं, वे अलग हैं। मैं पुलिस अभियोजक हूं। मैं विभागीय मामलों को नहीं देखता। आप उस कांस्टेबल बाबा कदम से बात कीजिए!"

वे कहाँ रहते हैं?

वह शिवाजी पेठ में बलभीम बैंक के पास रहता है!

"लेकिन महोदय, कम से कम मेरा मामला तो पढ़ लीजिए, आप जो भी शुल्क चाहें, मैं चुका दूंगा!"

मैंने अपना माथा छुआ और कहा, "महोदय, मैं यह सुनिश्चित करूँगा कि जिसने भी अपराध किया है, चाहे वह पुलिस अधिकारी हो या आम नागरिक, उसे अदालत में सजा मिले। मैं वह बाबा कदम नहीं हूँ जो आप चाहते हैं!"

हार न मानते हुए उन्होंने मुझसे कहा, "लेकिन पुलिस विभाग में आपकी बहुत अच्छी प्रतिष्ठा है। कई लोगों ने मुझे बताया है कि आप मुसीबत में फंसे पुलिस अधिकारियों का भी अच्छे से मार्गदर्शन करते हैं।" मैंने हाथ में घड़ी देखते हुए कहा,

"आपको अभी जाने की जरूरत नहीं है। मैंने आपको आपके मनचाहे कदमों का पता पहले ही दे दिया है।"
वह सज्जन बहुत परेशान थे और जाते हुए बोले, "मेरी अंतरात्मा कहती है कि मेरा काम आप ही करेंगे।"
"मुझे बताओ, मुझे तुम्हारे मन के देवता को बताना चाहिए कि मैं उसी नाम के एक और बाबा कदम के पास गया था और सदमे में वापस आया।"
मैं गाड़ी में बैठा, स्टार्टर दबाया और निकल गया। उसके बाद डेढ़ से दो साल का समय बीत गया। इसी दौरान मुझे वरिष्ठ पुलिस अभियोजक के पद पर पदोन्नति मिल गई। मुझे जिले में सरकारी अभियोजकों के काम की निगरानी करनी थी, हत्या, डकैती, सेंधमारी जैसे मामलों में जांच दस्तावेजों का अध्ययन करना था, अगर उनमें कोई गलती पाई जाती थी तो जांच अधिकारी को लिखित निर्देश देना था, और जटिल मामलों में डीएसपी से परामर्श के लिए बुलाए जाने पर उनके पास जाना था। श्री श्यामरा ने कोल्हापुर के रेंज डीआईजी के रूप में मेरा स्थान लिया। वे सिख थे, टूटी-फूटी मराठी बोलते थे, लेकिन पढ़ने में बहुत अच्छे नहीं थे।
एक दिन मेरे घर पर एक नीली पुलिस जीप आई। एक सिपाही आया और सलाम करते हुए बोला, “डीआईजी साहब ने मुझे तुरंत बुलाया है।” वरिष्ठ पुलिस अधिकारियों के आदेश हमेशा इसी तरह के तत्काल होते हैं। मैं अपनी काली जैकेट पहने डीआईजी के कार्यालय पहुंचा। मैंने उन्हें विनम्रतापूर्वक प्रणाम किया।
"कृपया बैठ जाइए, श्रीमान कदम।" मैंने चुपके से एक कुर्सी चुराई और उनके सामने वाली कुर्सी पर बैठ गया। घुंघराली दाढ़ी वाले श्यामरासाहेब ने कहा, "देखिए, श्रीमान कदम, विभागीय कार्य से 'बर्खास्त' किए गए एक कांस्टेबल ने मुझसे अपील की है। इस मामले को पूरा पढ़िए, इसका अध्ययन कीजिए और निष्कर्ष लिखिए।"
"जी सर!" दरअसल, विभागीय मामलों में अपील के बाद फैसला स्वयं डीआईजी को देना होता है, लेकिन जब श्यामरासाहेब ने आदेश दिया, तो मुझमें यह कहने का साहस नहीं था कि "यह मेरा काम नहीं है, सर।"
मैं दस्तावेजों की एक मोटी फाइल लेकर घर आया। पूरे दिन में मैंने सिर्फ एक ही अखबार पढ़ा। मामला कुछ इस तरह था - नीलकंठ दत्तात्रेय भोसले, जो एक हेड कांस्टेबल थे, का तबादला लोनांद पुलिस स्टेशन में हो गया था। वे अपनी पत्नी और दो

छोटे बच्चों के साथ पुलिस लाइन में रहते थे। सतारा में रहते हुए उनकी पहली पत्नी गंभीर रूप से बीमार पड़ गईं। पड़ोस में रहने वाली 22 वर्षीय कुसुम भोसले परिवार की मदद करती थीं। संयोगवश, नीलकंठ गांव गए और कुसुम से शादी कर ली, लेकिन यह शादी कानूनी नहीं थी। उन्होंने अपनी पहली पत्नी के जीवित रहते हुए ही दूसरी शादी कर ली थी। उनके कोई बच्चे नहीं थे।

उसके बाद नीलकंठ का तबादला लोनांद पुलिस स्टेशन में हो गया। वह कुसुम के साथ लोनांद पुलिस लाइन में रहने लगा। कुसुम दिखने में बेहद खूबसूरत थी और कुछ हद तक पढ़ी-लिखी भी थी। लाइन की औरतें उससे हमेशा ईर्ष्या करती थीं। नल में पानी भरते समय वे उसे परेशान करती थीं। वे हमेशा उसे नीलकंठ की "नौकरानी" कहकर बुलाती थीं। कुसुम के नीलकंठ से दो बच्चे थे। पहली बेटी सात साल की और दूसरा बेटा पांच साल का था। कुसुम हमेशा नीलकंठ से कहती थी कि हम गांव में एक कमरा किराए पर लेकर वहीं रहेंगे, क्योंकि यहां की औरतें किसी न किसी बात पर मुझसे झगड़ा करती रहती हैं। नीलकंठ किसी न किसी तरह उसे मना लेता था।

एक दिन, जब नीलकंठ ड्यूटी पर थे, पुलिस ने उन्हें कार्यालय बुलाया और उन्हें निलंबित करने का आदेश थमा दिया। नीलकंठ ने कहा, "सर, मैंने कुसुम से शादी की है। मेरे उससे दो बच्चे हैं। थाने की औरतें उसे रखैल कहती हैं, यह झूठ है! वह मेरी पत्नी है।"

पुलिसकर्मी ने कहा, "डीपी में जो कुछ कहना है कहो, मुझे बताने का कोई फायदा नहीं है।"

उनके विभाग के कुछ पुलिसकर्मियों ने भी पुलिस लाइन में “रखेल” लाने के बारे में अपने वरिष्ठों को लिखित शिकायत दी थी। नीलकंठ के खिलाफ विभागीय कार्यवाही शुरू की गई। कार्यवाही कर रहे डीएसपी ने उन्हें “बर्खास्त” करने की सिफारिश की। डीएसपी ने डीएसपी की सिफारिश को मंजूरी दे दी।

नीलकंठ ने उस फैसले के खिलाफ डीआईजी के समक्ष अपील की थी। मैंने उन सभी दस्तावेजों का गहन अध्ययन किया और फैसला लिखा। पुलिस हेड कांस्टेबल नीलकंठ भोसले ने अपनी पहली पत्नी के जीवित रहते हुए कुसुम से विवाह किया। यद्यपि यह विवाह तकनीकी रूप से अवैध है, फिर भी कुसुम पिछले आठ-दस वर्षों से नीलकंठ के साथ निष्ठापूर्वक रह रही है। उसके बच्चों के पिता के रूप में नीलकंठ का

नाम विद्यालय के रिकॉर्ड में दर्ज है। नीलकंठ ने इसमें कोई अनैतिक कार्य नहीं किया है, बल्कि उसके पतियों ने पत्नियों के झगड़े को अनावश्यक रूप से हवा देकर नीलकंठ को परेशान करने के इरादे से यह शरारत रची है। मैंने उस मामले में उच्च न्यायालय का फैसला प्राप्त किया: एक रखैल, जो किसी पुरुष के साथ लंबे समय तक रहती है, उसे विधिवत विवाहित पत्नी का दर्जा प्राप्त होना चाहिए।

श्यामरासाहेब ने मेरे द्वारा दिए गए फैसले पर हस्ताक्षर करते हुए कहा, "आप तो मानवतावादी लगते हैं!"

"नहीं, महोदय, लेकिन मेरी ईमानदारी से राय है कि भोसले निर्दोष हैं।"

'ठीक है, इस फैसले के लिए धन्यवाद।'

उसके बाद नीलकंठ भोसले मेरे घर आए। उन्हें देखते ही उनका चेहरा जाना-पहचाना सा लगा। उन्होंने अपने हाथ में धान मुझे देते हुए कहा, "साहब, मैं इसी उद्देश्य से आपके पास आया था। इस जीवन में मैं आपकी इस कृपा को कैसे भूल सकता हूँ?"

लेकिन उस समय मैंने उनसे यह नहीं कहा, "यह मैं नहीं हूँ।" उनकी आँखों से आंसू बह रहे थे।

०-०-०

34. चुड़ैल

नंदुरबार जिले के "पोहरा" नामक आदिवासी बस्ती में स्थानीय मुखिया (पुलिस अधिकारी) के घर के सामने पचास से साठ आदिवासी जमा हुए थे।

इकट्ठे हुए लोगों में से एक अधेड़ उम्र के, बड़ी मूंछों वाले आदमी ने मुखिया से कहा, "तो फिर आप उस रतुबाई का क्या करेंगे? उसने हमारी बस्ती में चार दूध देने वाली भैंसें मार डालीं। उसने पच्चीस बकरियां भी मार डालीं। मणिबाई की बेटी की शादी दो साल पहले हुई थी, बच्ची सुख-शांति से रह रही थी, लेकिन इस रतुबाई ने उसकी शांति भंग कर दी। उसका पति उसे छोड़कर चला गया! रामा ताडवी और पंचम ताडवी के खेत एक-दूसरे से सटे हुए हैं। आज तक दोनों भाई सुख-शांति से रहते थे।

इस रतुबाई ने भाइयों के बीच झगड़ा करवाया, इस डाकिनी ने पूरे गांव को तबाह कर दिया!"
मुखिया थोड़ा समझदार था। उसने वहां जमा लोगों को संबोधित करते हुए कहा, "आप लोग लिखित आवेदन जमा कीजिए, मैं उसे पुलिस स्टेशन भेज दूंगा। पुलिस आएगी और जांच करेगी, और रतुबाई के खिलाफ उचित कार्रवाई करेगी!"
"उस हत्यारी सैनिक ने फैसला कर लिया है कि हम इस महिला को जीवित नहीं रहने देना चाहते, हम उस डायन को मार डालेंगे और उसे अपनी बस्ती से बाहर निकाल देंगे!"
वहां जमा हुए लोगों ने लिखित आवेदन देने से इनकार कर दिया और सभी लोग कुछ नाराज होकर चले गए।
उसी दिन, लगभग आधी रात को, ऋतुबाई के दरवाजे पर एक बड़ा पत्थर फेंका गया और उनका दरवाजा टूट गया। ऋतुबाई 52 वर्ष की थीं, उम्रदराज महिला नहीं, बल्कि विधवा थीं। उनका एक ही पुत्र था, जो सूरत की एक चक्की में काम करता था। वह हर महीने अपनी माताजी को खर्च के लिए एक सौ-दो सौ रुपये भेजा करता था। इसके अलावा, ऋतुबाई बस्ती के लोगों के खेतों में दिहाड़ी मजदूर के रूप में काम करती थीं। उस बस्ती के लोग मानते थे कि वह जादू-टोना करती हैं, विवाहित लड़कियों के विवाह में बाधा डालती हैं, जादू-टोने से बस्ती के लोगों के जानवरों को मार डालती हैं और भाइयों के बीच झगड़े करवाती हैं। इस तरह की विपत्तियाँ होने लगीं कि बस्ती के लोग देवऋषि के पास जाने लगे! उन लोगों की शिकायतें सुनने के बाद, देवऋषि हाथ में माला लेकर कुछ मंत्र जपते और मानो कुछ समझ आने पर आँखें चौड़ी करके कहते, "मैं समझ गया, मैं समझ गया, मैं निश्चित रूप से समझ गया कि चुड़ैल कौन है!"
“हमें उसका नाम बताओ!” “हमें उसका नाम बताओ!” वहां जमा हुए कई लोगों ने चिल्लाकर कहा।
ऋषि किसी स्त्री का नाम लिए बिना कहते, "यह स्त्री एक आम स्त्री है। (विधवा) इसका एक ही पुत्र है, जो एक बड़े शहर में काम करता है, हर महीने अपनी माँ को पैसे भेजता है, इसके घर के सामने एक विशाल नीम का पेड़ है।" नाम लिए बिना ही

ऋषि उस डायन का वर्णन कर देते। ताडवी बस्ती में रतुबाई के सिवा किसी और स्त्री का इतना सटीक वर्णन नहीं मिलता था।
लोगों ने कहा, “तो चलो उसके लिए इंतज़ाम करते हैं।” इस तरह उस रात सात-आठ लोग रतुबाई के घर में घुस गए। रतुबाई डर गई और रोने लगी। वहाँ जमा हुए लोगों ने उसके कारनामों के बारे में सुना और उनके नेता ने कहा, “अब हम तुम्हें ज़िंदा नहीं रहने देंगे।”
उन लोगों ने निर्दोष रतुबाई को बुरी तरह पीटा। उसने अपने बेटे द्वारा खर्चों के लिए भेजे गए पैसों में से कुछ पैसे बचाए थे। उन्होंने जबरदस्ती वह पैसा छीन लिया। रतुबाई ने हाथ जोड़कर रोते हुए उन लोगों से कहा, "मैंने किसी को कोई हानि नहीं पहुंचाई, मुझे जादू-टोना करने का क्या अधिकार है?"
"मेरी उम्र के हिसाब से यह कुछ ज्यादा ही है, मेरा बेटा मुझे खर्चों के लिए पैसे भेजता है, मुझे जादू-टोना क्यों करना चाहिए! मैं हाथ जोड़कर कहती हूं कि मैं निर्दोष हूं।"
"तुम बदनाम हो, भगवान का ऋषि हमसे झूठ क्यों बोलेगा? जाओ और कुल्हाड़ी ले आओ। चलो इसे अभी काट डालते हैं, नहीं तो हम पुलिस में शिकायत दर्ज करा देंगे!"
उनमें से एक, रामा तडवी, कुल्हाड़ी लेने गया। रतुबाई समझ गई कि जब तक वह अपनी जान नहीं ले लेती, ये लोग नहीं जाएंगे। उसने उन लोगों को धक्का दिया और अंधेरे में भागते हुए सीधे मुखिया के घर की ओर दौड़ पड़ी। उसकी चीखों से मुखिया ने घर का दरवाजा खोल दिया। दरवाजा खुलते ही उसने मुखिया के पैरों में गिरकर कहा,
"दादा, मुझे बचाओ, मुझे डायन समझकर बस्ती के लोगों ने पीटा है। राम्या ताडवी कुल्हाड़ी लेने गई है।"
मुखिया ने सातवीं कक्षा तक पढ़ाई की थी और वह भी ताडवी जाति का था; लेकिन अपनी शिक्षा से उसने यह जान लिया था कि उसका समुदाय बेहद अंधविश्वासी है। उसने रतुबाई को शरण दी। अगली सुबह वह रतुबाई को पुलिस स्टेशन ले गया। रतुबाई को तीन-चार लोगों के नाम याद थे। उस भीड़ में कई लोग थे, लेकिन डर के मारे वह उनके नाम नहीं बता सकी।
पुलिस ने उन चारों लोगों को गिरफ्तार कर लिया जिनके नाम रतुबाई ने बताए थे। रतुबाई की शिकायत दर्ज कर ली गई। अगले दिन, एक नीली पुलिस जीप पोहर

पहुंची। रतुबाई द्वारा बताए गए चारों लोगों को गिरफ्तार कर लिया गया। (भारतीय दंड संहिता) इसके आधार पर मामला दर्ज किया गया।
जैसे ही अंधश्रद्धा निर्मूलन समिति के कार्यकर्ताओं को इस सूचना के बारे में पता चला, वे पोहरा बस्ती गए और रतुबाई की थोड़ी मदद भी की।
महाराष्ट्र के नंदुरबार जिले में अंधविश्वास का बोलबाला है। पिछले कई वर्षों से लोग किसी भी महिला पर डायन या जादूगरनी होने का आरोप लगाकर उसे पीटते हैं, उसके बच्चों को आग में फेंक देते हैं, यदि उसके पास जमीन है तो उसकी फसलें नष्ट कर देते हैं और उसका घर जला देते हैं।
यह प्रथा, प्रथा कहलाने के बजाय, एक अंधविश्वास है जिसका पालन इन आदिवासी क्षेत्रों में सदियों से होता आ रहा है। सामाजिक परिवर्तन से यह अंधविश्वास दूर नहीं होगा।
इस प्रथा को पूरी तरह से खत्म करने के लिए सख्त कानूनों की जरूरत है। जब तक ऐसे कानून नहीं बनते और उन्हें सख्ती से लागू नहीं किया जाता, तब तक रतुबाई जैसी निर्दोष विधवा का जीवन यापन करना मुश्किल होगा। सरदार सरोवर का विरोध करने वाली श्रीमती मेधा पाटकर ने भी अब ऐसे मामलों पर ध्यान देना शुरू कर दिया है। पुनर्वासन संघर्ष समिति (ZJAD) नामक एक संगठन भी सक्रिय है। उस समिति ने सुझाव दिया है कि अगर इस जानलेवा प्रथा को रोकना है, तो इन क्षेत्रों में अनिवार्य शिक्षा शुरू की जानी चाहिए। अब देखते हैं, सत्ता की होड़ में ये राजनेता कब इस प्रथा के खिलाफ कानून बनाने की "समझदारी" दिखाएंगे, जो इन आदिवासी जातियों को कलंकित करती है!
०-०-०

35. शंभूमामा, माल बेचने वाली!

शम्भुमामा, सगुणमावशी के सगे भाई थे। उस समय हममें से किसी को भी यह नहीं पता था कि उनका विवाह हुआ था या उनके बच्चे थे। सगुणमावशी के पति का नाम देवक था। उन्हें भजन और कीर्तन बहुत पसंद थे। उन्होंने भजनों के लिए एक बड़ा मंडप बनवाया था। उस मंडप में ज्ञानेश्वर से लेकर तुकाराम तक के संतों की रंगीन तस्वीरें फ्रेम में लगी हुई थीं। मंडप में कलश और झूमर भी थे। प्रत्येक गुरुवार को रात नौ बजे शुरू होने वाले भजन आधी रात के बाद तक चलते रहते थे।

एक कोने में वीणा, तंबोरा, पेटी, तबला जैसे भजनों के लिए आवश्यक सभी वाद्य यंत्र करीने से रखे हुए थे। मंडप के एक तरफ ज्ञानेश्वर की एक अत्यंत सुंदर और भव्य

मूर्ति स्थापित थी। यहाँ तक कि नास्तिक भी उस सुंदर मूर्ति को देखकर मंत्रमुग्ध हो जाता था। मंडप की प्रतिदिन सफाई की जाती थी और उसे साफ-सुथरा रखा जाता था। शंभूमामा प्रतिदिन ज्ञानेश्वर की मूर्ति को मोगरी के फूलों की माला से सजाती थीं ताकि वह हमेशा जीवंत बनी रहे। वे मंडप से सटे आठ गुणा दस के कमरे में अकेले रहते थे।

शम्भुममा सुबह जल्दी उठकर ठंडे पानी से स्नान करते और मंडप की सफाई करते थे। वे कभी किसी को परेशान नहीं करते थे।

शंभूमामा, जिनकी लंबाई साढ़े पाँच फुट थी, गोल-मटोल शरीर के थे और उनका रंग लाल-भूरा था। वे हमेशा खाकी रंग की पैंट पहनते थे।

शम्भुममा आत्मनिर्भर थे। वे अपनी बहन के घर खाना नहीं खाते थे। वे सुबह चूल्हे पर अपने हाथों से चावल का आटा गूंथते थे! उनका स्वभाव बहुत गुस्सैल था। जब उनके आसपास बच्चे खेलने लगते, तो वे उन्हें खूब डांटते। कभी-कभी बच्चे बुनाई-बुनाई करते हुए मंडप में छिप जाते थे। जब वे उन्हें देख लेते, तो उन्हें गुस्सा आ जाता। वे कहते, "अरे हरामखोरों, क्या तुम्हारे पास कोई काम नहीं है? दिन भर खेलते ही रहते हो! कभी बटनों से, कभी टोपी से, कभी डंडे से! अरे बदमाशो, मंडप के आसपास घूमते समय सावधान रहना!"

दोपहर करीब 3 बजे, शंभूमामा मंडप के बाहर खुली जगह में चूल्हे पर एक बड़ा बर्तन रखते और मालपोहा बनाते। गोल, लेकिन सख्त चावल के दानों को तलने के बाद, वे उन्हें चीनी की चाशनी में डालते। उनकी ऊपरी परत ढीली होती थी, इसलिए चाशनी को निचोड़कर निकाला जाता था। वे खुद ही मालपोहा बेलते थे। लगभग एक सौ-पंद्रह मालपोहा बनाने के बाद, वे उन्हें बेचने के लिए मांस बाजार जाते। कुछ लोग वहाँ बूंदी के लड्डू, चकलेया और पेड़े भी बेचने आते थे। शंभूमामा मालपोहा को एक बड़ी टोकरी में करीने से सजाते, टोकरी को सफेद कपड़े से बांधते और उसे सिर पर रखकर बेचने के लिए ले जाते। उनके मालपोहा की बहुत मांग थी। दिन के अंत तक एक भी मालपोहा नहीं बचता था। फिर, टोकरी में बंधे कपड़े को झटकते हुए, चाचा उठते। शम्भुमामा, जो सुबह से काम कर रहे थे, काफी देर तक एक ही जगह बैठे रहते और उठकर दस से बीस बार "रामकृष्ण-हरि" का जाप करते। फिर वे मटन

मंडी की ओर चल पड़ते। चूंकि वे हमेशा अपना सामान बेचने वहीं आते थे, इसलिए हिंदू और मुस्लिम कसाई उन्हें अच्छी तरह जानते थे।
हर दिन, वह बाज़ार में एक पौंड मटन के लिए लटकी हुई बकरी को देखता, और धीमी गति से बढ़ने वाली बकरी के "मोटे" मटन को प्राथमिकता देता। वह मटन के टुकड़े को एक छोटे से रुमाल में बांधता और सीधे घर चला जाता।
तभी भामा आ गईं। भामा चाचा की दोस्त थीं, उनसे चार-पाँच साल छोटी, विधवा थीं। उन्हें भी बच्चों में कोई रुचि नहीं थी। उस समय किसी को पता नहीं था कि चाचा और भामा कब मिले, कैसे उनका रिश्ता बना। हम बच्चे उन्हें शंभूमामी कहते थे। शंभूमामी भी चाचा की तरह छोटी और गोल-मटोल थीं। उनका रंग भी लाल और गोरा था। धूप में निकलने पर उनके गोल-मटोल गाल पके टमाटर जैसे लगते थे। वह किसी से बात नहीं करती थीं।
जब चाचा बाज़ार से लौटते, तो वह आतीं। फिर चाचा अपने लाए हुए मटन को पकाते। चाची उनके लिए लहसुन और अदरक की थाली बनातीं। चाची चाचा के लिए बंसी गेहूं की कुरकुरी चपातियाँ बनातीं। बाज़ार से लौटने के बाद खाना बनाने का कार्यक्रम समाप्त होने पर, चाचा मंडप से दस कदम दूर एक शराब की दुकान पर जाते और डेढ़ से दो ड्राम (उस समय मिलीलीटर माप उपलब्ध नहीं थे) शराब खरीदते, यानी शुरू से अंत तक उतनी ही शराब, और वापस आकर मंडप के सामने पत्थर पर बैठ जाते। चाची भी खाना बनाने के बाद नीचे आतीं। कोई नहीं समझ पाता कि वह क्या कह रहे हैं। एक दिन, चाचा को बहुत ज़्यादा नशा हो गया। वह नहीं आईं। उस दिन, चाचा का मिजाज खराब हो गया। शराब पीने के बाद जब वह उस पत्थर पर बैठे, तो पूरब की ओर मुँह करके किसी को लगातार गालियाँ देने लगे। वह किसी को गंदी गालियाँ देते, उसे अपनी माँ या बहन कहते। उनके सामने कोई नहीं था, फिर भी वह यह सोचकर गालियाँ बरसाने लगते कि कोई उनके सामने है।
भले ही वह उसकी चाची थी, वह पूरब की ओर मुँह करके उसे लाखों गालियाँ देता, लेकिन दस-पंद्रह मिनट बाद उसकी चाची उठकर उसका हाथ पकड़ती और उसे खाने के लिए कमरे में ले जाती। कमरे में जाने के बाद भी वह उसे चार-पाँच बार डांटता, लेकिन पड़ोस में रहने वाली उसकी बहन सगुना ने उसे चेतावनी दी। सगुना के बेटे-बेटे पढ़े-लिखे थे। उसने उन्हें सलाह दी थी कि आशा की गंदी गालियाँ उन

तक न पहुँचें। एक-दो बार चाची का सब्र टूट गया और उसकी गालियाँ बंद नहीं हुईं। तब सगुना के बेटों ने उसे जबरदस्ती एक स्टूल पर बिठाया और तेमलाई के अटारी में ले जाकर छोड़ दिया।

लेकिन अगली सुबह, स्नान करने, मंडप की सफाई करने और मूर्ति को माला पहनाने के बाद, वह ऐसे घूम रहा था मानो पिछली रात कुछ हुआ ही न हो।

कई वर्षों बाद जब मुझे शंभूमामा का इतिहास समझ आया, और यह पता चला कि वह हर दिन पूर्व दिशा की ओर देखकर मुझे क्यों श्राप देती थी, तो मुझे गहरा सदमा लगा।

शंभू बचपन से ही एक होटल में काम करता था। शाहूपुरी के होटल मालिक को शंभू पर बहुत भरोसा था। जब भी मालिक दो-चार दिन के लिए गाँव जाता, शंभू ही होटल संभालता था। उस होटल का गुलाबजाम उस समय कोल्हापुर में एक खास व्यंजन माना जाता था। गुलाबजाम के साथ चिवड़ा खाए बिना मज़ा नहीं आता था। चाचा ने वहीं गुलाबजाम, मालपोहे, खाजा और बर्फी जैसी मिठाइयाँ बनाना सीखा। मालिक का भरोसा जीतने के बाद चाचा उनके घर ज़्यादा आने-जाने लगे। उस समय चाचा की उम्र लगभग अठारह या बीस साल थी। मालिक की एक ही बेटी थी। एक गोरी, चुलबुली लड़की। चाचा उससे शादी करना चाहते थे, लेकिन मालिक में उन्हें दामाद बनाने के लिए कहने की हिम्मत नहीं थी। एक दिन मालिक ने चाचा को कूल्हे पर लात मारी और बाहर निकाल दिया। उसने कहा, “अरे बदमाश, तेरी क्या है? क्या तू मेरे बेटे को रुला रहा है?”

तो आखिर हुआ क्या? एक शाम जब शंभू होटल मालिक के घर आई, तो मालिक की पत्नी ने उसे और शंभू को आपत्तिजनक हालत में देख लिया। जब पति रात को घर लौटा, तो उसने उसे सारी कहानी बता दी। होटल मालिक को अपने परिवार पर बहुत गर्व था। वह हमेशा अपनी बेटी की शादी किसी न किसी जहांगीरदार परिवार में करवाना चाहता था। फिर, पत्नी से सच सुनकर उसका सिर दर्द से लाल हो गया। उसने तुरंत शंभू को घर से निकाल दिया। उसने बेटी की शादी विट्ठलराव सरकार से कर दी, जो जहांगीरदार परिवार से दूर का रिश्तेदार था। लड़की और विट्ठलराव मुश्किल से एक-डेढ़ साल ही साथ रहे। विट्ठलराव बाहरी व्यक्ति था। उसकी मृत्यु हो गई। ससुराल वाले बहू को उसके गोरे होने के कारण परेशान करने लगे। फिर वह

अपने मायके आ गई। बेटी को असमय विधवा देखकर उसके पिता की भी मृत्यु हो गई।
होटल मालिक की पत्नी का सहारा उसकी बेटी के सिवा कोई नहीं था। होटल भी बंद हो गया। माँ को बहुत पछतावा हुआ। तभी उसे लगा कि अगर उसने शंभू को अपना दामाद बना लिया होता तो बेहतर होता। उसने शंभू से वापस आकर होटल संभालने और बेटी को भी अपना लेने को कहा। लेकिन शंभू के परिवार ने प्रस्ताव ठुकरा दिया। शंभू ने किसी से शादी नहीं की। वह अकेला रहता था और अपनी ज़रूरतों के हिसाब से कमाता था।
कभी-कभार उसके पास आने वाली महिला का नाम भामिनी था! रात में, पूरब की ओर मुख करके, वह लगातार गालियाँ बकता रहता था। वह होटल मालिक और उससे विवाह करने वाले विठ्ठलराव जहागीरदार को कोसता था।
लेकिन मज़े की बात यह है कि जिन दोनों लोगों को मेरे चाचा रोज़ाना डांटते थे, वे उस समय जीवित नहीं थे।
ये हैं शंभूमामा, जो सामान बेचती हैं!
०-०-०

36. “चाय”

मुझे सुबह चाय न पीने वाले लोगों से बिल्कुल भी बनती नहीं है। एक बार, मैं सुबह की चाय पीने के बाद टहलने निकला। एक सज्जन मेरी ही दिशा में चल रहे थे। उनकी उम्र पचास या पचपन वर्ष के आसपास होगी। उन्होंने स्वेटर, पैंट, गले में चॉकलेट रंग का मफलर और सिर पर बंदर टोपी पहन रखी थी। जब मैं उनके पास से गुजर रहा था, तो उन्होंने मुझे धक्का दे दिया।

"क्या, बाबासाहेब, आप यहाँ हर रोज़ टहलने आते हैं?"

नहीं, मुझे हर दिन एक ही दिशा में चलना पसंद नहीं है!

"क्यों?"

मुझे हर दिन एक ही सड़क, एक ही मोड़, एक ही पेड़, एक ही लोगों को उस सड़क पर आते-जाते देखना पसंद नहीं है!

"हम्म

"आपको मेरा व्यवहार पसंद नहीं आया?"
"मेरी पसंद-नापसंद का सवाल ही कहां से उठता है? जिसे जो पसंद है, उसे खुश रहना चाहिए। मैंने तो पिछले छप्पन सालों से चाय को हाथ तक नहीं लगाया है। फिर भी देखिए मेरी सेहत कितनी अच्छी है। लेकिन ज्यादातर लोग तो चाय के आदी हो चुके हैं, है ना?"
"मैं भी उन्हीं में से एक हूं। अगर मुझे सुबह उठते ही चाय न मिले, तो मेरा पूरा दिन खराब हो जाता है।"
"हां, इसे ही लत कहते हैं, व्यक्ति को लत से दूर रहना चाहिए। चाहे चाय हो, सिगरेट हो, शराब हो, कुछ भी हो, यह लत ही है!"
मैं उस सज्जन का चाय-विरोधी उपदेश नहीं सुनना चाहता था। इसलिए मैंने तुरंत अपनी घड़ी देखी और कहा, "मुझे वापस जाना होगा। एक सज्जन मेरे घर आना चाहते हैं।"
मैं दूसरे रास्ते से घर गई। चाय के खिलाफ बोलने वाले वे सज्जन हैरान रह गए। उन्होंने कभी सोचा भी नहीं था कि मैं सुबह चाय पीती हूँ। किस तरह की चाय, उसे बनाने में मैं कितना प्यार डालती हूँ, और उसे पीने के बाद कितना ताजगी भरा एहसास होता है।
दोस्त, मैं रोटी और चपाती को छोड़कर बाकी सभी व्यंजन बना सकता हूँ। इक्कीस साल घर से दूर रहकर काम करने के कारण मुझे खाना बनाना सीखना पड़ा। लेकिन मुझे चाय बनाना बहुत अच्छा लगता है। शादी के बाद से एक अलिखित समझौता है कि या तो मेरी पत्नी या मैं सुबह की चाय बनाऊँगा। मैं पिछले पैंतालीस सालों से आज तक बिना किसी चूक के इस समझौते का पालन कर रहा हूँ।
चाय के कप, सिर्फ कप नहीं। पहले उन्हें इतना साफ धोया जाता था कि डेढ़ से दो कप चाय बन सके। रात भर तिलचट्टे घूमते रहते थे। वे कपों के आसपास मंडराते रहते थे, लेकिन साथ ही उन्हें धोया भी जाता था। फिर वे कंडेंस्ड मिल्क गर्म करते थे। मुझे समझ नहीं आता कि औरतें दूध गर्म करते समय पानी मिलाने के लिए दूध की थैली धोने का बहाना क्यों बनाती हैं। शायद पहले मुझे गौला से पानी मिला हुआ दूध पीने की आदत हो गई थी, लेकिन अब मुझे गर्म करते समय थैली में मौजूद "पाश्चुरीकृत" दूध में पानी मिलाना पसंद नहीं है। चाय में कंडेंस्ड मिल्क मिलाने से

जो रंग आता है, वह पानी मिले दूध से नहीं आता। चाय की पत्तियाँ भी बहुत "चुनी हुई" होती हैं। पहले मैं ग्रीन लेबल लिप्टन चाय लेती थी। यह आज भी बाजार में मिलती है, लेकिन इसका स्वाद पहले जैसा नहीं रहा। अब मैं ताज चाय इस्तेमाल करती हूँ। पानी उबलने पर मैं चाय की पत्तियाँ डालती हूँ और दो मिनट के लिए ढक देती हूँ। फिर मैं उसे छलनी से छानकर कप में डालती हूँ। जितना दूध और चीनी चाहिए था, उतना!
मुझे चाय पीने में शर्म नहीं आती जब तक कि मैं उसे तश्तरी में न डालूँ। जब मैंने हॉलीवुड के एक कैफे में इस तरह चाय पीना शुरू किया, तो मेरी पत्नी ने कहा, "तुम गाँव वालों की तरह तश्तरी में चाय क्यों डालते हो? लोग क्या कहेंगे?"
मैंने कहा, "माँ, चाय तो भारत में बनती है। हम अमेरिकियों को इसे पीना कौन सिखाएगा?" मैंने चाय खत्म करते हुए नाक से आवाज़ निकाली।
लेकिन ज़्यादातर लोगों को चाय बनाना नहीं आता। मैं ऐसे लोगों को जानती हूँ जो चाय को उबालकर कड़वा बना देते हैं। मैंने ऐसे लोगों को भी देखा है जो पानी को चाय समझकर पी जाते हैं, वो भी बेस्वाद। मैं आमतौर पर लोगों के घर चाय नहीं पीती। एक बार, एक गृहिणी ने अलमारी में रखे दिखावे के कप से चाय परोसी। जैसे ही मैंने पहला घूंट लिया, मुझे कप में तिलचट्टों की बदबू आने लगी। फिर, "आपका घर कितना सुंदर है" कहते हुए, वह कप हाथ में लेकर आँगन में गई और उसे तुलसी के गमले में खाली कर दिया। शरबत परोसते समय भी कुछ गृहिणियाँ गिलास धोए बिना ही परोस देती हैं। अगले दिन, मंगेश पडगांवकर की पत्नी यशोदा की भाभी और मैं उनके परिचितों से मिलने गए। वही गृहिणी शरबत लेकर आई। एक घूंट पीने के बाद, मैंने अपनी भाभी की तरफ देखा। वह भी मेरी तरह डॉक्टर थीं, और उन्होंने मुझे अपनी आँखों से ही बता दिया। मेरे शरबत में भी तेज़ बदबू आ रही थी। मैं हॉल से एक गिलास लेकर उठी और उसे बेसिन में डाला क्योंकि मुझे चीनी चाहिए थी। चाय और चाशनी साफ कप या गिलास में ही अच्छे लगते हैं। हालांकि, मेरी भाभी ने अनिच्छा से आधा गिलास लिया। मैं एक वकील को जानती थी। उनका नाम ताम्हांकर था। वे पच्चीस साल तक सिर्फ चाय पीकर ही जीवित रहे। खाना खाने के बाद उन्हें बेचैनी होने लगती थी। चाय उनके लिए अमृत के समान थी। वे दिन में दस से बीस कप चाय पीते थे। वे पूरे पचपन साल जीवित रहे।

यात्रा के दौरान चाय से नफरत करने वालों को मैं अपने चाय के अनुभव कभी नहीं बताऊंगी। क्योंकि कुछ लोग इतने ज्यादा नखरे वाले होते हैं कि उन्हें लगता है कि मैं सच बोल रही हूं।

लेकिन दोस्तों, इन बेचारे लोगों को दिन में एक या दो बार चाय पीने के आनंद के बारे में बताने का क्या फायदा? अगर दिन में एक या दो बार चाय पीने से किसी की उम्र कम हो जाती, तो हमारे ताम्हणकार पचपन सौ साल कैसे जी पाते?

कुछ दिन पहले, रीडर्स डाइजेस्ट पढ़ते समय मुझे चाय के बारे में एक बहुमूल्य जानकारी मिली। दुनिया के लगभग सभी विकसित देशों के वैज्ञानिकों ने चाय पर शोध किया है। इंग्लैंड, फ्रांस, जर्मनी, स्विट्जरलैंड, संयुक्त राज्य अमेरिका, चीन और जापान के वैज्ञानिकों ने चाय पीने वालों के आंकड़े प्रस्तुत किए हैं। उनके द्वारा सिद्ध किए गए तथ्यों को पढ़ने के बाद, चाय के प्रति मेरा प्रेम और भी बढ़ गया। हॉलैंड में किए गए एक अध्ययन में पाया गया कि 2002 में 48,000 चाय प्रेमियों का साक्षात्कार लिया गया था। इसमें पाया गया कि जो लोग प्रतिदिन दो कप चाय पीते हैं, उनमें हृदय रोग होने की संभावना कम होती है। अमेरिका के बोस्टन में भी यह पाया गया कि 44 प्रतिशत चाय प्रेमियों को हृदय रोग नहीं होता है। इतना ही नहीं, चाय के "एंटीऑक्सीडेंट" गुणों ने प्रतिदिन चार कप चाय पीने वालों में कैंसर के कीटाणुओं को प्रवेश करने से रोका। एक अन्य अध्ययन ने सिद्ध किया कि चाय पीने वालों की हड्डियां मजबूत होती जाती हैं।

अगर आपको चाय से कभी नफरत रही है, तो इसे अभी छोड़ दीजिए। अगर आप अपनी उम्र थोड़ी बढ़ाना चाहते हैं, तो चाय प्रेमी बन जाइए!

०-०-०

37. लालासाहेब

गोरे रंग, भव्य माथे और हमेशा मुस्कुराते चेहरे वाले लालासाहेब के व्यक्तित्व के कई पहलू थे। उनमें व्यंग्य की अद्‌भुत समझ थी। कभी-कभी, बोलते समय जब वे क्रोधित हो जाते थे, तो वे अपना बायां हाथ कान पर रखकर इस तरह से रेखा खींचते थे कि सुनने वाला मंत्रमुग्ध हो जाता था। उन्हें अभिनय का शौक था। उनकी एक और विशेषता यह थी कि वे बहुत वाक्पटु थे। मूलतः, उनका स्वभाव विनोदी और निस्वार्थ था। इसी कारण वे कई राजनीतिक नेताओं से परिचित हो गए। स्वर्गीय यशवंतराव चव्हाण, प्रसिद्ध शरद पवार, विलासराव देशमुख, सुशील कुमार शिंदे, इन सभी को उन्होंने कभी न कभी खूब हंसाया था। 'रीडर्स डाइजेस्ट' में एक लेख है जिसका शीर्षक है 'हंसी सबसे अच्छी दवा है'। हमारे लालासाहेब हमेशा गंभीर चेहरों वाले

राजनेताओं को भी ‘हंसी की दवा’ देते थे। यहां तक कि माथे पर आठ का जाल लिए घूमते रहने वाले राजनीतिक नेता भी उनके चुटकुलों पर जोर से हंसते थे।
मैंने लालासाहेब के विद्यार्थी जीवन को करीब से देखा है। लालासाहेब और मैं भक्तिसेवा विद्यापीठ हाई स्कूल में चौथी कक्षा से लेकर पाँचवीं और छठी कक्षा तक मराठी से अंग्रेजी तक एक ही बेंच पर बैठते थे। हम दोनों किसी तरह वार्षिक परीक्षा में ऊपरी कक्षा में पहुँच गए थे। जब भी मुझे लगता कि किसी विषय में मेरे दस-पंद्रह अंक कम पड़ जाएँगे, तो मैं घर पर प्रश्नपत्र जाँचने वाले सर के पास जाकर उनसे कहता, "सर, इस बार मैं आपके विषय में फेल हो जाऊँगा।"
"आपने अब तक किन-किन विषयों में उत्तीर्णता प्राप्त की है?"
"देखिए महोदय, मैं अगले साल कैसे पढ़ाई करूंगा!"
फिर, दयालुता दिखाते हुए, सर मुझे 35 अंक दे देते!
लालासाहेब का उच्च शिक्षा का मार्ग अलग था। लालासाहेब हमारे हाई स्कूल में एक खिलाड़ी के रूप में "सेलिब्रिटी" थे। वे कुश्ती और मल्लखंब के साथ-साथ हॉकी, क्रिकेट और फुटबॉल जैसे विदेशी खेलों में भी निपुण थे।
हर साल मानसून के दौरान पंचगंगे में बाढ़ आती थी। बाढ़ के दौरान, शहर के पहले तैराक माने जाने वाले साहसी युवक पुल से छलांग लगा देते थे। लालासाहेब हर साल इस प्रतियोगिता में भाग लेते थे। उनके इस साहस के कारण प्रधानाध्यापक से लेकर पीटी स्कूल के बकरियों के चरवाहों तक सभी उन्हें जानते थे। खेल भावना के कारण उन्हें हर साल उच्च कक्षाओं में प्रवेश मिल जाता था। अगर प्रधानाध्यापक उन्हें एक साल पास करने से मना कर देते, तो वे निडर होकर कहते, "अगर आप मुझे इस साल पास नहीं करेंगे, तो मैं स्कूल बदल लूंगा। न्यू हाई स्कूल के प्रधानाध्यापक मुझे आपके स्कूल में आने के लिए कह रहे हैं! क्या मैं जाऊं?"
प्रधानाध्यापक अक्सर अधीर रहते थे। लालासाहेब का नाम पास होने वालों की सूची में अक्सर आता था। वह अभिनय में भी अच्छे थे। उन्होंने भालजी की फिल्म "मीठभकर" में नायक की भूमिका बखूबी निभाई थी।
लालासाहेब की अनेक क्षेत्रों में उत्कृष्टता ने उन्हें किसी तरह मैट्रिक परीक्षा की दहलीज तक पहुँचा दिया। उस समय मैट्रिक परीक्षा मुंबई विश्वविद्यालय द्वारा आयोजित की जाती थी। लालासाहेब मैट्रिक उत्तीर्ण नहीं हो सके।

जब मैं अंग्रेजी की तीसरी या चौथी कक्षा में था, तब मेरी पढ़ाई में गिरावट देखकर मेरी माँ ने मुझे तपोवन में दाखिला दिला दिया। उस समय यूनिवर्सिटी हाई स्कूल का तपोवन एक बोर्डिंग स्कूल था। मेरे बाद लालासाहेब भी कुछ दिनों के लिए तपोवन आए। वहाँ हमारा खास समूह फिर से इकट्ठा हुआ।

तपोवन के नियम कुछ सख्त थे। हम सुबह पांच बजे उठते थे। सुबह की रस्मों के बाद हमें नीचे नल के पास ले जाया जाता था। गर्मी हो, मानसून हो, सर्दी हो या कोई भी मौसम हो, हमें ठंडे पानी से नहाना पड़ता था। नहाने के बाद हम प्रार्थना करते थे! परंधम का कमरा पश्चिम दिशा की ओर था। प्रार्थना ठीक साढ़े पांच बजे समाप्त होती थी। फिर, धोती पहनकर हम सामूहिक व्यायाम, पुश-अप्स और सिट-अप्स करते थे! नियमित व्यायाम से लालासाहेब का शरीर बहुत सुगठित और मजबूत दिखता था, लेकिन इन दैनिक कार्यक्रमों को करते समय लालासाहेब का मुंह हमेशा खुला रहता था। दुर्गुले नाम का एक लड़का बहुत दुबला-पतला था। जब वह व्यायाम शुरू करता, तो लालासाहेब उससे कहते, "रंग्या, जल्दी से कुछ व्यायाम करो। कपड़े पहन लो! देखो, ऊपर आकाश में गिद्ध मंडराने लगे हैं!" ऐसा लगता था मानो गिद्ध उसके दुबले शरीर को देखकर उस पर झपटने ही वाले हों।

मैं पचास पुश-अप्स और सौ सिट-अप्स करता था। मैं कहता था, 'पापा, सिट-अप्स थोड़ा धीरे-धीरे कीजिए, कल X X X बैठने नहीं आएगा और अगर आप बैठ गए तो उठना नहीं चाहेंगे।'

उन्हें सबकी बातों को समझने की आदत थी। तपोवन में खाने में मसालेदार खाना नहीं होता था। सिर्फ नमक। खाने का मेनू तय था। अगर पड्डुवाला न मिले तो डोडका सब्ज़ी और रोटी! शाम को कभी-कभार चावल! मुझे उस सादे खाने की बहुत याद आती थी। मैं बैलगाड़ी से गाँव के स्कूल जाता था। मिड-टर्म ब्रेक में लालासाहेब मुझे गुरव गली में अपने महल ले जाते थे। उनकी माँ बहुत स्नेहशील थीं। उनके घर में हमेशा किसी न किसी तरह का मटन होता था। लालासाहेब के पिता, सरदार बालासाहेब यादव, मांसाहारी भोजन के अलावा कुछ नहीं खा सकते थे। कभी हिरण, कभी खरगोश, कभी जंगली सूअर। उनमें से, उनकी माँ शिविर से लाया हुआ अचार वाला मटन बहुत स्वादिष्ट बनाती थीं। उनकी माँ के हाथों का स्वाद ही अलग था। यहाँ तक कि सादी दाल और आलू भी उन्हें स्वादिष्ट लगते थे।

लालासाहब का घर वस्तुतः एक महल था। नानासाहेब, लालासाहेब, बाबासाहेब, मानसिंह, सत्यसिंह, सबसे छोटी संतान, छह बेटे और एक बेटी। गुरव गली में यादव हवेली में हमेशा हलचल रहती थी।
मैंने बचपन में उनसे कहा था, "लालसाहेब के परिवार जितना बड़ा परिवार आपको कहीं और शायद ही देखने को मिले। यह सच है कि यादव परिवार को गोकुल कहा जाता है!"
तभी लालासाहेब ने मुझसे कहा, "आप बिलकुल सही हैं, हम सचमुच श्री कृष्ण के वंशज हैं। नानासाहेब ने हमारे परिवार की वंशावली तैयार की है, और उसमें हमारे परिवार के मूल पुरुष पूर्वज के रूप में श्री कृष्ण का नाम दर्ज है!"
जिम्मेदारी लालासाहेब के स्वभाव की एक विशेष विशेषता है!
बचपन में हमने कभी सोचा भी नहीं था कि लालासाहेब राजनीति में आएंगे। लेकिन लालासाहेब कांग्रेस के सदस्य बने। बाद में, वे भारी बहुमत से विधायक चुने गए। उस समय मैं बारशी में सरकारी वकील था। अखबार में खबर पढ़कर मैंने उन्हें बधाई का टेलीग्राम भेजा।
कोल्हापुर में अक्सर "ऐला, मायला, रांदे" शब्द सुनाई देते हैं। लालासाहेब के विधायक बनने के बाद, मैं एक बार उनसे बारशी से मिलने आया था। उस समय उनसे मिलने आने वालों की भीड़ उमड़ पड़ी थी! कुछ लोग आटा चक्की का लाइसेंस चाहते थे, कुछ लोग चंदगढ़ में प्राथमिक शिक्षक के तबादले को रद्द करवाना चाहते थे, तो कुछ लोग अपने घरेलू मामलों की शिकायतें लेकर आते थे। काम पर आने वाले किसी भी व्यक्ति को लालासाहेब से काम शुरू करने से पहले दर्जनों बार डांट सुननी पड़ती थी। "रांदे, तुम कितने धंधे करोगे? तुमने पीछे गोदाम बनवाया और वो दिवालिया हो गया। फिर तुमने ट्रक खरीदा। धारवाड़ के पास उससे तुम्हारा एक्सीडेंट हो गया। वो छप्पन हज़ार बूढ़े (वे सबके बाप-दादा को बूढ़ा कहते थे) गड्ढे में गिर गए। अब तुम्हें आटा चक्की चलाने का अधिकार मिल गया है। ठीक है। इस धंधे को पूरे मन से करो, बेटे। घर में औरतें और बच्चे चक्की से बचे आटे से पेट भर खाएंगे।"
चंडीगढ़ में अपना तबादला रद्द कराने आए एक प्राथमिक विद्यालय के शिक्षक को ले जाते हुए उन्होंने कहा,

"रांदे, अगर तुम्हारा तबादला हो गया तो क्या होगा? क्या तुम कभी नियमित रूप से स्कूल गए थे? बेटे के लिए यह कैसा तमाशा है! तुम रात को दो-तीन बजे सोते थे, फिर स्कूल में दिन भर जम्हाई लेते रहते थे, जब तक कि तुम्हारा मुंह खुला न रह जाए। इसलिए तुम्हारा तबादला अंडमान कर देना चाहिए था।"
लालासाहेब श्राप तो देते, लेकिन आने वालों के काम को कभी नहीं भूलते।
उस दिन, जब वे तीनों मेरे सामने से आकर चले गए, तो मैंने लालासाहेब से कहा, "लालासाहेब, अब आप जनता द्वारा नियुक्त राजनीतिक नेता बन गए हैं। सबको 'रंदे' कहकर पुकारना आपको शोभा नहीं देता। थोड़ी शिष्ट भाषा का प्रयोग करना सीखिए।"
"अरे, मेरे प्यारे, इन सब अपमानों का क्या मतलब है जो मैं तुम्हें सुनाता हूँ? जब दो दोस्त कोल्हापुर में लंबे समय बाद मिलते हैं, तो पहला दोस्त दूसरे से कहता है, 'क्या हुआ, रांदे, तुमसे कहाँ गलती हो गई?'"
दूसरा उससे कहता है, “रंदेचाया, इतनी देर से कहाँ भटक रहे थे?” तो फिर इसमें क्या मतलब है, पिताजी? जैसे अंग्रेज लोग किसी करीबी दोस्त से मिलने पर “हाउ डू यू डू” कहते हैं, वैसे ही हमारे कोल्हापुर में “रंदेचाया” शब्द का इस्तेमाल होता है। दोस्त या उसकी माँ का अपमान करने का कोई इरादा नहीं है। समझे?”
मैंने अपने माथे को छुआ और कहा, "आप धन्य हैं!"
लालासाहेब कुछ समय तक कोल्हापुर नगर कांग्रेस के अध्यक्ष रहे। तब भी उन्हें यह आभास होता था कि कांग्रेस सदस्यों के बीच कुछ मतभेद और कलह चल रही है। उस दिन कांग्रेस समिति की बैठक ग्यारह बजे होनी थी। सभी सदस्य और पदाधिकारी समय पर पहुँच गए; लेकिन अध्यक्ष लालासाहेब को आने में कुछ समय लग गया। इस बार वे अपने साथ अपना अल्सेशियन कुत्ता भी लाए थे। कुत्ते को बैठक में देखकर सदस्य हंस पड़े। लालासाहेब ने उस समय कुछ नहीं कहा। बैठक शुरू हुई। लालासाहेब बोलने के लिए खड़े हुए। हाथ में माइक पकड़े हुए उन्होंने कहा, "दोस्त, आज मीटिंग में आने में थोड़ी देर हो गई। माफ कीजिएगा। आमतौर पर, जब भी मैं बाहर जाता हूँ, यह बाघ मेरे पीछे नहीं रहता, लेकिन आज सुबह से ही यह ज़ोर-ज़ोर से भौंक रहा है। आज यह मेरे साथ आना चाहता था, इसलिए मैं अनिच्छा से इसे साथ ले आया। दोस्त, कहते हैं कि जब कोई आपदा आने वाली होती है, तो सबसे

पहले कुत्ते को ही पता चलता है। इंसान को कभी पता नहीं चलता कि भूकंप आने वाला है, लेकिन कुत्ते ज़ोर-ज़ोर से भौंकने लगते हैं। मेरे बाघ को ज़रूर आभास हो गया होगा कि आज की मीटिंग में कुछ बुरा होने वाला है।"
बोलते-बोलते लालासाहेब ने कुर्सी के पास बैठे बाघ की ओर देखा और कहा, “क्या, सच है या नहीं?” कुत्ते ने लालासाहेब की बात समझ ली होगी। उसने दो बार “भून, बून” की आवाज़ निकाली और अपना सिर ऊपर की ओर घुमा लिया। सभा में ज़ोरदार हंसी गूंज उठी।
दोस्त, हंसो मत। वह तुम्हारी तरह एहसानफरामोश नहीं है! वह मेरे प्रति बहुत वफादार है। मुझे पता है तुममें से कई लोग असंतुष्ट हैं, लेकिन इस बाघ के व्यवहार पर गौर करो, वह बहुत निस्वार्थ है। उसे गरीबों की मदद करने की आदत नहीं है। मैं उसे आज जानबूझकर अपने साथ लाया हूं ताकि तुम सब उससे कुछ सीख सको! क्या बकवास है?
लालासाहेब ने कुत्ते की ओर देखकर कहा। उनके इस कथन के जवाब में कुत्ते ने फिर भौंका। उस बैठक में किसी भी सदस्य ने लालासाहेब के विरुद्ध बोलने का साहस नहीं किया।
लालासाहेब का नाम सुनते ही उनकी शिकार करने की कला का ज़िक्र ज़रूर होता है! कोल्हापुर में कई शौकिया, नौसिखिए और पेशेवर शिकारी हैं, लेकिन लालासाहेब एक समर्पित शिकारी थे। छोटे शिकार में ऐसे बहुत कम शिकारी होते हैं जो झाड़ियों से अचानक निकलकर भागने वाली जंगली बत्तखों, तीतरों और खरगोशों को सटीक निशाना लगाकर मार सकते हैं। मैंने खुद लालासाहेब को विश्व प्रसिद्ध कंपनी की बारह बोर वाली राइफल "पर्डी" से कई अविस्मरणीय शिकार करते देखा है। उन्होंने कभी किसी राइफल शूटिंग प्रतियोगिता में हिस्सा नहीं लिया था, लेकिन निशानेबाज़ी में उनका कोई मुकाबला नहीं था। शिकार करते समय भी लालासाहेब मज़ाक करते रहते थे। जब कोई शिकारी बार-बार निशाना चूक जाता, तो लालासाहेब कहते, "भीमराव, दिवाली अभी दूर है! दिवाली में चलाने के लिए कुछ कारतूस बचा कर रखो!"
एक साल बीत गया। उस सुबह मैंने अखबार में खबर पढ़ी। पूर्व विधायक श्री लालासाहेब यादव का असमय निधन!

जब हम उनके अंतिम संस्कार में शामिल होने आए, तो गुरव गली की ओर जाने वाली सभी सड़कें बंद थीं! सचमुच हजारों नागरिक उनके अंतिम संस्कार के लिए इकट्ठा हुए थे। किसी व्यक्ति की लोकप्रियता और मानवता को आंकने का एक मापदंड होता है। जिस व्यक्ति के अंतिम संस्कार में इतनी बड़ी संख्या में लोग शामिल हों, उसका जीवन वास्तव में एक आशीर्वाद है!

यह जानकर मेरा हृदय दुखी है कि मेरे मित्र लालासाहेब यादव, जिनकी संगति का मैंने बचपन से आनंद लिया, जो हृदय से शुद्ध थे, बोलने में थोड़े स्पष्टवादी थे, लेकिन सभी के प्रिय थे, अब कभी फिर नहीं मिलेंगे।

०-०-०

39. न्यायिक मजिस्ट्रेट - "सारंग"

मैंने हाल ही में मुंबई बार काउंसिल की परीक्षा दी थी। नतीजे अभी आने बाकी थे। लाइसेंस मिलने के बाद मैंने कोल्हापुर में वकालत करने का फैसला किया था। लाइसेंस मिलते ही मैंने अपना काला कोट पहन लिया। हाथ में ब्रीफकेस लेकर कोई वकील नहीं बन जाता। इसके लिए किसी विशेषज्ञ वकील के मार्गदर्शन की जरूरत

होती है; लेकिन कानून की पढ़ाई करने वाले को आसानी से कोई मार्गदर्शक नहीं मिल जाता। जी हां, अब जब परिवार में पिता या ससुर वकील हैं, तो किसी और के मार्गदर्शन की जरूरत नहीं है। यह सच है! पिता अपने बेटे को एक नामी वकील बनाना चाहेगा, और ससुर चाहेगा कि उसका बेटा जल्द से जल्द अपने पैरों पर खड़ा हो जाए!

न तो मेरे पिता और न ही मेरे ससुर वकील थे। फिर एक सुखद घटना घटी। मेरे चचेरे भाई का विवाह उषा से हुआ। ये उषा उस समय कोल्हापुर के एक प्रसिद्ध आपराधिक वकील डी. एस. खांडेकर की छोटी बहन थीं। उषा की शादी में उन्होंने मुझसे कहा, "बाबा, सनद आने का इंतज़ार मत करो, कल से तुम मेरे साथ अदालत चलोगे!"

मुझे आश्चर्य हुआ। उस समय महाराष्ट्र के जाने-माने आपराधिक वकीलों में डी.एस. खांडेकर का नाम प्रमुख था। वे हत्या, हत्या के प्रयास और डकैती जैसे गंभीर मामलों को संभालते थे। उनका काम करने का तरीका बेहद अनुशासित था। सबसे पहले, वे मामले के कागजात ध्यान से पढ़ते थे, यह नोट करते थे कि जिरह में किस गवाह से क्या सवाल पूछे जाने हैं। वे सरकार द्वारा पूछताछ किए जा रहे गवाहों से विस्तार से पूछताछ करते थे। फिर वे उस जगह का मुआयना करते थे जहां वास्तव में अपराध हुआ था। (मौके का निरीक्षण)

उन्होंने मुझ पर भरोसा किया और मुझे आपराधिक कानून पढ़ाना शुरू कर दिया। अदालत में, जब मुकदमा चल रहा होता था, मैं उनके दाहिने हाथ पर बैठता था। इतने बड़े आपराधिक न्यायालय के वकील का "सहायक" कहलाना मेरे लिए सम्मान की बात थी। खांडेकर साहब की निगाहें बहुत पैनी थीं। वे झूठे और झूठे गवाहों की बकवास को तुरंत बंद कर देते थे। पिछले पैराग्राफ में बताए गए सभी सवाल पूछने के बाद, वे चुपचाप मुझसे पूछते थे, "बाबा, अब कुछ पूछना बाकी है क्या?"

"गवाह का गांव में एक विवाहित महिला से झगड़ा हुआ था, यह सवाल अभी पूछा जाना बाकी है!"

"ओह हां, आपको अच्छी तरह याद है।"

फिर उसने पूछा, "देखो, भर्मु, क्या तुम अपने गाँव के विष्णु सुतारा की पत्नी रुक्मिणी को जानते हो?"

भार्मू, जिसे इस बात का बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि उससे उसके संवेदनशील और निजी मामलों के बारे में यह सवाल पूछा जाएगा, कहने लगा, "ओह, हाँ!"
न्यायाधीश ने गवाह को अविश्वसनीय पाया। परिणामस्वरूप, मामला खारिज कर दिया गया।
एक सुबह, जब मैं बेलबाग में साहब के "बकुल" बंगले में बैठा था, तभी एक शिक्षित सज्जन खांडेकर साहब के पास आए और बोले, "साहब, सारंग जज्जा साहब को चंदगढ़ में भ्रष्टाचार विरोधी विभाग के शुक्ला और के. जी. पाटिल साहब ने गिरफ्तार कर लिया है!"
"निषेध के अधीन!"
मुझे लगा था कि जब मैं खांडेकर साहब को जज्जा के पकड़े जाने की खबर दूंगा तो उन्हें हैरानी होगी, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। खांडेकर साहब ने चश्मा पोंछते हुए कहा, “मुझे ज़रा भी हैरानी नहीं हुई! सारंग साहब को तो कभी न कभी पकड़ा जाना ही था। सौभाग्य से, वो यहाँ की नंबर एक अदालत में नहीं पकड़े गए!”
जज और आरोपी? मुझे ये सब अजीब लगा। जो सज्जन आए थे, वे जज सारंग के रिश्तेदार रहे होंगे। वे खांडेकर साहब से केस संभालने का अनुरोध करने आए थे। साहब के वकील की फीस भी बहुत ज़्यादा थी। उन्होंने कहा, "ये भ्रष्टाचार विरोधी मामला है। ये लोग आसानी से केस नहीं छोड़ते। आपको किसी और को केस सौंपना चाहिए, वरना आपको मेरी फीस नहीं मिलेगी!"
"क्या आप कम से कम संख्या तो बता सकते हैं? फिर हम देखेंगे कि यह बढ़ता है या नहीं?"
"पच्चीस हज़ार!"
साहब द्वारा बताई गई उस रकम को सुनकर मैं भी चौंक गया था। अन्य अधिकांश जाने-माने वकील शराब से जुड़े मामलों में लगभग 1,500 रुपये फीस लेते हैं। साहब ने इस शराब मामले के लिए 25,000 रुपये फीस बताई थी। आए हुए सज्जनों ने इसे स्वीकार कर लिया। वे वकील के पत्र पर सारंग साहब के हस्ताक्षर लेकर आए। इस बीच, सारंग साहब जमानत पर रिहा हो चुके थे, और मामला तथा उसमें शामिल साहब दोनों ही अनिर्णायक थे।

न्यायिक मजिस्ट्रेट ए. आर. सारंग एक बेहद ही संभ्रांत व्यक्तित्व थे। गोरे रंग, हल्की सांवली आंखें, सोने के फ्रेम वाला चश्मा। वे हमेशा रेशमी सूट और टाई पहनते थे। उनकी रफ़ वाणी के कारण न्यायाधीश के रूप में उनके प्रति सम्मान और आदर का भाव था। इसीलिए किसी ने कभी सपने में भी नहीं सोचा होगा कि एक दिन उनके खिलाफ कोई अपराध दर्ज किया जाएगा।

लेकिन उनके खिलाफ मामला दर्ज किया गया और वह भी निषेध अधिनियम की धारा 66 (बी) के तहत! यह निषेध का दौर था। न्यायिक मजिस्ट्रेट न्यायालय संख्या 1 को कोल्हापुर शहर और करवीर तालुका में निषेध अधिनियम के तहत सभी मामलों की सुनवाई का अधिकार था, और सारंग साहब को इसी न्यायालय में नियुक्त किया गया था।

अगर किसी को हाथ से बनी शराब मिलती थी, तो अभियोजन पक्ष, यानी सरकार, यह साबित करने के लिए ज़िम्मेदार थी कि वह "शराब" है। पुलिस द्वारा ज़ब्त की गई "शराब" को "शराब" साबित करने के लिए अदालत में "हाइड्रोलिक टेस्ट" करना पड़ता था। पुलिस द्वारा आरोपी से ज़ब्त की गई शराब को जजों के एक पैनल के सामने बोतल में सील किया जाता था और पैनल के हस्ताक्षर से सील किया जाता था। इस "सील" को खोला जाता था और फिर उसे एक टेस्ट ट्यूब में डाला जाता था। उस पर पारे से भरी एक "डिग्री" डाली जाती थी। वह डिग्री उस तरल में अल्कोहल की मात्रा बताती थी। इस शराब का परीक्षण करने वाला कांस्टेबल प्रशिक्षु था। बाद में उसका बयान दर्ज किया गया कि वह तरल शराब था। आरोपी ने उससे जिरह की। कई वकीलों ने तो उससे जिरह भी नहीं की। उन्होंने कहा कि यह शराब ही होनी चाहिए; लेकिन यह उनके "मुवक्किल" के पास नहीं मिली थी।

फिर सील खोली गई और जांचा हुआ पेय वापस बोतल में डालकर बंद कर दिया गया। हालांकि, तब बोतल पूरी तरह सील नहीं हुई थी। अदालत में जांच की गई बोतलों को अदालत की हिरासत में दे दिया जाता था। बोतलों को न्यायाधीश के कक्ष के एक तरफ कतार में रखा जाता था। मामले का फैसला आने के बाद, उन्हें अदालत के सामने नष्ट कर दिया जाता था। अदालत कक्ष में केवल न्यायाधीश और उनके प्रतिनिधि को ही प्रवेश की अनुमति थी। किसी तीसरे व्यक्ति को वहां प्रवेश करने की अनुमति नहीं थी। यदि कोई वकील अदालत से जमानत जैसा कोई आदेश प्राप्त

करना चाहता था, तो वह न्यायाधीश से पूर्व अनुमति लेकर ही प्रवेश करता था और कहता था, "क्या मैं आपकी ओर से आ सकता हूँ?"
न्यायमूर्ति सारंग जब अदालत आते थे तो अपने साथ कॉफी का थर्मस लेकर आते थे। अवकाश के दौरान वे कक्ष का दरवाजा बंद करके कॉफी पीते थे। जाते समय वे खाली थर्मस अपने साथ ले जाते थे।
सारंग साहब के दरबार में दौलू पदालकर नाम का एक दरबारी क्लर्क था। बड़ी मूंछों और थोड़ी लाल आंखों वाला दौलू पदालकर खिड़की से अपनी तीखी आवाज में वकीलों और गवाहों को पुकारा करता था। उसकी आवाज पुराने महल के चौक में स्थित द्वार तक सुनाई देती थी। उस समय शहर में बस स्टैंड नहीं था, इसलिए पुराने महल में ज्यादा भीड़ नहीं होती थी। राज्यों के विलय के बाद, एक हाथी द्वार के पास अपनी सूंड हिलाता रहता था। हालांकि, बाहर से आने वाले यात्री उसे देखने आते थे।
इस धनी पदालकर को शराब पीने का बहुत शौक था! वह समय-समय पर अदालत कक्ष में जाँची गई शराब की बोतल में से आधी बोतल शराब अपनी बोतल में भरकर घर ले जाता था। उसे पता था कि अदालत में जाँची गई प्रत्येक बोतल में कितनी शराब है। उसने तीन-चार बार अदालत में जाँची गई शराब पी, जिसमें काफी मात्रा में शराब थी, और यहीं से सारंग साहब के शराब पीने की लत शुरू हुई।
वह सारंगसाहेब द्वारा घर से लाए गए कॉफी के खाली थर्मस में शराब भरकर घर ले जाती थी। वह थर्मस में जितनी शराब डालती थी, उतना ही पानी बोतल में डाल देती थी। नतीजतन, दौलू पाडलकर में शराब की कीमत पाँच रुपये हो गई। उसके मन में एक ऐसा संघर्ष शुरू हो गया जिसे जज "वर्सेस" पट्टेवाला जैसे लोग कभी नहीं समझ पाए।
जिला अदालत में सारंग साहब के खिलाफ एक गुमनाम अर्जी दाखिल की गई। उन पर शराब चोरी का कोई खुला आरोप नहीं था। क्योंकि अगर ऐसा खुला आरोप लगाया जाता, तो दौलू पदालकर का नाम सामने आ जाता। इस तरह की दर्जनों अर्जी मिलने के बाद, जिला न्यायाधीश ने किसी भी तरह की परेशानी से बचने के लिए सारंग साहब का तबादला चांदगढ़ अदालत में कर दिया। सारंग साहब ने खुशी-खुशी तबादला स्वीकार कर लिया। क्योंकि चांदगढ़ के आसपास जो शराब जब्त की गई थी, वह शुद्ध काजू की शराब थी! वाह!

सारंग साहब ने चांदगढ़ में एक मकान किराए पर लिया। उन्होंने दो मंजिला मकान में दो कमरे लिए। उन्होंने अपने बच्चों की शिक्षा में बाधा न डालने के लिए अपने "परिवार" को कोल्हापुर में ही रखा।

उस समय शुक्ला और के. जी. पाटिल भ्रष्टाचार-विरोधी ब्यूरो के दो बेहद काबिल पुलिस अधिकारी थे। उन्हें इस बात का सुराग मिल गया था कि सारंग का तबादला अचानक क्यों हुआ। उनके सादे कपड़ों में मौजूद मुखबिरों ने सारंग साहब पर नज़र रखना शुरू कर दिया। यहाँ तक कि केस फाइलों में दर्ज "जाँचे गए" दस्तावेज़ भी गायब होने लगे। अचानक एक शाम सारंग साहब के घर पर छापा मारा गया। अंदर से एक आवाज़ आई, "कौन है?"

"दरवाजा खोलो, तुम्हें पता चल जाएगा कि कौन है!"

शुक्लासाहेब बाहर से बोल रहे थे। सारंग साहब अंदर चुपचाप शराब पी रहे थे। वे तुरंत सतर्क हो गए। उन्होंने तुरंत गिलास और शराब की बोतल मोरी के पास ले जाकर उसमें डाल दी। शुक्लासाहेब को आशंका थी कि साहब कीमती सामान नष्ट कर देंगे, इसलिए उन्होंने मोरी के मुंह के पास बाहर एक बर्तन रख दिया था। वह भी पंच के सामने! साहब को अनिच्छा से दरवाजा खोलना पड़ा। फेनी की गंध कमरे में, मोरी और साहब के मुंह में आ रही थी। बाहर रखे बर्तन में डेढ़ बोतल फेनी जमा हो गई थी। बाद में उसे पंच के सामने रखी बोतल में भर दिया गया। कमरे में फेनी की गंध से भरा थर्मस और खाली गिलास सब जब्त कर लिए गए।

साहब को औपचारिक रूप से गिरफ्तार किया गया और तालुका के चिकित्सा अधिकारी द्वारा उनकी जांच की गई। जांच के लिए उनका रक्त भी लिया गया।

अगले दिन, यह खबर 'पुधारित' के पहले पन्ने पर छपी। 'चांदगढ़ के जज सारंग को शराबबंदी अधिनियम के तहत गिरफ्तार किया गया!'

उस समय संकेत मिल रहे थे कि यह मामला बहुत चर्चित होगा। जाने-माने वकील डी.एस. खांडेकर आरोपी सारंगसाहेब का बचाव करने वाले थे। इसी बीच सारंगसाहेब जमानत पर रिहा हो गए। उन्हें निलंबित कर दिया गया था। हालांकि, उनकी प्रतिष्ठा में कोई कमी नहीं आई। मुंबई भेजे गए उनके रक्त के नमूने की रिपोर्ट में कहा गया, 'रक्त के नमूने में अल्कोहल नहीं पाया गया'। शुक्ला और पाटिल, जिन दोनों न्यायाधीशों को उन्होंने भरोसेमंद माना था, वे 'विरोधी' हो गए और सारंगसाहेब

को शराबबंदी मामले में बरी कर दिया गया। डी.एस. खांडेकर की वकील के रूप में प्रतिष्ठा और भी बढ़ गई। फैसला सुनने के बाद मैंने खांडेकर से कहा, 'सर, यह आपके लिए एक और बड़ी उपलब्धि है।' मुझे देखकर साहब ने शरारती मुस्कान दी।
0-0-0

40. आर. एच. पाटिल फौजदार

उस समय मुझे अभी-अभी वकालत का लाइसेंस मिला था। मैंने बड़े उत्साह से स्टैंड-कॉलर वाला एक काला ऊनी कोट सिला। उसी समय मैंने 80 रुपये में एक चमड़े का ब्रीफकेस भी खरीदा। चूंकि मुझे आपराधिक कानून में रुचि थी, इसलिए मैं नियमित

रूप से न्यायिक मजिस्ट्रेट की अदालत जाता था; लेकिन जैसे-जैसे दिन बीतते गए, वकालत के प्रति मेरा उत्साह कम होने लगा। क्योंकि कोई मुवक्किल मेरे पास नहीं आता था। कोई दूसरा मामला आता, शराब या जुए का, लेकिन अदालत के बड़े दलाल मेरे मुवक्किल को डरा देते। कहते, "नया वकील कानून नहीं समझता। तुम मुफ्त में जेल जाओगे!" फिर जो मुवक्किल आता, वह भी मुझसे दस्तावेज वापस ले जाता। उसने फीस नहीं दी थी!

जब मुझे लग रहा था कि वकील बनकर मैंने कोई बड़ी बेवकूफी कर दी है, तभी लगभग साठ-पैंसठ साल का एक देहाती सज्जन, जिसके सिर पर एक सफेद, गंदा कपड़ा लिपटा हुआ था और कमर पर सिर्फ एक धोती थी, लिवधी पेठ स्थित मेरे घर आया। मैंने उसे ऊपर बुलाया। मेरा दफ्तर वहीं था। मैंने पूछा, "अरे, आपका नाम क्या है?"

"भाई दाउलू पाटिल"

"तुम कहां रहोगी?"

"हल्दी-कंदगांव! मेरा गांव राधानगरी जाने वाली सड़क पर है!"

"अच्छा, मुझे बताओ, तुम्हारा मामला क्या है?"

"क्या बात है, वकील साहब? मुझे एक और महत्वपूर्ण काम करना है!"

"काम कैसा चल रहा है?"

गला साफ करते हुए भाऊ पाटिल ने कहना शुरू किया, "हमारे गांव में दादू गावळी नाम का एक आदमी है, एक 'बरबोदा' गावळी!"

मुझे उनकी सच्ची ग्रामीण गालियों को सुनकर थोड़ा आश्चर्य हुआ!

"अच्छा, अगर वह कुछ ऐसा कर दे जिसे आप उसके लिए बुरा बताते हैं तो क्या होगा?"

"उसकी माँ को उसकी माँ और उसकी बहन के बीच का अंतर नहीं पता!"

मुझे कुछ समझ नहीं आया। इसलिए मैंने भाऊ पाताला से कहा, "क्या आप मुझे बिना डांटे बता सकते हैं कि वह सज्जन वास्तव में क्या करते हैं?"

‘‘इल की पर वकीलसाहेब त्यो रांडचा इप्रित --- हाय!’’

भाऊ पाटिल उसे कोसते हुए उसके बारे में जानकारी दे रहे थे। भाऊ पाटिल की जानकारी में गालियों का मिश्रण सुनकर मैं अवाक रह गया। गालियों को छोड़कर

बाकी सब सच था। दादू लंबा-चौड़ा, सीधी नाक वाला, गोरा, बत्तीस साल का, यौन विकृत मानसिकता वाला व्यक्ति था। वह नदी में नहाने आने वाली महिलाओं के सामने अपनी कमर पर लिपटा तौलिया उतार देता और नंगा हो जाता। बेचारी महिलाएं सिर झुकाकर दूसरे रास्ते से नहाने चली जातीं। कभी-कभी जब वह किसी महिला को सिर और कमर पर पानी से भरा घड़ा लिए आगे से आते देखता, तो दादू उसके चोली को छू लेता! सिर और कमर पर पानी से भरे घड़े होने के कारण महिला विरोध नहीं कर पाती थी। वह कभी यह नहीं सोचता था कि महिला जवान है या बूढ़ी, परिपक्व है या अभी भी कुंवारी है; गांव की महिलाएं उसके इस व्यवहार से सचमुच भयभीत थीं। ग्रामीणों ने उसके इस विकृत व्यवहार के बारे में करवीर तालुका पुलिस स्टेशन में शिकायत दर्ज कराई, जिस पर सैकड़ों या हजारों हस्ताक्षर और अंगूठा ऊपर करके समर्थन जताया गया था।

करवीर तालुका का एक पुलिस कांस्टेबल शिकायत लेकर पूछताछ के लिए हल्दी आया। उसने पांच से पच्चीस लोगों के बयान लिए, लेकिन दादू के खिलाफ शिकायत करने के लिए कोई महिला या पुरुष आगे नहीं आया। कांस्टेबल ने रिपोर्ट दी, “गांव की एक भी महिला ने दादू गावळी के अवैध व्यवहार के बारे में हमें कोई जवाब नहीं दिया है। केवल पुरुषों के बयानों के आधार पर दादू के खिलाफ कोई कार्रवाई नहीं की जा सकती।”

दादू को पता चला कि ग्रामीणों ने उसके खिलाफ करवीर पुलिस स्टेशन में शिकायत दर्ज कराई है। इसके बाद से उसका व्यवहार और भी संदिग्ध हो गया। वह अपनी मां और बहन का इस्तेमाल करते हुए गांव के पुलिस स्टेशन, सरपंच और शिकायत करने वालों को गालियां देने लगा। इतना ही नहीं, जब भी वह किसी अकेली महिला या दो बच्चों के साथ किसी महिला को देखता, तो उसे परेशान करने लगता। वह अपशब्दों का प्रयोग करने लगा।

गांव की औरतें दादू से बहुत डरती थीं। जब वे उसे आते देखतीं, तो भागकर किसी के भी घर में शरण ले लेतीं।

मैंने भाऊ पाताला से पूछा, "क्या उनकी शादी नहीं हुई है?"

"एक वेश्या से शादी करने की तुलना में तीन शादियां बेहतर क्यों होती हैं?"

"तो वे महिलाएं कहां हैं?"

"भाग जाओ!"
"क्यों नहीं!"
"वो बदमाश अपनी पत्नी को घर में ब्लाउज़ न पहनने के लिए कहता था! अब परसों तीसरी पत्नी की माँ क्या करेगी? बाबा आज मेरी बेटी को नंदीव बताकर बुलाने आए थे; तो उस बदमाश ने अपनी सास के साथ ज़बरदस्ती संबंध बना लिया। अब बताओ इस गुस्से में डूबी महिला को क्या करना चाहिए?"
मैंने यौन विकृति से ग्रस्त लोगों के बारे में कई कहानियाँ और उपन्यास पढ़े थे; लेकिन दादू गावळी सबसे भयानक थे। मैंने कहा, "भाऊ पाटिल, आप मुझसे इस दादू के बारे में क्या करने की उम्मीद करते हैं?"
भाई पाटिल अपनी सीट से थोड़ा आगे बढ़े और धीमी आवाज में मुझसे बोले, "करवीर तालुका के फौजदार आर. एच. पाटिल ने मुझे आपका वाल्की नियुक्त किया है!"
"अरे बाप रे! यह बात आपको किसने बताई?"
मुझे आश्चर्य है कि क्या फौजदार साहब हाटकनंगल से आ-जा रहे थे?
आर. एच., यानी रामचंद्र हरि पाटिल, पुलिस विभाग में स्थापना के समय से ही कार्यरत थे। कांस्टेबल के रूप में भर्ती होकर सिपाही के पद तक पदोन्नत हुए आर. एच. पाटिल का पुलिस विभाग में काफी दबदबा था। अपराध की जांच करते समय, वे आरोपी से सच उगलवाने में माहिर थे। दूसरे कमरे में वे एक सिपाही को लाठी से गद्दे पर मारने का आदेश देते, वहीं दूसरा कांस्टेबल उन्हें लाठी से मारता। इस प्रकार, आर. एच. साहब के सामने अपराधी मार के डर से अपना जुर्म कबूल कर लेता था। इसी तरह, जब सत्र न्यायालय में उनके द्वारा जांच किया जा रहा हत्या का मामला जांच के लिए आया, तो वे द्वार के पास गुलमोहर के पेड़ के नीचे कंबल पर बैठकर गवाहों को धमकी देते कि अगर उन्होंने झूठी गवाही दी, तो वे गोलियां निकालकर उन्हें मार देंगे! उनका प्रभावशाली व्यक्तित्व लाल और सुनहरे बालों वाला था, उनकी मूंछें होठों पर मुड़ी हुई थीं, उनका माथा भव्य था!
मैं भाऊ पटला को आर. एच. पाटिल फौजदार के पास ले गया। भाऊ पटला को देखते ही फौजदार साहब ने मुझसे कहा, “यह बदमाश तुम्हारे पास आया है!” दादू गावला के बारे में कुछ भी बताए बिना फौजदार साहब ने मुझसे कहा, “बाबा, इस हल्दी गांव के लोग ‘हिजड़े’, ‘हिजड़े’ हैं! इन्हें चूड़ियां पहनानी चाहिए और माथे पर

कुमकुम लगाना चाहिए! एक आदमी पूरे गांव में उपद्रव मचा रहा है और गांववाले शिकायत लेकर हमारे पास आ गए हैं! अरे, ऐसे में तो कानून अपने हाथ में लेना ही पड़ेगा। वकील साहब! यह सच है या झूठ?”
अडकितिया ने एक सुपारी तोड़ी, उसे अपने मुंह में रखा और पत्ते पर चूना मलते हुए फौजदार साहब भाऊ पाताल से कहा, "मैं करवीर तालुका में हूँ, इसलिए कांटा निकाल दीजिए!"
मैंने भाऊ पाटिल की ओर देखा। भाऊ पाटिल ने हाथ जोड़कर सैनिकों से कहा, "लेकिन मुझे डर लग रहा है!"
"तो डर के मारे मर जाओ, मूर्खों! उसे तुम्हारी दाइयों और बहनों को चिढ़ाने दो!"
फौजदार साहब ने मेरी तरफ देखकर मुस्कुराते हुए कहा, "तो क्या आपको वकील साहब की चिंता नहीं है?"
नहीं, आजकल आपराधिक अदालतों में मुवक्किलों से ज्यादा दलाल हैं!
"इसे तारीफ मत समझो, मैं तुम्हें सिर्फ एक बात बता रहा हूँ, वकालत तुम्हारे बस की बात नहीं है, 2-3 साल बाद पुलिस अभियोक्ता बन जाओ! तुम अपना सारा दिन गवाह को यह बताने में बिताओगे कि आगे क्या करना है!"
फौजदार साहब को विदाई देने के बाद, भाऊ पाटिल और मैं करवीर तालुका परिसर से बाहर आए। मैंने भाऊ पाटिल से कहा, "क्या आपने साहब की बात सुनी? अब काम पर लग जाइए।"
चौथे दिन दादू गावळी कोल्हापुर से दूध पीकर अपने गाँव लौट रहे थे। शाम के सात-साढ़े सात बज रहे थे। अंधेरा छाने लगा था। दादू गावळी की साइकिल से बंधे खुले घड़े बजने लगे। तभी सड़क किनारे झाड़ियों में लाठी-कुल्हाड़ी लिए बैठे गाँव के सात-आठ लड़के आगे आए। उनमें से एक ने साइकिल के पहिये में लाठी फंसाकर दादू को गिरा दिया। बाकी लड़कों ने उन्हें लाठियों से पीटा और एक ने कुल्हाड़ी से उनका दाहिना पैर घुटने से तोड़ दिया। इससे भी उनकी जान नहीं बच पाई; लेकिन उसी समय राधानगरी से आ रहे एक ट्रक की रोशनी सड़क पर पड़ी। दादू को पीटने वाले लड़के अंधेरे में भाग गए। ट्रक चालक ने एक सफाईकर्मी की मदद से घायल दादू को उठाया और इलाज के लिए सीधे कोल्हापुर के सीपीआर अस्पताल ले गया। पुलिस को चिकित्सा-कानूनी मामले के रूप में सूचना दी गई। आर.एच. पाटिल

फौजदार दो कांस्टेबलों के साथ दादू को देखने आए और डॉक्टर से पूछा, "क्या यह बदमाश बच पाएगा?"
"हां, वह निश्चित रूप से जीवित रहेगा। उसे थोड़ा रक्तस्राव हुआ था, लेकिन तत्काल उपचार मिलने के कारण वह बच गया।"
"ठीक है!" पुलिसकर्मी ने झूठी सहानुभूति जताते हुए कहा। पुलिसकर्मी आर.एच. पाटिल ने स्वयं अपराध की जांच की। उन्होंने हत्यारे की पहचान से संबंधित जांच की खामियों को दूर किया। मामला आगे बढ़ा, लेकिन संदेह के आधार पर गिरफ्तार किए गए छह आरोपियों को बरी कर दिया गया।
उसके बाद दादू कई दिनों तक गाँव नहीं आए, लेकिन अचानक एक सुबह करीब नौ-दस बजे वे गाँव के हनुमान मंदिर गए। जिन लड़कों ने उनका दाहिना पैर घुटने से तोड़ा था, वे डरकर भाग गए। दादू ने उनसे कहा, "अब कहाँ जा रहे हो बदमाशो? मैं तुम सबको मारूंगा!"
दादू गावली के एक धनी व्यक्ति थे। उनके पास गाँव में बीस एकड़ बागान भूमि थी। खेत में, मंगलौरी कौला के सामने, दो गुंठा में एक मजबूत पत्थर का मकान था। उस घटना के बाद, वे जयपुर गए और 'जयपुर फुट' नामक एक नकली रबर का पैर लगवा लिया। इसी वजह से वे लंगड़ाकर चलते थे। उनका एक छोटा भाई था। दादू उसके पास गए और बोले, 'पर्स्या, मैं उन लोगों को खत्म करने जा रहा हूँ जिन्होंने मेरा पैर तोड़ा है। मुझे तुम्हारी मदद चाहिए।' पर्स्या खेत में बैठकर खुदाई कर रहा था। उन्होंने कहा, 'मैं तुम्हारी मदद नहीं करूँगा, तुम्हारा पैर तुम्हारे कर्मों का फल है।'
ये शब्द सुनकर दादू ने अपनी पतलून की जेब से रिवाल्वर निकाली और पारसू की पीठ में दो गोलियां मार दीं। दादू गोवा जाते समय अपने साथ बिना लाइसेंस वाली 32 कैलिबर की रिवाल्वर लाया था। पारसू की वहीं मौत हो गई। पुलिस ने दादू को पकड़ लिया। लेकिन गांव में कोई भी दादू के खिलाफ गवाही देने के लिए आगे नहीं आया। दादू को बरी कर दिया गया। भाऊ पाटिल फिर मेरे पास आए और मुझे ये सब बताया और बोले, "वकील साहब, ये औरत मरने वाली नहीं! अब मुझे क्या करना चाहिए?"
मैंने भी उन सभी आश्चर्यजनक लेकिन सत्य तथ्यों को सुनने के बाद कहा, "आर. एच. पाटिल अभी भी करवीर तालुका में हैं। तभी दादू का स्थायी बंदोबस्त किया जाना चाहिए।"

एक महीना बीत गया। एक सुबह अखबार के पहले पन्ने पर खबर छपी। "हल्दी-कंदगांव में ग्रामीणों ने दादू गाव्लिस को उसके घर में जिंदा जला दिया।" उस रात पूरा गांव इकट्ठा हो गया। दादू के घर के चारों ओर दो केरोसिन के डिब्बे और चार बैलगाड़ी चावल फैला दिए गए। ग्रामीणों ने उस पर केरोसिन डालकर दादू के घर में आग लगा दी। लेकिन दादू अभी भी जीवित था। उसने गद्दा फाड़ दिया, उस पर एक घड़ा पानी डाला और भीगे हुए गद्दे को उठाकर बीच में लेट गया। जब ग्रामीणों ने छत जला दी, तो उन्होंने सीढ़ी लगाकर अंदर देखा! "अरे, कमीना अभी भी जिंदा है!" लड़के ने चिल्लाकर कहा। तभी ऊपर से पत्थर बरसने लगे। आधा जला हुआ दादू हाथ जोड़कर अपनी जान की भीख मांगने लगा, लेकिन ग्रामीण गुस्से में थे। वे उसे बाहर घसीटकर लाए और जिंदा जला दिया। फिर उन्होंने उसकी हड्डियों को पत्थर पर पीसकर बारीक कर दिया। ताकि वह नई हड्डियों के साथ वापस आ सके! हड्डियों को नदी में फेंक दिया गया। उस अपराध की भी जांच की गई। भाऊ पाटिल और छियासठ अन्य लोगों पर आरोप लगाए गए। लेकिन भाऊ पाटिल ने अपना बचाव करते हुए कहा, 'मैं उस रात गांव में नहीं था।' आर. एच. पाटिल ने पुलिस से पूछा, 'तुम उस रात कहां थे?' भाऊ पाटिल ने जवाब दिया, ''मैं बाबा कदम वकली के घर पर ठहरा हुआ था।'' भाऊ पाटिल ने पुलिस को बताया कि जब मैं उनके घर पर नहीं था, तब मैं वहां मौजूद था। मैंने भाऊ पाटिल को बचाने के लिए झूठ बोला। आर. एच. पाटिल ने मेरी ओर देखकर हल्की मुस्कान के साथ कहा, ''कभी-कभी समाज के बदमाशों को बर्बाद करने के लिए ऐसे झूठ बोलने पड़ते हैं।''

जब अदालत से न्याय मिलना नामुमकिन हो जाए, तब साहस दिखाना पड़ता है, वकील साहब। आर. एच. पाटिल अब इस दुनिया में नहीं हैं। लेकिन पुलिस विभाग में अपने तीस साल के कार्यकाल में मैंने उनके जैसा साहसी सिपाही कभी नहीं देखा।

०-०-०

41. मुहम्मद की पत्नी ज़रीना

मुंबई में मेरे प्रकाशक मान्या मालवंकर ने मेरे उपन्यासों की रॉयल्टी समय पर नहीं दी। इसके बजाय, वे मुझे गिरगांव से मलाड तक मुंबई में टैक्सी से मेरे अपने खर्चे पर घुमाते थे।

“पिताजी, यहीं रुकिए, मैं पाँच मिनट में पैसे लाता हूँ,” वह कहता और फिर किसी गली में जाकर शराब पीने लगता। आखिरकार, वह इतना ज़्यादा नशे में हो जाता कि अपना संतुलन भी नहीं संभाल पाता। तब मुझे उसे टैक्सी में बिठाकर घर ले जाना पड़ता। दरअसल, मैं उसे अपने उपन्यास प्रकाशन के लिए देना नहीं चाहता था, लेकिन मेरी मुलाकात मोहम्मद बुरानवाला से हुई। आर्थर रोड चौराहे पर उसकी एक छोटी सी लाइब्रेरी थी। उससे पहले वहाँ शाह नाम के एक गुजराती आदमी की रेडीमेड कपड़ों की दुकान थी। शाह की न पत्नी थी, न बच्चे, न ही कोई करीबी रिश्तेदार। वह रेडीमेड कपड़े बेचकर ठीक-ठाक पैसे कमा लेता था। ऐसे सीधे-सादे आदमी के लिए शराब की लत लगना कोई असंभव बात नहीं थी। उस समय मोहम्मद

बुरानवाला अपनी दुकान के सामने फुटपाथ पर फिल्मी गीतों की किताबें बेचा करता था। जब भी शाह को शराब पीने की इच्छा होती, वह मोहम्मद को बता देता।
“मोहम्मदभाई, दुकान की तरफ देखिए। मैं अभी-अभी आया हूँ।” शाह के रेडीमेड कपड़ों पर दाम छपे होते थे। शाह कुछ पीने के लिए बाहर गए और उसी समय एक ग्राहक उनकी दुकान पर आया। दुकान संभाल रहे मोहम्मद ग्राहक को पसंद आए कपड़ों का दाम पढ़कर उन्हें बेच देते थे। बाद में जब शाह लौटते, तो वे ग्राहक को बेचे गए पैसे दे देते थे। वे पैसों के लेन-देन में बहुत ईमानदार और सख़्त थे। शाह मोहम्मद को अपने बेटे की तरह प्यार करते थे। एक दिन शाह को लिवर सिरोसिस हो गया। अस्पताल में उनका निधन हो गया। लेकिन मरने से पहले उन्होंने वसीयत बनाई। उस वसीयत में उन्होंने अपनी दुकान मोहम्मद के नाम कर दी। बीमारी के दौरान मोहम्मद ने शाह की देखभाल की। इसके अलावा, उन्होंने समय-समय पर शाह की दुकान को पूरी ईमानदारी से संभाला। हैरानी की बात यह है कि शाह के निधन के बाद मोहम्मद ने अपना सिर मुंडवा लिया। उन्होंने विधिपूर्वक अपनी रस्में निभाईं। आस-पास के लोग दोनों के बीच की घनिष्ठता से वाकिफ थे।
फिर मोहम्मद ने फुटपाथ से अपनी फिल्मी गीतों की किताबें उठाईं और उन्हें दुकान में ले आया।
लालबाग एक ऐसा इलाका है जहाँ मेहनती महाराष्ट्रियों की बड़ी आबादी रहती है। उनमें से कुछ पढ़े-लिखे लोग बाबूराव अर्नालकर की पुरानी जासूसी कहानियाँ पढ़ते थे। धीरे-धीरे उन्होंने बाबा कदम के उपन्यास पढ़ना शुरू कर दिया। महमंद को इस बात का पता चल गया। उन्होंने मेरे कई उपन्यास खरीदे और एक छोटी सी लाइब्रेरी शुरू की। यह लाइब्रेरी बहुत तेजी से बढ़ने लगी।
मान्या मालवंकर एक बार मुझे मोहम्मद के पुस्तकालय में ले गईं और बोलीं, "बाबासाहेब, बस पांच मिनट रुकिए, मैं यहाँ हूँ!"
मैं अनिच्छा से मोहम्मद की लाइब्रेरी के सामने एक स्टूल पर बैठ गया। शाम को, काम से घर लौट रहे मराठी लोग मोहम्मद के दुर्गा बुक स्टॉल के सामने खड़े होकर मेरी प्रकाशित उपन्यासों जैसे प्रलय, इंसाफ, भालू, दागा, पंच नाकी बोतन की मांग करते थे। मुझे जरा भी अंदाजा नहीं था कि मुंबई में मैं इतना लोकप्रिय हो जाऊंगा। मैंने मोहम्मद से पूछा, "ये लोग दूसरे लेखकों की किताबें क्यों नहीं मांगते?"

मोहम्मद ने मुस्कुराते हुए कहा, "बाबा साहब, आपने अभी-अभी इस महिला का अनुसरण करना शुरू किया है। मुझे आपके दो-तीन उपन्यास प्रकाशित करने दीजिए। देखिए मैं कैसे विज्ञापन करता हूँ और बेहतरीन किताबें प्रकाशित करता हूँ! मैंने पुस्तक प्रकाशन के इस व्यवसाय के बारे में बहुत कुछ सीखा है, मैं अक्सर मैजेस्टिक और बॉम्बे बुक स्टॉल्स से जुड़ा रहता हूँ! अगर आप मुझे अपने उपन्यास प्रकाशित करने देंगे, तो मैं आपको आपसे ज़्यादा भुगतान करूँगा!"
मैंने कहा, "मान्या पुरपेज 15 रुपये फीस के तौर पर देती है। इसीलिए मैं आपको बता रही हूं, लेकिन मुझे उनसे एक भी उपन्यास के लिए समय पर फीस नहीं मिली है!"
"वह बिल्कुल ऐसा ही है। उसने अब तक कई लेखकों को बेवकूफ बनाया है!"
तभी मान्या पेड़ से झूलती हुई आई।
"क्या, बाबासाहेब, देखिए मैंने आपके लिए कितनी लोकप्रियता हासिल कर ली है? क्या, मोहम्मद, यह सच है या नहीं?"
मोहम्मद ने मेरी तरफ देखकर अर्थपूर्ण मुस्कान दी। उसके बाद मोहम्मद बुरानवाला मेरे प्रकाशक बन गए। मेरी तीन सौ पृष्ठों की दो उपन्यासें, अजिंक्य, नजराना और तूफान, दुर्गा प्रकाशन द्वारा प्रकाशित हुईं। इन उपन्यासों का वितरण पूरे महाराष्ट्र में शानदार छपाई, साफ-सुथरी बाइंडिंग और बड़े धूमधाम से हुआ। मेरी उपन्यास का विज्ञापन महाराष्ट्र टाइम्स के पहले पृष्ठ पर छपता था। मोहम्मद छूट योजना की घोषणा करते थे। उपन्यास बाजार में आने से पहले ही छूट योजना में शामिल हो जाता था। फिर मोहम्मद दोबारा विज्ञापन देते थे। माफ कीजिए, नजराना छूट योजना में शामिल हो गया। दूसरा संस्करण डेढ़ महीने में फिर प्रकाशित होगा!
डिस्काउंट स्कीम में मुहम्मद की पांच हजार प्रतियां हटा दी जानी चाहिए!
मुझे पहले से ही कुछ लोकप्रियता प्राप्त थी, लेकिन मोहम्मद के दुर्गा प्रकाशन ने उन्हें पूरे महाराष्ट्र में मशहूर कर दिया। मोहम्मद, जो पहले मेरी पांडुलिपियाँ पढ़ने के लिए ट्रेन से आते थे, अब हवाई जहाज से आने लगे। मुंबई से बेलगाम तक हवाई जहाज से आने के बाद, वे सांब्रिया हवाई अड्डे से टैक्सी से कोल्हापुर आने लगे। हर उपन्यास के साथ वे मेरा मानदेय बढ़ाते जा रहे थे। वे व्यापार में बहुत माहिर थे। जब मैं अपने परिवार के साथ मुंबई जाती थी, तो वे परेल के "शांतिदूत" में मेरे ठहरने का इंतजाम करते थे। शाम को वे मेरे लिए टिफिन में खाना लाते थे। मटन, मछली, बिरयानी! वे

सचमुच मुझे शाही मेहमान की तरह मानते थे। वे पैसे खर्च करने में जरा भी संकोच नहीं करते थे। मैं उनसे कहती थी, "मोहम्मदभाई, आप मुझ पर इतना खर्च करते हैं। मुझे लगता है जैसे मैं आप पर एहसान कर रही हूँ!"
"ऐसा मत सोचिए, बाबासाहेब। आपकी कृपा से ही मैं मुंबई में 'महामद्य' का मोहम्मद शेठ बन पाया हूँ। आपने मुझ पर अनगिनत उपकार किए हैं। अब मेरी बस एक ही इच्छा है!"
"कौन सा?"
"ज़रीना और मैं चाहते हैं कि आप और माई मेरे घर रात के खाने पर आएं। लेकिन मुझे एक बड़ी समस्या है। मैं मिल की चॉल में एक कमरे में रहती हूँ। आसपास झुग्गी-झोपड़ियाँ हैं! मैं एक अच्छे इलाके में दो कमरों का फ्लैट ढूंढ रही हूँ, लेकिन मेरे पास इसके लिए पैसे नहीं हैं!"
"तुम्हें वो पैसा बाद में मिल जाएगा, बस उसे सोच-समझकर खर्च करना।"
"जी हां, जी हां, तुम यही तो बार-बार कहते हो! तो क्यों न तुम दोनों मेरे घर रात के खाने पर आओ?"
"अरे! हम गरीब किसानों की बस्ती में रहते हैं। हम उनके साथ मोटी रोटी और बैंगन का स्टू खाते हैं! मैं अमीर और गरीब के बीच के भेद में विश्वास नहीं करता।"
मोहम्मद का घर सचमुच एक झुग्गी बस्ती में था, लेकिन ज़रीना उसे बहुत साफ-सुथरा रखती थी।
चूल्हे पर चिकन पक रहा था। मोहम्मद जानता था कि मैं मुंबई का मटन नहीं खाता। उसकी पत्नी चिकन करी और तली हुई मछली बना रही थी। मोहम्मद और मैं आगे बैठे थे। ज़रीना खाना बना रही थी और श्रीमती माई उससे बातें कर रही थीं। मोहम्मद की छोटी बेटी को हमारे आने पर नई फ्रॉक पहनाई गई थी। लड़के को भी नई कमीज़ और शॉर्ट्स पहनाए गए थे। दोनों बच्चे, जिनकी उम्र पाँच-छह साल के बीच थी, बड़ों की तरह बैठे थे, मानो किसी के घर आने का इंतज़ार कर रहे हों।
ज़रीना ने खाना बनाया था। मेरी माँ ने सुझाव दिया कि ज़रीना को भी हमारे साथ खाना खाना चाहिए, लेकिन ज़रीना ने कहा, "नहीं, मैं बादाम खाऊँगी।" ज़रीना का व्यवहार, स्वच्छता और समय की पाबंदी सराहनीय थी। हम रात करीब दस बजे होटल पहुँचे। मेरी माँ ने मुझे बताया,

मुझे बिल्कुल भी अंदाजा नहीं था कि मोहम्मद की पत्नी इतनी अच्छी होंगी। आप उन्हें कोल्हापुर क्यों नहीं आमंत्रित करते?

आँखें बंद होने के कारण मुझे तुरंत नींद आ गई। सुबह 7:30 बजे फोन की घंटी बजी। मैं उठा और रिसीवर कान से लगाया। "हैलो, मैं मोहम्मद हूँ। बाबासाहेब, मुझे आपको एक बुरी खबर देनी है। आपके खाना खाने के बाद मेरी पत्नी ज़रीना दूध गर्म करते समय चूल्हे से जल गई। मैं उसे तुरंत रात में पोटदार अस्पताल ले आया। उसका इलाज चल रहा है," और मोहम्मद, जो अब तक ठीक से बोल रहा था, फूट-फूटकर रोने लगा।

मैंने मरीना को सब कुछ बताया। उसे यकीन नहीं हुआ। सुबह करीब आठ बजे हम दोनों पोटदार अस्पताल पहुंचे। उसे विशेष वार्ड में रखा गया था। ज़रीना तड़प रही थी, मानो पानी से बाहर निकली मछली हो। मोहम्मद रो रहा था, अपना सिर हाथों में थामे हुए। ज़रीना 75 प्रतिशत जल चुकी थी। डॉक्टर उसका इलाज कर रहे थे। उसके मन में अभी भी उस स्वादिष्ट खाने की खुशबू थी जो उसने बनाया था, उसे ज़रा भी अंदाज़ा नहीं था कि ज़रीना की मौत इस तरह होगी।

तीन दिन बाद ज़रीना की मृत्यु हो गई और मोहम्मद की मुसीबतें शुरू हो गईं। उसने बच्चों के लिए क्या किया, मुंबई छोड़कर कहाँ गया, या अब क्या कर रहा है, इसकी कोई खबर नहीं है। उस घटना के बाद से, मुझे उन लोगों से ईर्ष्या होती है जो भविष्य में ये या वो करने की कल्पना करते रहते हैं।

०-०-०

४२. दीदी

1975 में, मैं कोल्हापुर जिले में वरिष्ठ पुलिस अभियोजक के रूप में कार्यरत था, लेकिन काम के साथ-साथ मेरे शौक भी जारी रहे। इनमें सबसे प्रमुख शौक लेखन था। दूसरा था चित्रकला और तीसरा था शिकार! इसलिए लोग अक्सर इस बात को लेकर भ्रमित हो जाते हैं कि मैं कब लिखता हूँ, कब चित्रकला करता हूँ और कब शिकार करता हूँ। उन्हें लगता होगा कि मैं यह नौकरी सिर्फ नाम के लिए कर रहा हूँ। लेकिन ऐसा नहीं है। मैंने 30 वर्षों तक पूरी ईमानदारी से सरकारी अभियोजक के रूप में काम किया। मैंने कभी भी अपने काम में कोई कमी नहीं छोड़ी। इसीलिए सभी वरिष्ठ पुलिस अधिकारी मुझसे प्रसन्न थे। वे समय-समय पर मेरे शौकों को प्रोत्साहित करते रहे।

लगभग सन् 1975 में, मुझे एक और शौक लग गया। मैं लकड़ी के बुरादे, प्लास्टर ऑफ पेरिस और फेविकोल का इस्तेमाल करके जानवरों और पक्षियों की छोटी-छोटी प्रतिकृतियाँ बनाने लगा। यही मेरा नया शौक था! मेरा इकलौता बेटा उमेश मुझे ये कलाकृतियाँ बनाते हुए देखता था। एक बार मैंने उससे कहा, “बेटा, तुम कितनी छोटी-छोटी सजावटी वस्तुएँ बनाते हो, है ना?”
उसने कहा, "पिताजी, परीक्षा के बाद, मैं आने वाली छुट्टियों में कुछ करूंगा।"
मैंने कहा, ठीक है, ठीक है। मुझे पता था कि ये सज्जन कुछ नहीं करेंगे। मैं कभी-कभार कोई पेंटिंग बना दूंगी, बस इतना ही!
उनकी परीक्षाएं थीं। छुट्टियां शुरू हो गईं। एक सुबह, वे मेरा स्कूटर लेकर कुम्हारगल्ली गए। उन्होंने एक कुम्हार से गणेश जी की मूर्ति बनाने वाली मिट्टी से भरा एक सीमेंट का ब्लॉक लिया और वापस आ गए।
मैं और श्रीमती माई चाय पीते हुए अखबार पढ़ रहे थे। चिरंजीव और शादु मिट्टी का एक घड़ा लेकर ऊपर गए। जाते समय उन्होंने हम दोनों से कहा, "अबा-माई, आप दोनों मुझे कुछ दिखाने के लिए कह रहे थे, अब मैं आपको दिखाऊंगा, लेकिन आप दोनों में से कोई भी 15 दिनों तक ऊपर नहीं आएगा, ठीक है?"
हम दोनों ने बिल्कुल हां कहा।
अगले दिन से फर्श पर दस्तकें सुनाई देने लगीं। ऐसा लगा जैसे कीचड़ को रौंदा गया हो, लेकिन हम दोनों ने अंदर झाँकने की इच्छा को रोका। पंद्रह दिन बीत चुके थे। सोलहवें दिन, चिरंजीव सुबह जल्दी नीचे आए और हम दोनों से बोले, "पिताजी, अब ऊपर आइए। देखिए मैंने इन पंद्रह दिनों में क्या किया है।" बड़ी उत्सुकता से हम दोनों उनके पीछे ऊपर गए। आखिर दरवाजा खोलते ही उन्हें क्या देखने को मिलेगा? छत्रपति शिवाजी महाराज की आदमकद अर्ध-प्रतिमा एक घूमने वाली मेज पर रखी थी। चिरंजीव ने इससे पहले कभी मिट्टी का बैल नहीं बनाया था। उनके हाथों ने अचानक छत्रपति की वह प्रतिमा कैसे बना दी? मैं और श्रीमती माई एक-दूसरे को हैरानी से देखते रहे, मानो पूछ रहे हों, "यह कैसे हुआ?" चिरंजीव ने इससे पहले कभी मूर्तिकला की कोई शिक्षा नहीं ली थी। हम दोनों अचंभित थे।
उस समय बाबूराव पेंटर के पुत्र रवींद्र मेस्त्री जीवित थे। उन्हें सारी सच्चाई बताने के बाद मैंने कहा, "बाबूराव, मुझे लगता है आपको वह मूर्ति एक बार देखनी चाहिए।"

हाथ में बीड़ी बुझाते हुए बाबूराव ने कहा, "मैं आज ही आऊंगा!"
वे दोपहर करीब चार बजे पहुँचे। बाबूराव ने महाराजा की मूर्ति और उसके चेहरे के भावों को ध्यान से देखते हुए कहा, "बाबा, सच कहूँ तो, यह एक चमत्कार है। अरे, ऐसी मूर्ति तो पच्चीस वर्षों से मूर्तियाँ बनाने वालों के हाथों भी नहीं बन सकती। यह सचमुच एक दैवीय चमत्कार है कि इस छोटे लड़के ने इसे बनाया है। अब एक बात जान लो, यह शादुमती की मूर्ति है। इसका एक रबर का सांचा बना लो। मिट्टी बाद में फट जाती है। एक बार मूर्ति का सांचा बन जाए, तो उससे प्लास्टर ऑफ पेरिस की जितनी चाहें उतनी प्रतियाँ बनाई जा सकती हैं।"
"लेकिन बाबूराव, हम ऐसा नहीं कर पाएंगे। ऐसा रबर का सांचा कौन बनाएगा?"
"क्या आप बाल चव्हाण को जानते हैं? वह इसे करवा देंगे। मैं भी कर देता, लेकिन दो-तीन मूर्तियों के बड़े ऑर्डर आए हैं।"
बाबा राव एक विशिष्ट कलाकार थे। मैंने कई कलाकारों को देखा है। हालांकि वे अन्य कलाकारों से थोड़ी ईर्ष्या करते थे, बाबा राव जन्मजात कलाकार थे। छत्रपति तारा रानी की जो प्रतिमा उन्होंने बनाई है, जिसमें वे अपने पिछले पैरों पर खड़ी होकर घोड़े पर सवार हैं, वह पूरे भारत में कहीं नहीं मिलेगी।
बाल चव्हाण एक बहुमुखी कलाकार हैं। मैंने जयसिंहपुर नगरपालिका से छत्रपति शाहू महाराज की प्रतिमा बनवाने में उनकी थोड़ी मदद की थी। उन्होंने श्री उमेश की मिट्टी की प्रतिमा पर तरल रबर की परत चढ़ाने और सांचा बनाने में पंद्रह दिन लगाए। उन्होंने प्लास्टर ऑफ पेरिस से उसकी पांच-छह प्रतियां भी बनाईं। इसके लिए उन्होंने एक पैसा भी मेहनताना नहीं लिया।
कांसे के रंग की आधी प्रतिमा को हॉल में लाया गया। उसके चारों ओर एक पतला सफेद मलमल का कपड़ा लपेटा गया। यहाँ तक सब कुछ ठीक चल रहा था। चिरंजीव ने कहा, "पिताजी, यदि इस प्रतिमा का अनावरण किसी घर में होना है, तो यह भारत के किसी प्रसिद्ध व्यक्ति द्वारा किया जाना चाहिए।"
भारत में कोई मशहूर हस्ती? किसे मिलेगा ये?
"लता दीदी! मुझे पता है कि वो अक्सर कोल्हापुर आती हैं। उनका पन्हाला में भी एक बंगला है।"

हां, हां, मुझे यह भी पता है, लेकिन यह कैसे संभव है कि आप गुलाब जैसी नाजुक शख्सियत को मूर्ति के उद्घाटन में आमंत्रित कर रहे हैं? वह महिला तो अच्छे लोगों को यह कहकर ही वापस भेज देती है, “हां, हां, मैं आऊंगी, मैं आऊंगी।” किसी भी बात पर ज़ोर मत दीजिए। यह कभी संभव नहीं होगा।
"देखिए, वे वाकई कोशिश करते हैं! वे छत्रपति शिवाजी महाराज को महाराष्ट्र का पूजनीय देवता मानते हैं।"
चिरंजीवा के आग्रह पर, मैं जयप्रभा स्टूडियो गया, यह सोचकर कि वह आई होंगी। मैं भालजी पेंढारकर को जानता था, जो मोटे चश्मे, सफेद पैंट और सफेद कमीज पहने रहते थे। उनकी पत्नी (बहन) लीलाबाई कुछ दिनों से वैराव पेठ स्थित मेरे घर में अतिथि के रूप में रह रही थीं।
जैसे ही मैंने उन्हें प्रणाम किया, बाबा (भालजी) ने मुझसे पूछा, "तुमने क्या काम किया है?"
"लताबाई और उनके परिवार द्वारा बनाई गई मूर्तियों का अनावरण स्वदेशी रूप में किया जाना है। क्या वे आएंगे?"
"उसके बारे में सोचो, वह अब बाहर आ जाएगी!" दीदी सफेद साड़ी पहने और अपने घने बालों को अस्त-व्यस्त जूड़े में बांधे हुए बाहर आईं।
बाबा ने कहा, "लता, बाबा कदम, क्या तुम उन्हें नहीं जानती?"
लताबाई ने विनम्रता से मुस्कुराते हुए मेरी ओर देखा और कहा, "आजकल उन्हें कौन नहीं जानता? वे महाराष्ट्र के हर घर तक पहुंच चुके हैं। हमारे घर में तो हम भारती और उषा के उपन्यास पढ़ते हैं!"
लता दीदी के उस अप्रत्याशित उद्गार से मैं धन्य हो गया। उनके इस कथन पर मैंने कहा, "दीदी, मेरे बेटे ने शिवाजी महाराज की आधी प्रतिमा बनाई है। मैं इसे अपने परिवार के घर में अनावरण करना चाहता हूँ। मेरा बेटा चाहता है कि यह प्रतिमा आपके हाथों से ही बने।"
जब मैं उत्सुकता से उसकी ओर देख रहा था कि वह क्या कहना चाहती है, तो उसने कहा, "मैं कल शाम चार बजे बाबा (भालजी) को अपने साथ लाऊंगी।"
मैं उनकी बातों से इतना खुश हुआ कि मैं कुछ भी व्यक्त नहीं कर सका।

मैं घर आया और दरवाजे से चिल्लाया, "राजन (उमेश), माँ, दीदी कल शाम चार बजे आएंगी!"
मां ने कहा, "क्या मैं कुछ खाने के लिए ले आऊं?"
"बिल्कुल नहीं, वे बाहर का कुछ भी नहीं खाते। पिछले साल ही किसी ने उन्हें बहला-फुसलाकर कुछ खिला दिया था, जिसकी वजह से वे दो महीने तक गा नहीं पाए। घर में उनसे कुछ भी खाने-पीने की उम्मीद मत कीजिए! श्रीमती माई ने कहा, जो भी हो, मैंने कहीं पढ़ा है कि उन्हें मीट कटलेट बहुत पसंद हैं। मैं कल बनाऊंगी। अगर वे खाना चाहें तो खा लें, वरना दूर रहें!"
अगले दिन, लगभग 3:30 बजे, मैं जयप्रभा स्टूडियो गया। ठीक 4:00 बजे, मैं दीदी और भालजी पेढारकर को उनकी अपनी कार में ताराबाई पार्क स्थित उनके घर ले आया।
घर में हम सिर्फ तीन लोग थे, लेकिन उस दिन का माहौल किसी महत्वपूर्ण त्योहार जैसा था।
दीदी आईं। प्रतिमा का अनावरण अनौपचारिक रूप से हुआ। दीदी और भालजी पच्चीस मिनट तक प्रतिमा को ध्यान से देखते रहे। दीदी ने कहा, “उमेश, महाराज की मुद्रा बहुत ही सधी हुई है। मैंने कई जगहों पर महाराज की प्रतिमाएँ देखी हैं, लेकिन वे बहुत खुरदरी थीं और चेहरे के भाव सख्त लगते थे। यहाँ, आपकी प्रतिमा में, महाराज की मुद्रा में हल्की सी मुस्कान दिखती है।”
श्री उमेश ने दीदी के पैर छूकर कहा, "अच्छा हुआ कि आप आ गईं!"
श्रीमती माई उसी इशारे से मुझे यह सुझाव दे रही थीं, "मुझसे पूछो कि क्या मैंने अपने बनाए हुए कटलेट खाए हैं!" आखिरकार, मैंने हिम्मत जुटाकर कहा, "बहन, मुझे पता है कि आप बाहर कुछ भी नहीं खाती-पीतीं, लेकिन मुझे मना करने के बावजूद आपने खिमा के कटलेट बनाए... क्या आपने...?"
"मैं खाऊंगा! पिताजी, मुझे ठीक से पता है कि खाने-पीने की जगह कहाँ है!"
मैरी की जान खतरे में थी। कांच की थाली में गरमागरम कटलेट और टमाटर की चटनी लाई गई। दीदी ने दो कटलेट खाए और एक कप चाय भी पी। लेकिन भालजी ने पानी तक नहीं पिया।

उस घटना को छब्बीस या सत्ताईस साल बीत चुके हैं। लेकिन हम तीनों में से कोई भी दीदी से हुई उस मुलाकात को नहीं भूला है। भला हम कैसे भूल सकते हैं?

1942 में मंगेशकर परिवार कर्ज में डूबा हुआ था। परिवार का एकमात्र सहारा, महान गायक दीनानाथ मंगेशकर, अपनी मृत्युशय्या पर थे। लता को छोटे बच्चों आशा, उषा, मीना और हृदयनाथ की देखभाल करनी पड़ी। बचपन से ही लता को अपने प्यारे पिता के आशीर्वाद से दुनिया और परिवार का बोझ उठाना पड़ा। दीनानाथ के अंतिम शब्द थे, "लता, ये रहा मेरा डफ, वो नोटबुक ले आना। मैंने मंगेशकर की कृपा तुम्हें सौंप दी है। मैं जा रहा हूँ!"

उस समय लता मात्र तेरह वर्ष की थी! उसने अपने प्यारे पिता का छाता खो दिया था, लेकिन उसके बाद गुरु विनायक ने लता की मदद की! लेकिन दुर्भाग्यवश, उनका देहांत भी अल्पकाल में ही हो गया। एक बार फिर लता के जीवन में अंधकार छा गया।

०-०-०

४३. भाई

महाराष्ट्र में एक ही शख्सियत है, वो हैं भाई पी. एल. देशपांडे! भाई इचलकरंजी के साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष चुने गए थे। उस समय साहित्य सम्मेलन में अध्यक्ष पद के लिए चुनाव नहीं होते थे। साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष का चुनाव सर्वसम्मति से होता था। लेकिन उस समय अगर कोई और मुझे साहित्य सम्मेलन का अध्यक्ष बनाने पर अड़ा रहता और चुनाव की नौबत आ जाती, तो भाई के खिलाफ मुद्दा उठाने वाले साहित्यकार का तो काम तमाम हो जाता। नहीं, उनकी जमानत भी जब्त हो जाती। लेकिन एक और संभावना है। जब साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष पद के चुनाव की बात हुई, तो क्या भाई चुनाव लड़ते? बिलकुल नहीं। भाई कहते, क्या आप साहित्य सम्मेलन का मतलब ग्राम पंचायत चुनाव समझते हैं? मुझे तो चुनाव के जरिए मिलने वाला अध्यक्ष पद बिल्कुल नहीं चाहिए! सौभाग्य से उस समय ऐसी कोई स्थिति नहीं आई। उसी वर्ष, अर्थात् 1974 में, भाई को इचलकरंजी के ए. बी. एम. साहित्य सम्मेलन के मानद अध्यक्ष के रूप में नियुक्त किया गया था।

इचलकरंजी महाराष्ट्र का मैनचेस्टर है। एक ऐसा शहर जहाँ एक दिन में करोड़ों रुपये का कारोबार होता है! धागे से बनने वाली जितनी वस्तुएँ होती हैं, उतनी ही वस्तुएँ इचलकरंजी में भी बनती हैं।

इचलकरंजी में मेरी रुचि इसलिए थी क्योंकि मैं उस शहर में आठ साल तक पुलिस अभियोक्ता रहा था। अपने काम के दौरान मेरा संपर्क चोरों, लुटेरों, जुआरियों, शराबियों, पुलिसकर्मियों और सैनिकों से हुआ। साहित्यिक हस्तियों से ज्यादा संपर्क होने का कोई अवसर नहीं था, लेकिन मेरे स्वभाव में एक साहित्यिक पहलू छिपा हुआ था। मैंने अपना पहला उपन्यास, "प्रयाल", इचलकरंजी में काम करते हुए लिखा था। उस समय साहित्यिक जगत में मेरा नाम उतना प्रसिद्ध नहीं था। बाद में स्थिति थोड़ी बदल गई।

मैं अपने परिवार, श्रीमती माई और उमेश के साथ उस साहित्यिक सम्मेलन में शामिल हुई थी। उस समय मुझे यह बिल्कुल भी पता नहीं था कि सम्मेलन में उत्साही नवोदित लेखकों को कोई महत्व नहीं दिया जाता। कहानी सुनाना भी उस कार्यक्रम का हिस्सा था। उस समय, एक स्वयंभू लेखक होने के नाते, मैं भी उस साहित्यिक

सम्मेलन के कहानी सुनाने वाले कार्यक्रम में एक बार भाग लेना चाहती थी, लेकिन आयोजकों ने मेरी ओर ध्यान ही नहीं दिया। मेरे भाई की अध्यक्षता में आयोजित होने वाले कहानी सुनाने वाले कार्यक्रम में भाग लेने की मेरी इच्छा अधूरी ही रह गई।
वह साहित्यिक सम्मेलन बहुत प्रसिद्ध हुआ। क्योंकि महाराष्ट्र के वरिष्ठ नेता वी. यशवंतराव चव्हाण उसमें शामिल होने वाले थे। उनकी उपस्थिति का विरोध हुआ। राजनीतिक नेताओं से साहित्यिक सम्मेलन में न आने का आग्रह किया गया। लेकिन यशवंतराव ने घोषणा की कि वे एक साहित्य प्रेमी के रूप में उपस्थित होना चाहते हैं। उन्होंने कहा, "मैं सत्ता के दिखावे के बिना आऊंगा। मुझे मंच पर कुर्सी नहीं चाहिए, मैं श्रोताओं में बैठूंगा।" फिर भी, स्वयं को श्रेष्ठ और वरिष्ठ समझने वाले साहित्यकारों ने उनकी इच्छा को विफल कर दिया। लेकिन वे यशवंतराव चव्हाण थे। वे एक निष्ठावान देशभक्त थे जिन्होंने ब्रिटिश शासन को चुनौती दी थी। वे इस तरह के विरोध को बर्दाश्त करने वाले नहीं थे!
यशवंतराव पहुंचे और श्रोताओं के बीच बैठ गए। इसके बाद साहित्यिक सम्मेलन सुचारू रूप से आगे बढ़ा।
लेकिन मेरे भाई का साथ न मिलने का अफसोस मुझे लंबे समय तक सताता रहा। एक बार मेरे भाई ने मेरी सराहना की थी। लेकिन एक लेखक के रूप में नहीं। बात कुछ इस तरह है, 1950 में मैं बाबा गजबर के घर चित्रकला सीखने जाता था। बाबा के पुत्र बाल गजबर ने पी. एल. देशपांडे की कहानी पर आधारित एक हास्य फिल्म ''नवरा बायको'' बनाने का फैसला किया। उस फिल्म में (वा.) भाऊसा महागावकर, हंसा वाडकर, दत्तोपंत आंग्रे मुख्य कलाकार थे। उस फिल्म में बाल गजबर ने मुझे नायिका के घर में अग्रिम नौकर की नौकरी दी। बिना किसी पूर्व सूचना के, फिल्म में काम करने का मौका पाकर मैं रोमांचित हो गया। उस समय मैं कॉलेज के दूसरे वर्ष में था, यानी इंटर आर्ट्स में। मैं वह काम उत्साह से कर रहा था। एक बार, लेखक पी. एल. देशपांडे शूटिंग देखने आए। शालिनी सिनेटोन स्टूडियो में हास्य गीत ''मझ्या कोम्बद्यची शान'' की शूटिंग हुई। कैमरा काफी देर तक मुझ पर ही केंद्रित रहा। उस गीत पर मेरे प्रदर्शन को देखकर कई साल पहले मेरे भाई ने मेरी पीठ थपथपाई थी। अब जब मैंने दस-पंद्रह उपन्यास लिख लिए थे, तो मुझे लगा कि मेरे भाई की सराहना

का हाथ मेरी पीठ पर होना चाहिए। इचलकरंजी साहित्य महोत्सव में मेरी यह इच्छा अधूरी रह गई।
उसके बाद मेरी लेखन गति तेज हो गई। एक साल में तीन-चार उपन्यास प्रकाशित होने लगे। चूंकि वे सच्ची घटनाओं पर आधारित थे, इसलिए पाठकों और प्रकाशकों से उन्हें जबरदस्त सराहना मिली।
मैंने "रानीमा" नाम का एक उपन्यास लिखा, जो भारत और अफ्रीका में शिकार का विस्तृत वर्णन है। पांडुलिपि पढ़ने के बाद, प्रकाशक राजीव बर्वे ने मुझसे पूछा, "मैं यह उपन्यास किसे समर्पित करूं?" मैंने उत्तर दिया,
भाई, पी. एल. देशपांडे और सुनीता!
प्रकाशक ने सहमति दे दी। तदनुसार, समर्पण पत्र छपवाया गया। सुनीता ने बहन को मिलने का समय दिया। राजीव बर्वे पहले ही बहन को उपन्यास की एक प्रति दे चुके थे। मैंने स्वयं उन्हें उपन्यास समर्पित करने का निर्णय लिया।
जिन लोगों ने मुझे अपना सहयोग दिया, उनसे प्रशंसा पाने का वह पल आखिरकार आ गया, जिसका मैं वर्षों से इंतज़ार कर रही थी। उपन्यास को अपनी बहन को समर्पित करने के बाद, उसने इसे पढ़ा और मुझे अपने हाथ से लिखा एक पत्र भेजा। उसमें उसने लिखा, "दो साल पहले, मैं अफ्रीका में सफारी पर गई थी। मैं वहाँ एक ट्री टॉप होटल में रुकी थी। मैंने नमक की झील और पानी के कुंड की ओर आते जानवरों की हलचल देखी। अफ्रीका जाए बिना भी, आपने मुझे उसे फिर से देखने का आनंद दिया है। मैंने एक बार फिर आपकी कहानी के जादू का अनुभव किया। लिखते रहिए, मेरी और सुनीता की ओर से आपको ढेर सारी शुभकामनाएँ।"
आ. भाई
मेरी सालों पुरानी ख्वाहिश आखिरकार पूरी हो गई। आखिरकार, मेरा भाई कोल्हापुर आ गया। उस समय वह मेरे घर डिनर पर आता हुआ करता था। मेरी माँ, श्रीमती माई कदम, कोल्हापुरी, राजस्थानी, मुगलई और चीनी खाना बनाने में माहिर हैं! जब मेरे भाई को धारवाड़ के मल्लिकार्जुन मंसूर जाना होता था, तो मुझे पुणे से फोन आता था कि वह दोपहर 12:30 बजे कोल्हापुर आ रहे हैं। मुझे अपनी माँ के हाथ का बना कोल्हापुरी रस्सा खाना है! फोन आते ही हमारे घर में उत्सव जैसा

माहौल हो जाता था। अब कुछ लोग मुझसे पूछते हैं, इतनी लोकप्रियता मिलने के बावजूद आप लेखन से कितना पैसा कमाती हैं?
ऐसे सवाल पूछने वाले लोग बेवकूफ हैं! किसी महिला की उम्र या पुरुष की आमदनी के बारे में कभी नहीं पूछना चाहिए! लेकिन जब मुझसे यह सवाल पूछा जाता है, तो मैं कहती हूँ, "यह मत पूछो कि मैंने अपनी लेखन से कितना पैसा कमाया है, बल्कि यह पूछो कि मराठी साहित्य में मैं कितने महान लेखकों के करीब आई हूँ! मुझे गदिमा, वेंकटेश माडगुलकर, डी. मा. मिरासदार, गंगाधर गडगिल, मंगेश पडगांवकर, विंदा करंदीकर जैसे मराठी साहित्य के प्रसिद्ध लेखकों और कवियों की संगति का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। यह सब मुझे मेरे लेखन के कारण ही मिला है। मेरे लिए पैसा और प्रतिष्ठा का कोई महत्व नहीं है।"
मुझे अपने भाई की संगति बहुत अच्छी लगती थी, लेकिन जब भी मेरा भाई कोल्हापुर आता था, उसके पुराने दोस्त, स्वर्गीय अप्पासाहेब जाधव, कर्नल आनंदराव जाधव, डॉ. वाजे, श्रीमती मीनाताई, बिना इकट्ठा हुए उसके संगीत कार्यक्रम में नहीं आते थे। एक बार, जब शांताबाई शेल्के पर्ल होटल में उतरीं, तो उन्हें पता चला कि मेरा भाई मेरे घर पर है। मुझे उनका फोन आया। उन्होंने पूछा, क्या मैं आ सकती हूँ? मैंने कहा, ज़रूर आइए, क्या आपको मेरी अनुमति चाहिए? मुझे पता ही नहीं चला कि कब हमारे चौक में शांताबाई, मेरे भाई और सुनीता के साथ आधी रात बीत गई।
इन महान लेखकों की तुलना में मैं बहुत युवा लेखक था; लेकिन एक घटना ऐसी घटी कि आचार्य अत्रिय की तरह मेरे भाइयों ने भी समुद्र पार मेरी रचनाओं की प्रशंसा की। हुआ यूं कि मेरे भाई और सुनीता इंग्लैंड गए हुए थे। उस समय कुछ मराठी प्रेमियों ने मेरे भाई का एक सार्वजनिक साक्षात्कार आयोजित किया था। मराठी साहित्य के अतीत और वर्तमान पर चर्चा करते हुए किसी ने उनसे एक सवाल पूछा! “क्या हाल है भाई, मैंने सुना है कि बाबा कदम के उपन्यास भी मराठी किताबों की बिक्री में आपके उपन्यासों की तरह ही बिक रहे हैं, उनकी किताबें इतनी क्यों बिक रही हैं?”
बिना एक पल भी हिचकिचाए भाई ने कहा, "बाबा को कम मत समझो। एक दिन मराठी साहित्य के आलोचकों को बाबा कदम की अपार लोकप्रियता का रहस्य जानना ही पड़ेगा।"

जब यह घटना घटी तब मैं वहां मौजूद नहीं था। लेकिन एक महीने बाद, जब मेरा बेटा डॉ. उमेश इंग्लैंड गया, तो साक्षात्कार में मौजूद उसके एक मित्र ने अपने बेटे को इस घटना के बारे में बताया। जब वह इंग्लैंड से लौटा, तो उसने मुझे बताया कि उसके भाइयों ने मेरी कितनी प्रशंसा की थी। मुझे बहुत खुशी हुई।

भाई का स्वास्थ्य धीरे-धीरे बिगड़ता जा रहा था। पार्किंसंस रोग ने गंभीर रूप ले लिया था। घुटनों में गठिया भी हो गया था। फिर भी, भाई की याददाश्त और जीवन के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण में कोई बदलाव नहीं आया था। बाद में, भाई को किसी से ज्यादा मिलने की इजाजत नहीं थी। श्रीकांत मोगे और मधु गनु जैसे कुछ ही लोग आते-जाते रहते थे। जब भी कोल्हापुर से कोई भाई से मिलने जाता, तो हमेशा उनसे पूछता, "बाबा कैसे हैं? माताजी कैसी हैं? उमेश अब क्या कर रहा है?"

अपने जीवन के उत्तरार्ध में हमारे बारे में जानने की उत्सुकता रखने वाले भाई अब हमारे बीच नहीं हैं। उनके दार्शनिक साहित्य को मराठी घरों में आज भी रुचि के साथ पढ़ा जाता रहेगा। एक बार जब भाई फ्रांस में थे, तब उन्हें पता चला कि चार्ली चैपलिन वहाँ के एक प्रसिद्ध होटल में ठहरे हुए हैं। वे होटल की छत पर आकर नीचे जमा हजारों प्रशंसकों को कुछ पल दर्शन देने वाले थे।

भाई भी भीड़ का हिस्सा बन गए। चार्ली चैपलिन की एक बौनी प्रतिमा, गोरे रंग की और सिर पर फेल्ट की टोपी पहने, गैलरी में प्रवेश कर गई। सारी रोशनी उन पर केंद्रित हो गई। प्रशंसकों ने उनका उत्साहवर्धन किया, और भाई के मुख से सहजता से शब्द निकले, "गद्य, तुम मरोगे नहीं!"

आज मुझे अपने भाई के उन्हीं शब्दों को दोहराने का मन कर रहा है, "भाई, भले ही तुम शरीर से हमें छोड़कर चले गए हो, लेकिन तुम्हारी स्मृति मराठी लोगों के दिलों में अमर रहेगी। भाई, तुम भी नहीं मरोगे।"

भाई महाराष्ट्र में सिर्फ एक लेखक के रूप में जाने जाते हैं। उन्होंने समाज सेवा का व्रत भी लिया था। अब तक भाई जरूरतमंद संगठनों को करीब एक करोड़ रुपये दान कर चुके हैं। उन्होंने गांवों के स्कूलों को हजारों रुपये दिए हैं। उन्होंने विट्या के साहित्यिक संगठन मुक्तांगन को एक लाख रुपये दान किए थे।

संगीत, रंगमंच, फिल्म और वाक्पटुता के मामले में कोई भी उनके बराबर नहीं हो पाया है।

मैंने एक बार अपनी बहन से कहा, "तुम इतना बड़ा 'दान' कैसे करती हो?"
फिर उसने कहा, "मैंने लोगों द्वारा दिए गए पैसे लौटा दिए हैं। मैंने उस पैसे से ऐसा क्या खास किया है?"
उन्होंने अपनी आजीविका के लिए नाममात्र की राशि रखी। साहित्य से, भाइयों ने "वर्यावरची वरत", "बतात्यानी चाल", "आसा मे आश्यम" जैसे कार्यक्रमों से लाखों रुपये कमाए। लेकिन उन्होंने वह सारी रकम पी. एल. देशपांडे ट्रस्ट को दे दी।
ऐसा व्यक्ति न तो पहले कभी अस्तित्व में आया है और न ही भविष्य में आने की कोई संभावना है। सचमुच, भाई, आप अमर हो गए हैं।

***** **समाप्त** *****

sjeet